अभिज्ञान शकुन्तला नाटक

प्रतिबिंब भाषा

जिसमें

शकुन्तला का पुरुवंशीराजा दुष्यन्त से गान्धर्वविवाह
और दुर्वासाऋषिके दिये शापवश वियोग दुःख
तथा पुनः संयोग सुख व चक्रवर्ती पुत्रकी
प्राप्ति सुन्दररीतिसे वर्णित है—

जिसको

श्रीकवि कालिदासकृत संस्कृत से-पटियाला राजधानी नारनौल समीपवर्ती निवाजपुरनिवासी श्रीरामप्रसादात्मज लक्ष्मीनारायणने "भार्गव वंशावतंस मुन्शी प्रयागनारायणजी के" महद्व्यय से अतीवसुन्दर प्रतिबिंब भाषामें [illegible]

पहलीबार

लखनऊ

मुन्शीनवलकिशोर (सी,आई,ई,) के छापेखानेमें छपी सन् १९०२ ई०

इस मतबेमें जितने प्रकार के नाटक छपे हैं उन में से कुछ नीचे लिखेजाते हैं ॥

हनुमन्नाटक, क़ीमत ।)

श्रीरामानन्द चतुरदास कृत—श्रीरामचन्द्रका चरित्र जन्म से लेकर गद्दी पर्य्यन्त अनेक प्रकारके छन्दों में वर्णित है ॥

रामाभिषेकनाटक, क़ीमत =)

श्रीरामगोपाल विद्यान्तद्वारा अनुवादित—जिसमें रामचन्द्रजी के अभिषेककी तैयारी और ढिंढोरा अभिषेकका पीटाजाना परन्तु कैकेयी के वरदान से राम लक्ष्मण जानकीजी का वनगमन और दशरथ के प्राणत्याग पर्यन्त की कथा नाटक रीति से वर्णित है ॥

भ्रमजालकनाटक, क़ीमत =)॥

मुंशीरत्नचन्द्रकृत जिसमें शेक्सपियरकी कोमोड़ी आफएरर्स का आशय है ॥

नागानन्दनाटक, क़ीमत −)॥

जिसका उल्था लालासीतारामजी ने संस्कृत से देशभाषा में वर्ण प्रतिवर्ण कियाहै नाटक करनेवाले लोगों को बड़ाही आनन्ददेनेवाला है ॥

पंचतंत्र, क़ीमत)॥

इसका उल्था लाला सीतारामजी ने संस्कृतसे भाषा में नाटकके तौर पर किया है ॥

अनुक्रमणिका ॥

"सूचना"

शीघ्रताकरो।

प्रियमित्रों को यह निस्सन्देह विदित होगा कि कवि कालिदास ग्रथित ग्रन्थों में उच्चारण से गम्भीरता और मधुरता के साथ उपमामें क्या आह्लाद होता है अब इस के अलावा यह और भी है कि उक्तकवि के सर्वग्रन्थों में सरस्वती झलकती है। इस नाटक में तो देवी मग्न होकर नृत्यही करनेलगी। अहा मित्रो! यह रसों में अपूर्वरस अवश्य चखनाचाहिये क्योंकि 'कालिदास कवितानवं-वयःममभवन्तुजन्मजन्मनि' प्रशंसा नहीं करने यहतो देखनेही से प्रशंसनीय होगा। और यह भी कि "काव्येषुनाटकाःश्रेष्ठा नाटकेषुशकुन्तला" तिसपरभी भाषा में अति उत्तम उल्था हुआ है कि आइना सा दिखाया है। अलम्बहुना—

निवाजपूरस्थः।

कश्चिल्लक्ष्मीनारायण शर्मा।

(लखनऊ)

श्रीगणेशायनमः

अभिज्ञानशाकुन्तलं नाटकं

सप्रतिबिम्बम् ॥

आनन्दं विदधातु पद्मवसतिः शम्भुः शिवं यच्छतु श्रीनाथः श्रियमातनोतु तनुतां सीतापतिर्वाञ्छितम् ॥ इत्थं संप्रति सर्वदेवनिचयः पांत्वद्य सर्वेग्रहा लक्ष्मी दत्तकृतौ सदा शुभपदं नाट्येऽस्तु नःकौतुकी ॥ १ ॥

लक्ष्मीनारायणेनाथन्वाजपूरनिवासिना ॥ नाटक स्यन्नृभाषेयंप्रतिबिम्बेनभण्यते ॥ २ ॥

हेलातरङ्गिणीनाम क्रियतेमानुषीगिरा ॥ हेलातर ङ्गिणीगङ्गा तनुतां शं मुदा सदा ॥ ३ ॥

श्रीगणेशायनमः

अभिज्ञानशकुन्तला नाटक

प्रतिबिम्ब सहित ॥

इस शकुंतला नाटक में संस्कृत, तथा प्राकृतभाषा, व श्लोक, बहुत से छंदों में गर्भित हैं। सो ही उक्तजनने सुगमता से संस्कृत की भाषा और प्राकृतकी भी स्वदेशीय मध्यदेश की भाषा विभूषितकी है। तथा श्लोकों का प्रतिबिम्ब भाषा अर्थात् (फोटोग्राफ्) तसवीर किया है सोही पहिले मंगलाचरणपूर्वक (नांदी) जो कि नाटक के आदि में आशिषहै सो कहते हैं—

भवच्छुभेच्छुर्लक्ष्मीनारायणशर्मा
निवाजपुरस्थः

मूलम्

यासृष्टिःस्रष्टुराद्या वहति विधिहुतं या हविर्याचहोत्री
येद्वेकालंविधत्तः श्रुतिविषयगुणायास्थिताव्याप्यविश्व
म्॥ यामाहुःसर्वबीजप्रकृतिरितियया प्राणिनःप्राणवन्तः
प्रत्यक्षाभिःप्रपन्नस्तनुभिरवतुवस्ताभिरष्टाभिरीशः ॥१॥

या तनुःस्रष्टुर्ब्रह्मणः आद्या सृष्टिः जलमित्यर्थः। 'अ
पएवससर्जादौ तासुवीर्यमवासृजत्' इतिस्मरणात्। या
चविधिर्विधानंश्रुतिस्मृत्युक्तं तेनहुतंदत्तं हविर्हविनीय
द्रव्यजातम् वहत्यादत्ते। वह्निरित्यर्थः। वहतिनाधाराधे
यसम्बन्धेनादानंलक्ष्यते। फलपर्यंतताप्रापणं व्यज्यते ।
अविधिहुतंभस्मीभवति । अतएवविधिहुतमित्युक्तिःया
च होत्री यजमानरूपा। जुहोतीति होत्रीतीन्द्रादीनामपि
तर्पकत्वादतिशयोव्यज्यते। अतएवनात्मादिपदप्रयोगः।
येचद्वेकालंरात्रिंदिवरूपंविधत्तःकुरुतः। याचश्रुतिः श्रव
णेन्द्रियंतस्यविषयोगोचरोगुणःशब्दाख्यो यस्याःसा ।
विश्वंजगद्व्याप्यस्थितातेनाकाशः यांचसर्वेषांबीजानां
प्रकृतिर्योनिरित्याहुः। अनेन पृथिवी । ययाच प्राणिनः
प्राणवन्तः इत्यत्रप्राणिनोजन्मिन इति। 'प्राणीतुचेतनो
जन्मी,इत्यमरः। एतेनवायुः । ताभिःप्रत्यक्षाभिरष्टाभि
स्तनुभिर्मूर्तिभिःप्रपन्नोयुक्तः ईशोवोऽवतु इत्याशीः ॥ १ ॥

(अग्रे द्वितीयोऽर्थः)

टीका

कर्ता की सृष्टि पैल्ही विधिहुत हवि जो लेइले वोहहोत्री।
वे, दो कालंवर्तांवें श्रुतिविषय गुणा जो टिकी व्याप्य विश्वा॥
जावोलैं सर्वबीज प्रकृतितु जिससे प्राणि ये प्राणवाले। तुमको
वोईश आठौं तनुमें अवहि रक्षै सुविख्यातहैगा॥ १॥

जो शरीर सृष्टिकर्ता ब्रह्माकी पहिली सृष्टि। जल अर्थात् 'पानीही रच पहिले वो तिस में वीर्य रचाथा,। इस स्मरण से। जोये विधिविधान श्रुतिस्मृति से उक्त उससे हुत हवन किया हवनीय हवन करने योग्य जो द्रव्य वह ले। अग्नि अर्थात्। वहति इस से आधार आधेय से लेना दिखताहै। फलपर्यंत तक प्राप्त होना स्फुट होता है। विना विधि हवन किया भस्म होता है। इसी से विधिहुतकहा। जो होत्री यजमानरूप हवनकरै सो होत्री। इससे इन्द्रादिकों का भी तर्पणकरना अतिशय प्राप्त होता है। इसीसे आत्मादिप्रयोग नहीं दिया। जो दो रात्रि दिवसका रूप करती है। जो श्रुति श्रवणेन्द्रिय उसका विषय गोचर गुण शब्दनाम जिसका जगत् को व्याप्तहोके स्थित। इसवास्ते आकाश। जिसको सर्व बीजों की प्रकृति कहते हैं। इससे पृथिवी जिससे प्राणी जीवधारी जीववाले हैं। इस से वायुहुआ उन प्रत्यक्ष आठ शरीरों से अर्थात् मूर्तियों से प्रपन्न युक्त ईश (वः) तुमको (अवतु) रक्षाकरै॥ यह आशीर्वाद हुआ॥ १॥

(इस श्लोकका एक अर्थ तो यह हुआ और दूसराअर्थ लिखतेहैं)

मूलम्

अथ प्रभुर्दुष्यंतःवःअवतु रक्षतु इति। ताभिःशरीरित्वात्पञ्चमहाभूतरूपाभिर्यज्ञकरणाद्धोतृरूपाभिल्लोंकपालांशत्वात् विशिष्टतेजस्वित्वात् राज्ञश्चन्द्रसूर्यरूपाभिरष्टाभिस्तनुभिःप्रपन्नः। तथाचभृगुः—'अग्निवायुयमार्काणामिन्द्रस्यवरुणस्यच। चंद्रवित्तेशयोश्चैवमात्रानिर्हृत्यशास्वतीः। यस्मादेषांसुरेन्द्राणांमात्राभिर्निर्मितोनृपः। तस्मादभिभवत्येषसर्वभूतानितेजसा,॥ इति अथ या सृष्टिःस्रष्टुराद्येत्यनेनशकुन्तलासूचिता। एतावत्कालपर्यंतंसृष्टेरजातत्वादाद्यत्वम्। याविधिनासुरतविधिना हुतंनिषिक्तंहवीरेतो वहतीतितस्याःगर्भः। होत्रीत्यनेन कण्वः। येद्वेइत्यनेनानसूयाप्रियंवदेसख्यौकालं। शापांतसमयंविधत्तःबोधयतः—पातिव्रत्यादिभिर्गुणै र्विश्वंव्याप्यश्रुत्यावार्तयाविषयेदेशेगुणैस्त्रिभिः शार्ङ्गरवशारद्वतगौतमीभिरयतएतादृशीस्थिता। [श्रुतिविषयगुणाइत्येकंपदम्] एतेनसगर्भायास्तस्या दुष्यंतद्वारदेशगमनम्। सर्वेषां बींजमूलभूतश्चक्रवर्तित्वाद्भरतः। तस्यप्रकृतिरुत्पत्तिरितिभरतोत्पत्तिः। ययाप्राणिनःप्राणवंतइत्यनेनभरतशकुंतलयासहस्वपुरागमनम्। अष्टाभिःप्रत्यक्षाभिः प्रकृत्यादिभिः प्रपन्नःईशःवःअवतु॥ १॥

इतिद्वितीयोऽर्थःसमाप्तः॥

टीका

अब प्रभु दुष्यंत तुम्हारी रक्षाकरैं। तिन देहियां से बहुवचन महाभूत पंचरूप होने से यज्ञकरणसे होतृरूपसे लोकपालाश से विशिष्टतेज से चंद्र सूर्यरूप से आठतनु से प्रपन्न युक्त । भृगु ने कहा है। अग्नि वायु यम सूर्य इन्द्र वरुण चंद्र और कुबेर इनके अंश होने से देवताओं के तेजको प्राप्तहुआ इसीसे सब प्राणियों को स्वतेज से तिरस्कार करता है॥ यह राजा अब जो सृष्टिकर्ताकी पहिली है इससे शकुंतला सूचितकी क्योंकि इतने कालतक इस सृष्टिके न होने से पहिली कही । जो विधिसे भोग विलासादि से हुत निषिक्त की गई सींचीगई । हवी जो रेत वीर्य तिस को धारणकरै सो तिसका गर्भ। होत्री इसकरके कण्व लिया। जो दो इससे अनसूया प्रियंवदा सखी दोनोंकाल शापके अंतको (विधत्तः)बोध कराती थी। पतिव्रताआदि गुणों से संसारको व्याप के स्थित श्रुति वार्ता से देश में गुण नाम तीनकरके शार्ङ्गरव शारद्वत गौतमी इनसे ले जायीजाय ऐसी स्थित। [श्रुतिविषयगुणा] एकपद है इससे गर्भसहित तिस शकुंतला को राजा दुष्यंत के द्वार जाना सूचित किया सबका बीजमूलभूत चक्रवर्तित्व होने से भरत। तिसकी प्रकृति उत्पत्ति भरतकी उत्पत्ति। जिस से प्राणी प्राणवाले हैं भरत शकुंतला के साथ स्वपुर में आगमन सूचित किया इसीतरह वह दुष्यंत आठ तनुसे रक्षाकरै॥ १ ॥

यह आशीर्वादपूर्वक मंगलाचरण कहा।

मूलम्

(नांद्यन्ते)

सूत्रधारः–(नेपथ्याभिमुखमवलोक्य) आर्ये! यदि नेपथ्यविधानमवसितम्, इतस्तावदागम्यताम्।

नटी–(प्रविश्य) आर्यपुत्रइयमस्मि ।

सूत्रधारः–आर्येअभिरूपभूयिष्ठापरिषदियम्। अद्यखलु कालिदासग्रथितवस्तुनाभिज्ञानशाकुंतलनामधेयेन नवेन नाटकेनोपस्थातव्यमस्माभिः। तत्प्रतिपात्रमाधीयतांयत्नः ।

नटी–सुविहितप्रयोगतयार्यस्यनकिमपिपरिहास्यते ।

सूत्रधारः–आर्येकथयामितेभूतार्थं । आपरितोषाद्विदुषां न साधुमन्येप्रयोगविज्ञानम् ॥ बलवदपिशिक्षितानामात्मन्यप्रत्ययंचेतः ॥ २ ॥

नटी–एव,मेतत् । अनंतरकरणीयमार्यआज्ञापयतु ।

सूत्रधारः–किमन्यदस्याःपरिषदःश्रुतिप्रसादनतः । तदिममेव तावदचिरप्रवृत्तमुपभोगक्षमं ग्रीष्मसमयमधिकृत्यगीयताम्। संप्रतिहि ।

सुभगसलिलावगाहाः पाटलसंसर्गसुरभिवनवाताः।
प्रच्छायसुलभनिद्रादिवसाःपरिणामरमणीयाः ॥ ३ ॥

नटी–तथा। (इति गायति।)

ईषदीषच्चुम्बितानिभ्रमरैः सुकुमारकेशरशिखानि ।
अवतंसयन्तिदयमानाःप्रमदाःशिरीषकुसुमानि ॥ ४ ॥

टीका
(नांदीकरते हैं)

सूत्रधार-(नेपथ्यकीतरफदेखकर) आर्ये ! यदिनेपथ्य की सराजाम तय्यार है तो इधर आओ ।

नटी-(जाके) आर्यपुत्र ! ए हूं मैं ।

सूत्रधार-आर्ये ! कुछ तमाशा देखनेको चाहती है सभा । आजसो कालिदास की बनाई अभिज्ञान शाकुंतल नामधेय नये नाटकसे उपस्थान करना उचित है हमको तिसका प्रतिपात्र बनाओ यत्नसे-

नटी-भले तमाशे करने से आर्य को कोई नहीं हंसैगा ।

सूत्रधार-आर्ये ! कहताहूं तेरे मतलब को । जबतक खुशहों विद्वानहीं तमाशा भला तभीतक वो । बहुतै पढ़नेसे भी नाविश्वासंआत्म में चित् का ॥ २ ॥

नटी-ठीक है । इसके अगाड़ी आर्य ! कार्य करनेलायक बतावैं ।

सूत्रधार-क्या और इस सभाके श्रवणकी प्रसन्नता से । सो ये अभी आनेवाली गर्मी समयको अधिकार करके भोगने लायक गानगावो । इसवखत ।

सुभगजल चालंते हैं पाटल फूलोंकि सुगंधि लगि हवा है ।
छायामहिरी नींद दिनहैं परिणाम रमणीये ॥ ३ ॥

नटी-ठीक है । (यह गाती है ।)

थोड़े थोड़े चुंबिते हैं भ्रमरो कुमलाहँकेशर शिखाहि ।
छुवती दयासुं प्रमदासी रसके जु फूल पहिरेहिं ॥ ४ ॥

मूलम्

सूत्रधारः—आर्येसाधुगीतम् । अहोरागबद्धचित्तवृत्तिरा लिखित इवसर्वतोरंगः ।

तदिदानीं कतमत्प्रकरणमाश्रित्यैनमाराधयामः ।

नटी—नन्वार्यमिश्रैः प्रथममेवाज्ञप्तमभिज्ञानशाकुंतलंना मापूर्वं नाटकंप्रयोगेऽधिक्रियतामिति ।

सूत्रधारः—आर्ये!सम्यगनुबोधितोस्मि । अस्मिन्क्षणेवि स्मृतंखलुमयाकुतः ।

तवास्मिगीतरागेणहारिणाप्रसभंहृतः । एषराजेवदु ष्यंतःसारंगेणातिरंहसा ॥ ५ ॥ ० । ० (इति निष्क्रांतौ)

इतिप्रस्तावना ॥

(ततःप्रविशति मृगानुसारी सशरचापहस्तो राजा रथेनसूतश्च ।)

सूतः—(राजानंमृगंचावलोक्य) आयुष्मान् । कृष्ण सारेददच्चक्षुस्त्वयिचाधिज्यकार्मुके । मृगानुसारिणं साक्षात् पश्यामीवपिनाकिनम् ॥ ६ ॥

राजा—सूतदूरममुनासारङ्गेणवयमाकृष्टाः । अयंपुन रिदानीमपि—

ग्रीवाभङ्गाभिरामं मुहुरनुपतति स्यंदने बद्धदृष्टिः प श्चार्धेनप्रविष्टः शरपतनभयाद्भूयसापूर्वकायम् । दर्भैर र्धावलीढैः श्रमविवृतमुखभ्रंशिभिःकीर्णवर्त्मा पश्योदग्र प्लुतत्वाद्वियतिबहुतरंस्तोकमुर्व्यांप्रयाति ॥ ७ ॥

टीका

सूत्रधार–आर्ये ! भलागाया । अहो रागसे बँधी चित्तवृत्तिसी रंगभूमि तसवीरसी है । सो इससमय किसप्रकरण आश्रित होकर इसकी आराधना करैं ।

नटी–अजी, आर्यमिश्रों ने पहिलेही आज्ञा करदी थी कि अभिज्ञान शाकुंतलनाटक तमाशे में अधिकार करो यह ।

सूत्रधार–आर्ये ! अच्छा बताया । इससमय मैं भूलही गयाथा । काहे से मनोहरगीत तेरे से जबर्दस्ती में हारगया । राजा दुष्यंत की नाईं हिरण के अतिवेग से ॥ ५ ॥

(दोनोंगये)

प्रस्तावना समाप्त हुई ॥

(करते हैं प्रवेश फिर मृगके पीछे दौड़ते राजा रथसहितसूत और)

सूत–(राजाको और मृगको देखके) महाराज मृगमें दी दृष्टि तुम्मे भी बानतानतकोजुमैं । मृग पीछे भागते को शिव साक्षात मं देखता ॥ ६ ॥

राजा–सूत, दूर इस मृग ने हम खैंचे । अबभी यह फिर ।

शिरको नीचे झुकाये फिर गिरतजु रथमें लगाई ह दृष्टी पीछे आधाघुसेहै शरगिरन कि डरसे घुसा पिछ्लितनमें । आधीखा घास को ये थकित मुख खुलेसे बिछाई ह मार्गे देखो फुदकी लगावे धरणिपर गिरे है कुछी ये उड़ाहे ॥ ७ ॥

मूलम्

तदेषकथमनुपतत एवमेप्रयत्नप्रेक्षणीयः संवृत्तः।
सूतः—आयुष्मन् उद्घातिनीभूमिरितिमया रश्मिसंयम नाद्रथस्यमंदीकृतोवेगः। तेनमृगएषविप्रकृष्टांतरः। संप्रतिसमदेशवर्तिनस्तेनदुरासदोभविष्यति ।
राजा—तेनहि मुच्यन्तामभीषवः।
सूतः—यदाज्ञापयत्यायुष्मान् (रथवेगंनिरूप्य) आयुष्मन्पश्यपश्य ।

मुक्तेषुरश्मिषु निरायतपूर्वकाया निष्कंपचामरशिखा निभृतोर्ध्वकर्णाः । आत्मोद्धतैरपि रजोभिरलंघनीया धावन्त्यमीमृगजवाक्षमयेवरथ्याः ॥ ८ ॥

राजा—सत्यं । अतीत्यहरितोहरींश्चवर्ततेवाजिनः तथाहि ॥ यदालोकेसूक्ष्मं व्रजतिसहसातद्विपुलतां यदर्धेविच्छिन्नं भवतिकृतसन्धानमिवतत् । प्रकृत्यायद्वक्रंभवतिकृतसन्धानमिवतत् नमेदूरेकिंचित्क्षणमपिनपार्श्वे रथजवात् ॥ ९ ॥ सूतपश्यैनंव्यापाद्यमानम्

(इति शरसंधानंनाटयति)

(नेपथ्ये)

भो भो राजन्! आश्रममृगोऽयंनहंतव्यो न हंतव्यः।
सूतः—(आकर्ण्यावलोक्यच) आयुष्मन्! अस्यखलुते बाणपातवर्तिनःकृष्णसारस्यांतरेतपस्विनउपस्थिताः ।
राजा—(ससंभ्रमम्) तेनहिप्रगृह्यन्तां वाजिनः।
सूतः- तथा (इतिरथंस्थापयति)

(ततःप्रविशत्यात्मना तृतीयोवैखानसः)

टीका

सो ये कैसे पीछे भागते को अच्छीतरह देख नहीं पड़ता।

सूत–महाराज, अबतक ऊँची नीची भूमिथी जिससे मैंने घोड़ोंको रोक रोककर चलायेथे। इसीसे ये हिरण दूरनिकलगया। अब आपको बराबर भूमिहोने से वह मिलना कुछ मुशकिल न होगा॥

राजा–तो छोड़ो रास।

सूत–जो आज्ञाकरैं। (रथ दौड़ाके) महाराज देखो देखो।

छूटतेहि रास पहिली तनु जो बढ़ी है नाकंपते उठगये सब केशकर्णा °। भगनेसुंमिट्टिभिलगी न उलाँकती है भगतेहं नासहत वेग मृगाक घोड़े॥ ८॥

राजा–सत्यहै। सूर्यके घोड़ों को मात करते हैं रथके घोड़े वैसेही।

जु देखीथी पतली चजति वह मोटीभट अबे कटी आधी जो थी वह भी अब साबुत वनगई स्वभावीसे बांकी वह भी अबसीधी नयन को नहीं पास दूर ना कुछ क्षणभर में भागे रथ कुच्हां॥ ९॥

सूत, अब इसे मरा देख। (शरचढ़ाया)

(नेपथ्येमें)

हे राजन्! यह आश्रम का मृगहै इसे मतमारो इसे मतमारो।

सूत–(सुनके और देखके) महाराज अब यह आपकेबाणके अगाड़ी तो आया परन्तु ये दो तपस्वी मना करते हैं।

राजा–(घबराकर) तो घोड़े रोको।

सूत–अच्छा (रथ को रोका)

(फिर तपस्वीसहित दोचेले आये)

मूलम्

वैखानसः। (हस्तमुद्यम्य) राजन् आश्रमम्टगोयंन हंतव्योनहंतव्यः।

तत्साधुकृतसंधानं प्रतिसंहरशायकम्। आर्तत्राणा यवः शस्त्रंनप्रहर्तुमनागसि ॥ १० ॥

राजा—एषः प्रतिसंहृतः (इतियथोक्तंकरोति)

वैखानसः—सदृशमेतत्पुरुवंशप्रदीपस्यभवतः।

जन्मयस्यपुरोर्वंशे युक्तरूपमिदंतव। पुत्रमेवंगुणोपेतं चक्रवर्तिनमाप्नुहि ॥ ११ ॥

इतरौ—(बाहूउद्यम्य) सर्वथाचक्रवर्तिनंपुत्रमाप्नुहि।

राजा—(सप्रणामम्) प्रतिगृहीतम्।

वैखानसः। राजन् समिदाहरणाय प्रस्थिता वयम्। एषखलु कण्वस्यकुलपतेरनुमालिनीतीरमाश्रमो दृश्यते। नचेदन्यकार्यातिपातः, प्रविश्य प्रतिगृह्यतामातिथेयसत्कारः। अपिच।

रम्यास्तपोधनानां प्रतिहतविघ्नाः क्रियाः समवलोक्य। ज्ञास्यसिकियद्भुजोमेरक्षतिमौर्वीकिणाङ्कइति १२

राजा—अपिसंनिहितोऽत्रकुलपतिः।

वैखानसः—इदानीमेवदुहितरं शकुंतलामतिथिसत्काराय नियुज्य दैवमस्याः प्रतिकूलं शमयितुं सोमतीर्थंगतः।

राजा—भवतु। तामेवपश्यामिसाखलु विदितभक्तिं नो महर्षेःकथयिष्यति।

टीका

तपस्वी। (हाथ उठाके) हे राजन्! यह आश्रमका मृगहै इसे मत मारो इसे मतमारो।

बानतानाकिया अच्छा बानतारन योग्यहो। बे कुसूर न मारो ते शस्त्र दुःखीकुरक्षणे ॥ ॥ १० ॥

राजा-ये उतार लिया (बाणतारा)

तपस्वी-चाहिये ऐसाही पुरुकुलदीपक आपको।

जन्म जिसका पुरुवंशे योगरूप जु एतव । ऐसा पुत्र गुणों वाला चक्रवर्तिकु प्राप्तहो ॥ ११ ॥

दोनोंचेले-(हाथों को उठाकर) सर्वथा चक्रवर्त्ती पुत्रको प्राप्त होवो

राजा-(प्रणामसमेत) ब्राह्मण के वचन शिरमाथे।

तपस्वी-राजा हम यज्ञके लिये समिध लेनेजाते हैं। यह आगे मालिनीके तीरपै कुलपतिकण्वका आश्रम दिखलाई देताहै। आपको कार्य में हर्जा न हो तो चलकर अतिथि सत्कार लीजिये। और भी।

अच्छी तपोधनों की नहिं कहिं विघ्नाक्रिया। जगह देख जानहुँ भुजाकी मेरीरक्षै मौर्वी किणांकयह ॥ १२ ॥

राजा-हैं यहां तुम्हारे गुरू।

तपस्वी-अपनी पुत्री शकुन्तलाको अतिथि संत्कार देके उसीकी ग्रहदशा निवारने को सोम तीर्थ पै गये हैं।

राजा-होसोहो। उसीको देखूंगा वो मेरीभक्तिको जानमहर्षिसेकहेगी।

मूलम्

वैखानसः—साधयामस्तावत् ।

(इतिसशिष्योनिष्क्रांतः)

राजा—सूत । चोदयाश्वान् । पुण्याश्रमदर्शनेन तावदात्मानंपुनीमहे ।

सूतः—यदा ज्ञापयति आयुष्मान् ।

(इति भूयोरथवेगंनिरूपयति)

राजा—(समंतादवलोक्य) सूत अकथितोऽपिज्ञायतएव यथायमाश्रमाभोगस्तपोवनस्येति ।

सूतः ।—कथमिव ।

राजा—किंनपश्यतिभवान् । इहहि ।

नीवाराःशुकगर्भकोटरमुखभ्रष्टास्तरूणामधः प्रस्निग्धाःक्वचिदिंगुदीफलभिदः सूच्यंतएवोपलाः ॥ विश्वासोपगमादभिन्नगतयः शब्दंसहंतेमृगास्तोयाधारपथाश्चवल्कलशिखानिष्यंदरेखांकिताः ॥ १३ ॥

सूतः—सर्वमुपपन्नम् ।

राजा—(स्तोकमंतरंगत्वा) तपोवननिवासिनामुपरोधोमाभूत् । एतावत्येवरथंस्थापय यावदवतरामि ।

सूतः—धृताः प्रग्रहाः । अवतरत्वायुष्मान् ।

राजा—(अवतीर्य) सूतविनीतवेषेणप्रवेष्टव्यानि तपोवनानि नाम । इदंतावद् गृह्यताम् । (इतिसूतस्याभरणानिधनुश्चोपनीयार्पयति) सूतयावदाश्रमवासिनः प्रत्यवेक्ष्याहमुपावर्तेतावदार्द्रपृष्ठाः क्रियंतां वाजिनः ।

टीका

तपस्वी–हम काम सिद्ध करें।

(चेलोंसहित गया)

राजा–सूत घोड़ेहांक पुण्य आश्रम के दर्शनसे पवित्र होवें।

सूत–जो महाराज आज्ञा करें।

(फिर रथ जोर से चलाता है)

राजा–(चारोंतरफदेखके) सूत विनाकहे भी मालूम होजाता कि यह तपोवन की भूमि है।

सूत–येकैसें।

राजा–क्या तुम नहीं देखते हो। इहां तोतों के मुखते गिराहमुनि अन्खोहलसुंवृक्षों तले चिकनी शिलजुवनीहिंगोट कुटने, को ये धरीदीखती। ना भागैं हैं मृगाजु शब्द सुनिके विश्वास सेही जु ह्यांजल लेने कुहिं मार्ग, वकल शिखासे निकृत्ति से चिह्निता ॥ १२ ॥

सूत–अब सबजाना।

राजा–(कुछ अगाड़ी बढ़के) इन तपोवनवासियों का कुछ हर्जा न हो इस वास्ते यहांही रथ रोको जबतक मैं उतरलूं ॥

सूत–रास पकड़रक्खी है। उतरें महाराज।

राजा–(उतरके) सूत तपोवन में सादे वेषसे जाना चाहिये सो, यह अब लो।

(सूत को वस्त्र उतार दिये और धनुप भी दिया)

सूत–जबतक तपोवनवासियों को मैं देखकर आऊं तबतक तुम घोड़ों को सस्ताय लो।

मूलम्

सूतः—तथा (इतिनिष्क्रांतः)

राजा—(परिक्रम्यावलोक्यच) इदमाश्रमद्वारम् । याव
तूप्रविशामि (प्रविश्य । निमित्तंसूचयन् ।)

शांतमिदमाश्रमपदंस्फुरति च मे बाहुः कुतःफलमि
हास्य । अथवाभवितव्यानां द्वाराणिभवन्तिसर्वत्र॥ १४॥

(नेपथ्ये)

इतः इतो सख्यौ

राजा—(कर्णंदत्त्वा) अयेदक्षिणेनवृक्षवाटिकामाला
प इवश्रूयते । यावदत्रगच्छामि (परिक्रम्यावलोक्यच)
अये एतास्तपस्विकन्यकाः स्वप्रमाणानुरूपैः सेचनघटै
र्बालपादपेभ्यः पयोदातुमितएवाभिवर्तंते । (निपुणं
निरूप्य ।) अहोमधुरमासांदर्शनं ।

शुद्धांतदुर्लभमिदंवपुराश्रमवासिनोजनस्य । दूरीकृ
ताःखलुगुणैरुद्यानलनावनलताभिः ॥ १५ ॥

यावदिमांछायामाश्रित्यप्रतिपालयामि । (इतिविलोक
यन्स्थितः ।)

(ततः प्रविशति यथोक्तव्यापारा सहसखीभ्या शकुं
तला ।)

शकुंतला—इत इतः सख्यौ ।

अनसूया—हला, शकुंतलेत्वत्तोपि तातकाश्यपस्याश्र
मवृक्षकाःप्रियतरा इतितर्कयामि । येननवमालिका
कुसुमपेलवात्वमप्येतेषामालिवालपूरणेनियुक्ता ।

टीका

सूत–अच्छा । (राजागया)
राजा– (फिरके और देखके) यह तपोवन का दरवाजा है जब-
तक भीतर जाऊं ।
(भीतर जाके) निमित्त जनाता हुआ ।
शान्त यह आश्रमपदा फुरतरु बाहू कहां फल यहां स्क । अ-
थवा भवितव्यों का द्वाराहिं हुँहोंत सर्व्वत्र ॥ १४ ॥

(नेपथ्य में)

इधर इधर सखियो ।
राजा–(कान देके) इस फुलवारी के दक्षिण ओर क्या कुछस्त्रियों
कासा बोल सुनाई देता है जबतक मैं जाऊं ।
(चारोंतरफ फिरकर और देखकर) अहो ! ये तो तपस्वियोंकीं
कन्या अपने वित्तके अनुसार कोई छोटी कोई बड़ी गगरी वृक्षोंको
सींचने केलिये जाती हैं धन्य हैं कैसी मनोहर इनकी चितवनहै ।
रनवासकी स्त्रियन में यह आश्रमवासिनी ह दुर्लभ ॥
कर्त्तीहमात् वनलता बागीचिक्कि, जु वेलको गुणोंमे ॥ १५ ॥
इस छाया में ठहरकर सुनूं देखूं ।

(खड़ाहोकर देखने लगा ।)

(शकुन्तला अनसूया और प्रियंवदा ऊपर कहेवेषसे आईं)
शकुन्तला–सखियो इधर आओ ।
अनसूया–हे सखी ! शकुन्तला के पिता कण्व को ये बिरुले तुम्
सेभी अधिक प्यारे होंगे नहीं तो तुम सुकुमारी को इनके
सींचने की आज्ञा न दे जाते तेरे चमेली से अंग पर दया
लाते ॥

मूलम्

शकुंतला–नकेवलं तातनियोगएव। अस्तिमे सोदर
स्नेहएतेषु।

(इति वृक्षसेचनंनिरूपयति।)

राजा–कथमियंसाकण्वदुहिता। असाधुदर्शीखलु तत्र
भवान्काश्यपः। यइमामाश्रमधर्मेनियुङ्क्ते।

इदं किलाऽव्याजमनोहरं वपुस्तपः क्षमंसाधयितुंयइ
च्छति। ध्रुवंसनीलोत्पलपत्रधारया समिल्लतांछेत्तुमृषि
र्व्यवस्यति॥ १६॥

भवतुपादपांतर्हित एवविश्रब्धंतावदेनांपश्यामि।
(इतितथाकरोति।)

शकुंतला–सखि अनसूये! अतिपिनद्धेनवल्कलेन प्रियंव
दा नियन्त्रितास्मि। शिथलयतावदेतत्।

अनसूया–तथा–(इति शिथलयति।)

प्रियंवदा–अत्रपयोधरविस्तारयितृ आत्मनोयौवनमु
पलभस्व।

राजा–काममनुरूपमस्या वयसो वल्कलं नपुनरलंकार
श्रियंनपुष्यतिकुतः।

सरसिजमनुविद्धं शैवलेनापिरम्यं मलिनमपि हि
मांशोर्लक्ष्म लक्ष्मीं तनोति। इयमधिकमनोज्ञावल्क
लेनापितन्वीकिमिवहि मधुराणां मण्डनंनाकृतीनाम् १७

शकुंतला–(अग्रतोऽवलोक्य।) एषवातेरितपल्लवांगु
लीभिस्त्वरयतीवमां केशरवृक्षकः। यावदेनंसंभा
वयामि।

टीका

शकुन्तला–सखी निरी पिताकी आज्ञा नहीं ह[illegible] इन वृक्षों में भाई कासा स्नेह है ॥

(पेड़ को पानी दिया)

राजा–क्या यह ऋषिकरव की पुत्री है । उस ऋषिका हृदय बड़ा कठोर होगा जिसने ऐसी सुकुमारी को ऐसा कठिन काम सौंपा है ॥

शरीर है ये जु स्वभावसे भला करै भि इच्छा तपसाधनेकुं ये ।
जरूर नीले कमला कि पत्तिसे ऋपीतुकाटन्कुचहै समिध्लता १६

हो सो हो वृक्षों में छिपा इसे देखूं (वैसेही करताहुआ)

शकुन्तला–सखि अनसूये ! बहुतजोरसे प्रियंवदाने वक्कलसे बांधी हूँ सो इसको ढीला कर ।

अनसूया–अच्छा । (ढीला किया ।)

प्रियंवदा–यहां स्तनोंके बढ़ानेवाले शरीरके यौवनकी निन्दाकर ।

राजा–ठीक है इसकी अवस्था गैल यह वक्कल क्या शोभा नहीं देताहै, देताही है । काहे से ।

कमल सुभग लागै जो लगाभी सिंवाला मलिनभिविच चन्द्रे वोभि अच्छा हि सोहै । यहभि बहु मनोहर वकला सेभि तन्वी नहिं कुछ गहना है सुन्दरों का सभी है ॥ १७ ॥

शकुन्तला–(आगे देखकर ।) सखियो देखो हवाके झोकों से हिलते केशरवृक्ष के पत्ते ऐसे मालूम देते हैं मानों अंगुली से बुलारहे हैं ॥ चलो वहीं चलैं ॥

मूलम्

(इति परिक्रामति ।)

प्रियंवदा–हलाशकुंतले, अत्रैवतावन्मुहूर्ततिष्ठ यावत्त्व योपगतया लतासनाथइवायं केशरवृक्षकः प्रति भाति।

शकुंतला–अत्रखलुप्रियंवदासित्वं ।

राजा–प्रियमपितथ्यमाह शकुंतला । अस्याः खलु ।

अधरःकिशलयरागः कोमलविटपानुकारिणौ बाहू ।
कुसुममिवलोभनीयं यौवनमंगेषु संनद्धम् ॥ १८ ॥

अनसूया–हला शकुंतले, इयंस्वयंवरवधूः सहकारस्य त्वया कृतनामधेया वनज्योत्स्नेति नवमालिका। एनां विस्मृतवत्यसि ।

शकुंतला–तदात्मानमपि विस्मरिष्यामि । (लतामुपे त्यावलोक्यच ।) हलाखलु रमणीये कालएतस्यल तापादपमिथुनस्य व्यतिकरः संवृत्तः । नवकुसुम यौवना वनज्योत्स्नास्निग्धपल्लवतयोपभोगक्षमः सहकारः । (इतिपश्यंतीतिष्ठति ।)

प्रियंवदा–अनसूये, किंजानासि शकुंतला वनज्योत्स्ना मतिमात्रं पश्यतीति ।

अनसूया–नखलु विभावयामि । कथय ।

प्रियंवदा–यथा वनज्योत्स्नानुरूपेणपादपेनसंगता, अ पिनामैवमहमप्यात्मनोऽनुरूपंवरंलभेयेति ।

शकुंतला–एषनूनंतवात्मगतोमनोरथः । (इतिकलश मावर्जयति ।)

टीका।

(चलीं)

प्रियंवदा—सखी शकुन्तला कुछ यहां ठहर इस लिये कि जबतक तू इस आम के नीचे खड़ी है यह ऐसा शोभायमान होरहा है मानों इसके लता लिपटी है—

शकुन्तला—इसी से तेरा नाम प्रियंवदा है।

दुष्यन्त—प्रियंवदा ने बात प्यारी भी और सत्य भी कही क्योंकि इसके यह।

यह होठ नवहिपत्ते बेल नरमासि है खिलत यह फूलसाहै यौवन ये अंग में लोभै॥ १८॥

अनसूया—सखि शकुन्तला यह आमकी स्वयंवर वधू तुम्हारी नाम निकालीहुई वनज्योत्स्ना इस नामसे नई चमेली। क्या इसको भूल गई।

शकुन्तला—तो मैं आतमाको भी भूल जाऊंगी—(लताके पास जाके देखके) देखो यह माधवीलता यद्यपि इसके फूलने के दिन अभी नहीं आये हैं कैसी जड़से चोटी तक कलियों से लद रही है (दोनों देखतीखड़ीहुई)

प्रियंवदा—अनसूया क्या जानती है तू शकुन्तला वनज्योत्स्नाको बहुत देखती है।

अनसूया—मैं नहीं जानती तू कह।

प्रियंवदा—जैसे वनज्योत्स्ना अपने समान वृक्षको पाई वैसेही तू भी आत्मसदृश वरको प्राप्त होवेगी यह मैं कहे देती हूँ।

शकुन्तला—अवश्य तेरे मनकी बात है।

(घड़ा झुकादिया।)

मूलम्

राजा—अपिनामकुलपतेरियमसवर्णक्षेत्रसंभवास्यात्। अथवा कृतंसंदेहेन।

असंशयंक्षत्रपरिग्रहक्षमा
यदार्य मस्यामभिलाषिमेमनः।
सतांहिसंदेहपदेषुवस्तुषु
प्रमाणमंतः करणप्रवृत्तयः॥ १९॥

तथापितत्त्वतएनामुपलप्स्ये।

शकुंतला—(ससंभ्रमम्।) अम्मोसलिलसेकसंभ्रमोद्गतोनवमालिकामुज्झित्वा वदनंमेमधुकरोभिवर्तते

(इतिभ्रमरबाधांरूपयति।)

राजा—(सस्पृहम्।)

चलापाङ्गांदृष्टिंस्पृशसि बहुशोवेपथुमतीं रहस्याख्यायीवस्वनसिमृदुकर्णांतिकचरः। करौव्याधुन्वंत्याः पिबसिरतिसर्वस्वमधरंवयं तत्वान्वेषान्मधुकरहतास्त्वंखलुकृती॥ २०॥

शकुंतला—न एषदुष्टोविरमति। अन्यतो गमिष्यामि (पदांतरेस्थित्वा-सदृष्टिक्षेपम्।) कथमितोप्यागमिष्यति। हला, परित्रायेथामनेनदुर्विनीतेनदुष्टमधुकरेणपरिभूयमानाम्।

उभे—(सस्मितम्।) के आवांपरित्रातुम्। दुष्यंतमाक्रन्द। राजरक्षितव्यानि तपोवनानि नाम।

टीका

राजा-निश्चय यह ऋषिकी बेटी सजाती स्त्री से नहीं है। अथवा मेरे ही मनमें सन्देह है।

जरूर क्षत्रीकुं बिवाहनेकुये
लगैस्मँ मोरामन श्रेष्ठकाभि जो।
भलोंकु सन्देह कि चीजमें सदा
प्रमाण अन्तःकरणप्रवृत्तिये॥ १६॥

इसका सत्यवृत्तान्त तो अवश्य खोजना चाहिये॥(घबरातीसी)

शकुन्तला-दयी दयी यह ढीठ भौंरा नई चमेली को छोंड़के मेरेव-दनकी ओर आता है॥ (भैंरे की बाधा निरूपण करतीभई)

राजा-(इच्छासहित)

कटाक्षों की दृष्टीलगत घबरातीह भँवरे जु कानोंपे जाके करत भँवरे तू गुपतगूं॥ हटाती हाथों से तदपि तुहि पीवैरति सबै हमी खोजें तत्वापर अब करे मात हमको॥ २०॥

शकुन्तला-यह ढीठ भौंरा नहीं मानता। अब यहांसे अन्त चलूं (दूसरी जगह जाके। कटाक्षपूर्वक।) अरी देखो यहां भी पापीने पीछा न छोड़ा हे सखियो! ऐसे हठीले भौंरेसे बचावो मेरेको।

दोनों-(हँसके) कौन हम रक्षा करनेवाली हैं। राजा दुष्यन्तको पुकार। राजासे रक्षित तपोवन प्रसिद्धहै।

मूलम्

राजा—अवसरोयमात्मानं प्रकाशयितुम्। नभेतव्यंनभे
तव्यम् (इत्यर्धोक्ते। स्वगतम्) राजभावस्त्वभिज्ञा
तोभवेत्। भवतु। एवंतावदभिधास्ये।

शकुन्तला—(पदान्तरेस्थित्वा,सदृष्टिक्षेपम्) कथमितो
मामनुसरति।

राजा—(सत्वरमुपसृत्य।)

कः पौरवे वसुमतीं शासति शासितरिदुर्विनीताम्।
अयमाचरत्यविनयं मुग्धासुतपस्विकन्यासु॥ २०॥

(सर्वाराजानंदृष्ट्वा किंचिदिवसंभ्रान्ताः।)

अनसूया—आर्यनखलुमकिमप्यत्याहितम्।इयंनोप्रियस
खीमधुकरेणाभिभूयमानाकातरीभूता। (इतिशकुंतलां
दर्शयति।)

राजा—(शकुंतलाभिमुखोभूत्वा।) अपितपोवर्धते।

(शकुंतलासाध्वसादवचनातिष्ठति।)

अनसूया—इदानीमतिथिविशेषलाभेन। हला, शकुंतले,
गच्छोटजम्।

फलमिश्रमर्घमुपहर। इदंपादोदकंभविष्यति।

राजा—भवतीनांसूनृतयैव गिराकृतमातिथ्यम्।

प्रियंवदा—तेनह्यस्यांप्रच्छायशीतलायां सप्तपर्णवेदि
कायां मुहूर्तमुपविश्य परिश्रमविनोदं करोत्वार्यः।

राजा—यूयमप्यनेनकर्मणापरिश्रांताः।

अनसूया—हला शकुंतलेउचितंनः पर्युपासनमतिथीना
म्। अत्रोपविशामः। (इतिसर्वेउपविशंति।)

टीका

राजा–यह समय आत्मा को प्रकट करनेका है मत डरो मत डरो। (आधा कहकर मनमें) राजापना तो जानाही जायगा पर यूं कहूँ।

शकुन्तला–(कुछ अगाड़ी बढ़के) (कटाक्षसमेत) कैसे इश्वर भी चला आताहै।

राजा–(आगे झट बढ़के।)

कोपौरवा पृथिवि पालत कुमार्गिगयनकु दण्ड तेही। यह कौन आचरे ढिठाई भोलिन्म तपस्वि कन्यानमें॥ २०॥

(सब राजाको देखके चौंहदागई।)

अनसूया–महाराज, यहां सतानेवाला तो कोई नहीं है पर हमारीसखी एक भौंरे से घिरीथी सो भय खागई है।

(शकुन्तला को दिखाती भई।)

राजा–(शकुन्तला की ओर होके) हे सुन्दरी तेरा तपोव्रत बढ़ै।

अनसूया–इस समय पाहुने के विशेषलाभ से। प्रियसखि शकुन्तले, कुटी में जा।

फल फूल भेंट को लेआ यह जल होगा पैर धोने को।

राजा–तुम्हारे मीठे बोलों सेही कलेजा ठण्ढा होगया।

अनसूया–आओ पाहुने घड़ीक यहां विश्राम लो गहरी छाया के कदली के पत्ते पै बैठके थकेहो

राजा–तुमभी तो थक गई होंगी।

अनसूया–अतिथि का सम्मान करना उचित है आओ यहां बैठें,

(सब बैठ गईं।)

मूलम्

शकुंतला–(आत्मगतम् ।) किंनुखल्विमंप्रेक्ष्यतपोवन विरोधिनोविकारस्य गमनीयास्मिसंवृत्ता ।

राजा–(सर्वा विलोक्य ।) अहो समवयो रूपरमणी यं भवतीनां सौहार्दम् ।

प्रियंवदा–(जनांतिकम् ।) अनुसूये, कोनुखल्वेष च तुरगम्भीराकृतिश्चतुरं प्रियमालपन् प्रभाववान् इवलक्ष्यते ।

अनसूया–सखि, ममाप्यस्तिकौतूहलम् । पृच्छामिता वदेनम् । (प्रकाशम् ।) आर्यस्यमधुरालापजनि तो विस्रंभो मां मंत्रयते कतम आर्येण राजर्षेर्वं शोऽलंक्रियतेकतमोवाविरहपर्युत्सुकजनः कृतोदेशः। किंनिमित्तं वा सुकुमारतरोपि तपोवनगमनपरिश्र मस्यात्मपदमुपनीतः ।

शकुंतला–(आत्मगतम् ।) हृदय मोत्ताम्य । एषात्व या चिन्तितान्यनसूयामंत्रयते ।

राजा–(आत्मगतम् ।) कथमिदानीमात्मानं निवेद यामि कथं वात्मापहारंकरोमि । भवतु । एवंतावदे नांवक्ष्ये । (प्रकाशम् ।) भवति यः पौरवेण राज्ञा धर्माधिकारे नियुक्तः सोऽहमविघ्नक्रियोपलम्भाय धर्मारण्यमिदमायातः ।

टीका

शकुन्तला–(आपही आप ।)

इस पाहुने को देखकर मेरे मनमें ऐसी बात उपजती हैं जो तपोवन के योग्य नहीं–

राजा–(सब को देखके ।) जैसी विधाताने तुमको वेष और निकाई दी है प्रीति भी तुम्हारे आपस में अच्छी रक्खी है ।

प्रियंवदा–(हौले अनसूया से ।) सखी, अनसूया यह नया अतिथि कहांसे आया है जिसके अंग में सुकुमारता के संग गुरुता और बोली में मधुरता के संग गम्भीरता है ये लक्षण तो बड़े प्रतापियों के हैं ॥

अनसूया–सखि मेरेको भी सन्देह है मैं भी चाहती हूँ कि कुछ पूछूं (प्रकट) तुम्हारा मीठा वचन का विश्वास मेरेको कुछ कहाता है कि महाराज से कौनसे राजर्षि का वंश शोभा को प्राप्त होता है कौनसे देशकी प्रजाको विरहमें व्याकुल किया ॥ क्या कारण है जिससे तुमने अपने कोमलगात को इस कठिन तपोवन में पीड़ित किया ।

शकुन्तला–(मनमेंही) अरे मन तू आतुर मतहो धीरज धर तेरे हितकी बात अनसूयाही कर रही है ।

राजा–(आपही आप) अब मैं क्यों कर प्रकटहूँ और कैसे छिपा रहूँ न हो । पर इसे यूं कहूं ।

(प्रकट) हे ऋषिकुमारी मैं पुरुवंशी राजाके नगर में निवास करताहूं और पुरुवंशियों ने मुझे धर्म्म कार्य्य सौंप रक्खे हैं इसलिये आश्रम के दर्शन को आयाहूं ।

मूलम्

अनसूया–सनाथाइदानीं धर्मचारिणः ।

(शकुंतला श्रृंगारलज्जांरूपयति ।)

सख्यौ–(उभयोराकारंविदित्वा । जनांतिकम् ।) हला शकुंतलेयद्यत्राद्य तातः संनिहितोभवेत् ।

शकुंतला–ततःकिंभवेत्

सख्यौ–इमंजीवित सर्वस्वेनाप्यतिथिविशेषं कृतार्थं करिष्यति । *

शकुंतला–युवामपेतम् । किमपिहृदयेकृत्वा मंत्रयेथे । न युवयोर्वचनंश्रोष्यामि ।

राजा–वयमपितावद्भवत्योः सखीगतंपृच्छामः ।

सख्यौ–आर्य अनुग्रह इवेयमभ्यर्थना ।

राजा–भगवान् काश्यपः शाश्वते ब्रह्मणिस्थित इतिप्रकाशः । इयं च वः सखी तदात्मजेतिकथमेतत् ।

अनसूया–शृणोत्वार्यः । अस्ति कोऽपि कौशिक इति गोत्रनामधेयो महाप्रभावो राजर्षिः ।

राजा–अस्ति । श्रूयते ।

अनसूया–तमावयोः प्रियसख्याः प्रभवमवगच्छ । उज्झितायाः शरीरसंवर्धनादिभिस्तातकाश्यपोऽस्याःपिता ।

राजा– उज्झितशब्देन जनितं मे कौतूहलम् । आमूलाच्छ्रोतुमिच्छामि ।

---

* कुर्यादित्यर्थःअत्र “ व्यत्ययश्च ,, इतिसूत्रेणत्यादेशानांव्यत्ययेविध्यर्थेभविष्यत् ,, ।

टीका

अनसूया—महात्मा तुम्हारे पधारने से इस वनके धर्म्मचारी भी सनाथ हुये।

(शकुन्तला कुछ लज्जा शृङ्गारकी करती भई।)

दोनोंसखी—(शकुन्तला और राजाके आकार देखके। हौलेसे) सखि शकुन्तला जो आज यहां पिता कण्व होते।

शकुन्तला—तौ क्या होता।

दोनों—इस पाहुने का जीवसे भी सत्कार करते।

शकुन्तला—चल परे हो। तुम्हारे मनमें कुछ औरही है। कुछ कुछ अपने मनसे बनाती हो।

राजा—हमभी तुम्हारी सखी का वृत्तान्त पूंछते हैं।

दोनों सखी—यह आपका अनुग्रह है।

राजा—कण्वऋषि तो ब्रह्मचारी हैं प्रसिद्ध है। यह वार्त्ता तुम्हारी सखी तिनकी पुत्री कैसे।

अनसूया—सुनों महाराज। कुशिक के वंश में एक बड़ा प्रतापी राजर्षि है।

राजा—हां है। सुनाहै। विश्वामित्र।

अनसूया—तिसी से हमारी सखीकी उत्पत्ति जानों।

तिस छोड़ीभई को शरीरपुष्टि आदि से पिता कण्व इसके पिता हुये।

राजा—छोड़ीभई के कहने से तो मेरेको आश्चर्य्य होता है। पर जड़से इसको कहो मेरी सुननेकी इच्छा है।

मूलम्

अनसूया—शृणोत्वार्यः । गौतमी तीरे पुरा किल तस्य राजर्षेरुग्रे तपसिवर्तमानस्य किमपि जातशंकैर्देवैर्मेनका नामाप्सराःप्रेषिता नियमविघ्नकारिणी ।

राजा—अस्त्येतदन्यसमाधिभीरुत्वं देवानाम् ।

अनसूया—ततो वसंतोदारसमये तस्याउन्मादयितृरूपंप्रेक्ष्य ।

(इत्यर्धोक्तेलज्जयाविरमति ।)

राजा—परस्ताज्ज्ञायत एव । सर्वथाप्सरसः संभवैषा ।

अनसूया— अथकिम् ।

राजा—उपपद्यते ।

मानुषीषु कथंवास्यादस्यरूपस्यसंभवः । नप्रभातरलंज्योतिरुदेतिवसुधातलात् ॥ २१ ॥

(शकुंनलाऽधोमुखीतिष्ठति ।)

राजा—(आत्मगतम् ।)लब्धावकाशोमेमनोरथः । किंतुसख्याः परिहासोदाहृतांवरप्रार्थनांश्रुत्वा धृतद्वैधीभावकातरंमेमनः

प्रियंवदा—(सस्मितंशकुंतलां विलोक्य नायकाभिमुखीभूत्वा ।) पुनरपि वक्तुकामइवार्यः ।

(शकुंतलासखीमंगुल्यातर्जयति ।)

राजा— सम्यगुपलक्षितंभवत्या ।

अस्तिनः सच्चरितश्रवणलोभादन्यदपि प्रष्टव्यम् ।

प्रियंवदा—अलंविचार्य । अनियंत्रणानुयोगस्तपस्विजनो नाम ।

टीका

अनसूया—सुनो महाराज। गौतमी नदी के किनारे पहिले कभी उस राजर्षि के उग्रतप करतेहुये देवताओं के कुछ शङ्का होनेसे मेनका नाम अप्सरा भेजी थी। तपमें विघ्न करनेवाली।

राजा—सत्य है देवता ऐसेही औरोंकी तपस्यासे डरजाते हैं।

अनसूया—वसन्तऋतु में मेनकाकी छवि निरखतेही।

(इतनाकह लज्जित भई।)

राजा—आगे हमने जान लिया कि शकुन्तला अप्सरासे उत्पन्न क्षत्रियकी पुत्री है।

अनसूया—हां

राजा—जाना जाताहै कि।

और नारिनमँ कैसे होइ इसकी रूप समानता। समेरे तेज पृथ्वी से ना उगे है दमकू करै॥ २१॥

(शकुन्तला शिर झुका के लज्जा को प्राप्त होती भई।)

*दुष्यन्त—(आपही आप) मेरी मनोकामना सिद्ध होनेके लक्षण तो दिखाई देते हैं पर द्विविधा यही है कि सखी ने कहीं ब्याहकी बात हँसी से न कही हो।

प्रियंवदा—(हँसकर पहिले शकुन्तलाकी ओर फिर राजाकी ओर देखके।) क्या आपके मनमें कुछ कहनेकी है।

(शकुन्तला अंगुली से वर्जती भई)

राजा—तुमने अच्छा सोचाहै।

हां मेरे मनमें इस अनूठे चरित के सुननेकी अभिलाषा औरहै

प्रियंवदा—महाराज सोच के, क्योंकि तपस्वियों के ऊपर बस नहीं चल सक्ताहै किसी का।

---

* दुष्यन्त नाम जहां पाया जाय वह राजा समझना चाहिये।

मूलम्

राजा–इति सखीं ते ज्ञातुमिच्छामि।

वैखानसंकिमनयाव्रतमाप्रदानाद्व्यापाररोधिमदनस्य निषेवितव्यम् ॥ अत्यन्तमेव मदिरेक्षणवल्लभाभिराहोनिवत्स्यति समं हरिणांगनाभिः ॥ २२ ॥

प्रियंवदा–आर्य, धर्मचरणेपिपरवशोऽयंजनः। गुरोःपुनरस्या अनुरूपवरप्रदाने संकल्पः।

राजा–(आत्मगतम्।) नदुरवापेयंखलुप्रार्थना।

भव हृदय साभिलाषंसंप्रति संदेहनिर्णयोजातः। आशंकसेयदग्निं तदिदंस्पर्शक्षमंरत्नम् ॥ २३ ॥

शकुंतला–(सरोषमिव।) अनसूये गमिष्याम्यहम्।

अनसूया–किंनिमित्तम्।

शकुंतला–इमामसंबद्धप्रलापिनीं प्रियंवदामार्यायैगौतम्यै निवेदयिष्यामि।

अनसूया–सखिनयुक्तमकृतसत्कारमतिथिविशेषं विसृज्य स्वच्छंदतो गमनम्।

(शकुंतला। नकिंचिदुक्काप्रस्थितैव।)

राजा–(ग्रहीतुमिच्छन्निगृह्यात्मानम्। आत्मगतम्।)

अहोचेष्टाप्रतिरूपिकाकामिजनमनोवृत्तिः।

अहंहि।

अनुयास्यन्मुनितनयांसहसाविनयेनवारितप्रसरः।
स्थानादनुच्चलन्नपिगत्वेवपुनः प्रतिनिवृत्तः ॥ २४ ॥

टीका

राजा–तुम्हारी सखी को जाननेकी इच्छा है।

इस्का यु नेम तप जोकि विरोध कामका सो ए व्रतादि सब दानसूं पूर्व्वही है। या मोटि आंख जिनकी तिनके यु संगही क्या ए सखी रहगि ह्यांहि सदा तुम्हारी॥ २२॥

प्रियंवदा–हे महात्मा हमारी सखी परवश है। और इसके बड़ोंका यह सङ्कल्प है कि इसी के समान बर मिले तो दें।

राजा–(आपही आप।) समान वर मिलना तो बहुत कठिन नहींहै।

अब हृदय हो अभिलाषा। अबहि तुं सन्देह निर्णया भया॥ जाने जुया कि अग्नी वहि छूने योग्यहै रत्नः॥ २३॥

शकुन्तला–(रिससी होकर।) अनसूया मैं जाती हूँ।

अनसूया–क्यों काहे को जाती है।

शकुन्तला–मैं गौतमी से जाकर कहूँगी कि प्रियंवदा मुझे छेड़ती है।

अनसूया–हे सखी यह उचित नहीं है कि तू ऐसे पाहुने को विना सत्कार किये छोड़कर चली जाय।

(शकुन्तला ने कुछ उत्तर न दिया चल खड़ीहुई।)

राजा–(ऐसा उठा मानों रोकेगा पर फिर आपही रुकके। आपही आप कहने लगा।)

अहा कामी मनुष्यों की कैसीमति भंग होजाती है।

कि। “ देखो ”

मैं अब तो।

चलता पीछु मुनिकि तनयाक झट् रुकही गया। जितेन्द्रिय से न भी हटा यहां सम्मूलम् यह की उलट् आया॥ २४॥

मूलम्

प्रियंवदा-(शकुंतलां निरुध्य ।) हला, नतेयुक्तंगंतुम् ।

शकुंतला-(सभ्रूभंगम् ।) किंनिमित्तम् ।

प्रियंवदा-वृक्षसेचनेद्वे धारयसि मे । एहितावत् । आत्मा नं मोचयित्वा ततो गमिष्यसि ।

(इतिबलादेनांनिवर्तयति ।)

राजा-भद्रेवृक्षसेचनादेवपरिश्रांतामत्रभवतींलक्षये । त थाह्यस्याः ।

स्रस्तांसावतिमात्रलोहिततलौबाहूघटोत्क्षेपणादद्या पिस्तनवेपथुंजनयति श्वासःप्रमाणाधिकः । स्रस्तंकर्ण शिरीषरोधिवदनेघर्मांभसांजालकंबन्धेस्रंसिनिचैकहस्त यमिताः पर्याकुलामूर्धजाः ॥ २५ ॥

तदहमेनामनृणांकरोमि ।(इत्यंगुलीयंदातुमिच्छति ।)

(उभेनाममुद्राक्षराण्यनुवाच्यपरस्परमवलोकयतः ।)

राजा-अलमस्मानन्यथासंभाव्य । राज्ञःपरिग्रहोऽयमि ति राजपुरुषंमामवगच्छथ ।

प्रियंवदा-तेनहि नार्हत्येतदंगुलीयकमंगुलीवियोगम् । आर्यस्यवचनेनानृणेदानीमेषा (किंचिद्विहस्य ।) हला शकुन्तले मोचितास्यनुकम्पिनार्येण, अथवांम हाराजेन । गच्छेदानीम् ।

शकुन्तला-(आत्मगतम् ।) यद्यात्मनः प्रभविष्यामि । (प्रकाशम् ।)

टीका

प्रियंवदा–(शकुन्तला को रोककर ।) सखी तेरेको यहां से न जाना चाहिये ।

शकुन्तला–(कटाक्षसहित ।) क्यों नहीं जाना चाहिये ।

प्रियंवदा–सखी अभी तुझे दो वृक्ष सींचने को और बाकी हैं । इधर आओ । इस ऋण से आत्मा को छुड़ा के फिर जाना ।

राजा–मैं जानताहूं कि तुम्हारी सखी वृक्ष सींचने से ही थकी है। और इसके ।

ढीली बाहरु हाथ लालहि भये मट्के उठाने सुँ यह इस्की कांपत, हैं कुचा कुछ यहां हांफे भि ज्यादेहिहै ॥ ढल्की कान शिरसकूं रोक मुखपे बूंदा पसीनों कि ए चोटी खुल्ति कु एक हाथ पकड़े छूटी हैं अल्कावली ॥ २५ ॥

तो मैं अब इसका ऋण यों चुकाताहूं ।

(अंगूठी देना चाहता है ।)

(दोनों सखी मुंदरी के अक्षर बांच कर आपस में देखतीभई ।)

राजा–इसके लेने से तुम यह सङ्कोच मत करो कि यह राजा की वस्तु है क्योंकि मैं भी तो राजपुरुषहूं मुझे यह राजा से मिलीहै ।

प्रियंवदा–जो ऐसी है तो महात्मा इसे अपनी उंगली से न्यारी मत करो तुम्हारे कहनेही से ऋण चुक गया है । (कुछ हँसके ।) हे सखी शकुन्तला इस महात्मा ने दया करके तुझे ऋण से छुड़ा दिया । अब तू चाहे जा ।

शकुन्तला–(आपही आप ।)

जो मैं अपने बश में रही तो क्या इन बातों को भूलजाऊंगी।

(प्रकट ।)

मूलम्

कात्वंविसर्जितव्यस्यरोद्धव्यस्यवा ।

राजा-(शकुन्तलां विलोक्य । आत्मगतम्) किंनुखलु यथावयमस्यामेव मियमप्यस्मान्प्रतिस्यात् । अथवा लब्धावकाशामे प्रार्थना । कुतः ।

वाचं न मिश्रयति यद्यपिमद्वचोभिः कर्णंददात्यभिमुखं मयि भाषमाणे । कामं न तिष्ठतिमदाननसंमुखीनाभूयिष्ठमन्यविषया नतु दृष्टिरस्याः ॥ २६ ॥

(नेपथ्ये ।)

भोभोस्तपस्विनः संनिहितास्तपोवनसत्वरक्षायै भवत । प्रत्यासन्नः किल मृगयाविहारी पार्थिवो दुष्यन्तः।

तुरगखुरहतस्तथाहिरेणुर्विटपविषक्तजलार्द्रवल्कलेषु । पततिपरिणतारुणप्रकाशः शलभसमूहइवाश्रमद्रुमेषु ॥ २७ ॥

अपिच ।

तीव्राघातप्रतिहततरुस्कंधलग्नैकदंतः पादाकृष्टव्रततिवलया सङ्गसंजातपाशः ॥ मूर्तोविघ्नस्तपसइव नो भिन्नसारङ्गयूथोधर्मारण्यं प्रविशति गजः स्यन्दनालोकभीतः ॥ २८ ॥

(सर्वाःकर्णं दत्वा किञ्चिदिवसंभ्रान्ताः ।)

राजा-(आत्मगतम् ।) अहो धिक् । पौरा अस्मदन्वेषिणस्तपोवनमुपरुन्धंति । भवतु । प्रतिगमिष्यामस्तावत् ।

टीका.

जाने की आज्ञा देनेवाली अथवा रोकनेवाली तुम कौन हो।

राजा-(शकुन्तला की ओर देखके। आपही आप।) जैसा मे-
रा मन इस पद्मिनी से उलझा है वैसाही इसका भी मुझ से
अटका दिखाई देता है। यही मनोरथ पूरा होने के उत्साह का
कारण है।

काहे से कि।

बोली मिलावति नहीं ममवाक्य में ए काना लगावतिह मोर
हि ओर बोले। मेरे तु सन्मुख नहीं यह ठाढ़ि होती ज्यादा भि
और विषयों नहिं दृष्टि इस्की॥ २६॥

(नेपथ्य में।)

हो हो तपस्वियो आश्रम के जीवों की रक्षा करो राजा दुष्यन्त
आताहै आखेट करता।

तुरग खुरहटी जसै धूली। दरखत सूकत गील वक्कलोंपै गिरत
कुछ ललाई श्याम सेहो। टिड़िन समूह इवाश्रम द्रुमों पे॥ २७॥

औरभी।

चलता तोड़ै दरखत यहै लगूत इकदाँत डाले। पैरों खैंची अव
तू इसने बेलही होय फांसा। तपमें मूर्त्ती विघन कि हमरे छूट हा-
थिन् क झुण्ड्से आवेये हैं तपसिन बिषे रथमुं डरके जु हाथी॥२८॥

(ऋषिकुमारियों ने कान लगाकर सुना फिर चौंक पड़ीं)

राजा-(आपही आप।)

अरे धिक्कार है इन पुरवासियों ने मुझे ढूंढ़ते २ यहां आकर
तपोवन में विघ्न डालाहै अव इनके पास जानापड़ा॥

मूलम्

सख्यौ--आर्यअनेनारण्यकवृत्तांतेनपर्याकुलाःस्म।
अनुजानीहि नउटजगमनाय।
राजा--(ससंभ्रमम्।) गच्छंतुभवत्यः। वयमप्याश्रम
पीड़ायथानभवति। तथा प्रयतिष्यामहे।
(सर्वेउत्तिष्ठंति।)
सख्यौ--आर्य! असंभावितातिथिसत्कारं भूयोऽपिप्रेक्ष
णनिमित्तं लज्जावहआर्यं विज्ञापयितुम्। राजामामे
वम्। दर्शनेनैव भवतीनां पुरस्कृतोऽस्मि।
(शकुन्तला राजानमवलोकयन्ती सव्याजंविलम्ब्य
सह सखीभ्यांनिष्क्रान्ता।)
राजा--मंदौत्सुक्यो ऽस्मिनगरगमनं प्रति। यावदनुया
त्रिकान्समेत्य नातिदूरे तपोवनस्य निवेशयेयम्।
नखलुशक्नोमि शकुन्तलाव्यापारादात्मानं निवर्तयि
तुम्। ममहि।
गच्छतिपुरः शरीरंधावतिपश्चादसंस्तुतंचेतः। चीनां
शुकमिवकेतोः प्रतिवातंनीयमानस्य। २ (इतिनिष्क्रां
ताः सर्वे।)

इति प्रथमोङ्कः।

टीका

दोनोंसखी—हे महात्मा, अबतो हम को इस वन के समाचारसे डर लगताहै आज्ञा दो तो कुटी को जांय।

राजा—(चमकतासा) तुम जावो। मैं भी इस आश्रममें विघ्न न हो ऐसा यत्न करूंगा॥

(सब उठखड़ी हुई)

दोनोंसखी—हे महात्मा जैसा तुम सरीखे पुरुषों का सत्कार होना चाहिये सो हमसे नहीं बनाहै इस लिये हम यह कहती लजाती हैं कि कभी फिर दर्शन देना॥

राजा—ऐसा मत कहो। तुम्हारे देखनेही से हमारा सत्कार होगया (शकुन्तला राजा को देखनीभयी किसी मिससे ठहरकर चलती हुई।)

राजा—हाय अब मैं नगरकी ओर कैसे जाऊं अब मुझ से नगरकी ओर तो चला नहीं जाता इस वास्ते साथ वालों को बिदाकर के कहीं वनके नगीचेही डेरा करूंगा। शकुन्तला के हावभाव देखनेकी लालसा मेरे हृदयसे कैसे जायगी मेरेको॥

ग्रामकुं चलै शरीर दौड़त पीछे न लागता चित् ए। पतला वसन ध्वजाका चलता हवा सुं पीछुही॥ २६॥

(सब गये।)

इति श्रीस्वामिलक्ष्मीनारायणशर्म्मणा विरचिते
प्रतिबिम्बे प्रथमोऽङ्कः॥ १॥
(पहिला अङ्क) समाप्त।

श्रीगणेशाय नमः

अभिज्ञानशाकुन्तलं नाटकं

द्वितीयोङ्कः ॥

(ततः प्रविशति विषण्णोविदूषकः ।)

विदूषकः--(निश्वस्य ।) भो ! दृष्टम् । एतस्य मृगया शीलस्यराज्ञो वयस्यभावेन निर्विण्णोस्मि । अयं मृगोऽयंवराहोऽयंशार्दूल इति मध्याह्नेपिग्रीष्मविरल पादपच्छायासुवनराजीष्वाहिण्ड्यतेऽटवीतोऽटवी । पत्रसंकरकषायाणिकटूनिगिरिनदिजलानिपीयन्ते।

अनियतवेलं शूल्यमांसभूयिष्ठ आहारोभुज्यते। तुरगानुधावनकण्डितसंधे रात्रावपिनिकामं शयितव्यंनास्ति। ततोमहत्येवप्रत्यूपेदास्या पुत्रैः शकुनिलुब्धकैर्वन ग्रहणकोलाहलेन प्रतिबोधितोस्मि । इयतेदानीमपिपीड़ाननिष्क्रामति। ततोगण्डस्योपरि पिटकः संवृत्तः। ह्यः किलास्मास्ववहीनेषुतत्रभवतो मृगानुसारेणाश्रमपदंप्रविष्टस्यतापसकन्यका शकुन्तला ममाधन्यतयादर्शिता।

श्रीगणेशाय नमः

अभिज्ञानशकुन्तला नाटक

दूसरा अंक ॥

(बिपाद करता हुआ माढव्य आया ।)

माढव्य-(श्वास खैंचकर ।) इस मृगयाशील राजा की मित्रता से हम तो बड़े दुःखी हैं यहां गर्म्मी की दुपहरी में यह मृग आया वह बराह गया उधर शार्दूल जाता है यही कहते इस वनसे इसमें इससे उसमें ' पशुओं की भांति, भागना पड़ताहै । कहीं छाया भी इतनी नहीं मिलती जहां कुछ विश्राम लिया जाय पहाड़की नदी में वृक्षों के पत्ते गिरकर सड़गये हैं प्यास लगै तो उन्हीं का पानी पीना पड़ता है ।

खाने को शूल पर भुना मांस खाना मिलता है सो भी कुसमय पर । घोड़े के पीछे दौड़ते दौड़ते देह ढीली हो जाती है । और रातको नींद भर सोना नहीं मिलता फिर बड़े भोरही दासी जाये मांसही मांस पुकारते हैं और चलो वन को चलो वनको यह चिल्ला चिल्ला कर कान फोड़ते हैं । ये दुःख तो थेही तबतक एक नया घाव और हुआ । कि हमसे बिछुड़ कर राजा मृगके पीछे चलते तपस्वियों के आश्रम में पहुँचा वहां मेरे अभाग्य से उसकी दृष्टि एक तपस्वी की कन्या पर कि जिसका नाम शकुन्तला है पड़गई ॥

मूलम्

सांप्रतं नगरगमनस्यमनः कथमपिनकरोति । अद्यापितस्यतामेव चिन्तयतो ऽक्ष्णोःप्रभातमासीत् । का गतिः । यावत्तंकृताचारपरिक्रमंपश्यामि । (इतिपरिक्रम्यावलोक्यच ।) एषः बाणासनहस्ताभिर्यवनीभि* र्वनपुष्पमालाधारिणीभिः परिवृत इतएवागच्छतिप्रियवयस्यः । भवतु । अङ्गभङ्गविकल इव भूत्वा स्थास्यामि । यद्येवमपिनाम विश्रमंलभेय । (इतिदण्डकाष्ठमवलंम्ब्यस्थितः ।)

(ततःप्रविशतियथानिर्दिष्टपरिवारोराजा ।)

राजा--कामं प्रियानसुलभा मनस्तुतद्भावदर्शनायासि ॥
अकृतार्थेऽपिमनसिजेरतिमुभयप्रार्थनाकुरुते ॥ १ ॥

(स्मितं कृत्वा ।) एवमात्माभिप्रायसंभावितेष्टजनचित्तवृत्तिः प्रार्थयिताविडम्ब्यते ।

अहं हि ।

स्निग्धं वीक्षितमन्यतोपि नयनेयत्प्रेषयंत्या तया यातं यच्चनितम्बयोर्गुरुतया मन्दंविलासादिव ॥ मा गा इत्युपरुद्धया यदपि सा सासूयमुक्ता सखी सर्वं तत्किल मत्परायणमहो कामीस्वतां पश्यति ॥ २ ॥

विदूषकः--(तथास्थितएव ।) भो वयस्य, न मे हस्तपादं प्रसरति । वाङ्मात्रेण जापयिष्यामि ॥

---

* तल्लक्षणंतुमातृगुप्ताचार्यैरुक्तम् । गृहकक्षाविचारिण्यस्तथोपवनसंचराः । संचारिकास्तुताज्ञेयायवन्योपिमनाःक्वचिद् इति ।

टीका

अब नगर का लौटना कैसा । इन्हीं क्लेशों के शोच विचार में सब रात मेरी आंख नहीं लगी । क्या गति होगी । जबतक राजा को देख न लूंगा गद्दी पर राज काज करते । (आगे चला और देखा ।) अहह यह आता है बाण आसन हाथ में लिये वन पुष्प माला पहिनेहुई *यवनियोंके साथ इधरही प्रियसखा । हो । अबमैंभी अङ्ग भङ्ग करके खड़ा हो जाऊं चलो यों ही विश्राम सही (लाठी टेककर खड़ा हुआ ।)

(ऊपर कहे वेषसे दुष्यन्त आया ।)

राजा— [दोहा ।]

प्रिया मिलन दुःसह अती नहीं प्रेमफल पाहु ॥
तौभी मोमन चाहता अरु दोउनकी चाहु ॥ १ ॥

(मुसक्या कर ।) जब किसी की किसी से लगती है तो यही सूझती है कि उसकी भी मुझसे लगी होगी । अब मैं ।

[कवित्व—]

देखै चाहे और और पर मैं यों जानता । मेरी ओर देखे तब स्नेह दृष्टि मानता ॥ दुढुकारे चाहै सखिसेही वह क्रोधता । मैंने जाना मोपरही ये काम आंखें मारता ॥ चाहे जो हो और पर प्रेमी जन देखता । मेरे ऊपर ये छटा सों मेरे में ये है धता ॥ २ ॥

माढव्य—(जैसे खड़ाथा वैसेही खड़ारहा ।) हे मित्र ! मेरे हाथ पांव नहीं चलते हैं इसलिये केवल वचनोंहीसे आशीर्वाद देताहूं ।

---

* यवनी नाम साथ चलनेवालियों का है । उसका लक्षण मातृगुप्ताचार्य्यों ने कहा है । घरके पूर्व्वापर के काम को विचारने वाली और उपवन में सङ्ग चलने वाली । तिनको सञ्चारिका कहते हैं और यवनी भी तिन को कहा है ।

मूलम्

राजा--कुतोऽयंगात्रोपघातः।

विदूषकः--कुतः किलस्वयमक्ष्याकुलीकृत्याश्रुकारणं पृच्छसि।

राजा--नखल्ववगच्छामि।

विदूषकः--भो वयस्य, यद्वेतसः कुब्जलीलां विडम्बयति तत्किमात्मनः प्रभावेण ननुनदीवेगस्य

राजा--नदीवेगस्तत्रकारणम्।

*विदूषकः--ममापि भवान्।

राजा--कथमिव।

विदूषकः--एवंराजकार्याण्युज्झित्वा तादृश आकुलप्रदेशवनचरवृत्तिना त्वयाभवितव्यम्। यत्सत्यंप्रत्यहं श्वापदसमुत्सारणैः संक्षोभितसंधिबंधानां ममगात्राणामनीशोऽस्मि संवृत्तः। तत्प्रसादयिष्यामि विसर्जितुं मामेकाहमपितावद्विश्रमितुम्।

राजा--(स्वगतम्।) अयंचैवमाह। ममापि काश्यपसुतामनुस्मृत्य मृगयाविक्लवंचेतः। कुतः।

न नमयितुमधिज्यमस्मिशक्तोधनुरिदमाहितसायकंमृगेषु। सहमुपेत्ययैः प्रियायाः कृतइवमुग्धविलोकितोपदेशः॥ १३॥

विदूषकः--(राज्ञो मुखंविलोक्य।) अत्रभवान् किमपि हृदये कृत्वा मन्त्रयते।

---

* विकृताङ्गवचोवेषैर्हास्यकारीविदूषकः॥ सुधाकरेलक्षणम्पूर्वोक्तम्।

टीका

राजा—कहो सखा तुम्हारा अङ्गभङ्ग क्यों हुआ।

माढव्य—कहो काहे अपनी अंगुली से आंख कुचोकर आपही पूं-छतेहो कि आंसू क्यों आये।

राजा—हम समझे नहीं क्या कहा।

माढव्य—देखो वह बेतका वृक्ष नीचेको झुक गयाहै सो कहो अपने आप झुकाहै या नदी के प्रवाह से।

राजा—नदी के बेगसे झुकाहोगा।

*विदूषकः—ऐसेही मेरे अङ्गभङ्ग होने के तुम्हीं कारण होगे।

दुष्यन्त—क्यों कर।

माढव्य—यह बात तुमको कब उचित है कि ऐसे राजकाजों को भूल और ऐसे रनवास को त्याग यहां वनमें बसो और ऐसे वनबासियों के काम करो। नित्य कुत्तों और मृगों के पीछे दौड़ते दौड़ते मेरा तो अङ्ग शिथिल हो रहाहै सो कृपा करके एकदिन विश्राम लेनेदो।

राजा—(आपही आप।) इधर यह भी कहता है उधर मेरा चि-त्त ऋषिकुमारी की सुध में आखेट से निरुत्साह होरहा है। काहे से कि।

दोहा—

भोली चितवन प्यारिको मृगन सिखाया तत्त्व॥
केहि विधि तिनका बाणसे हननकरूं मैं सत्त्व॥३॥

माढव्य—(राजाके मुखकी ओर देखकर।)

---

* विदूषक हांसी करनेवाला और अङ्ग विकार सा दिखाने वाला और व-चनको विकारसहित कहै वही माढव्य सुधाकरमें लक्षण कहा है।

मूलम्

अरण्येमयारुदितमासीत् ।

राजा-(सस्मितम् ।) किमन्यत् । अनतिक्रमणीयंमे सुहृद्वाक्यमिति स्थितोऽस्मि ।

विदूषकः--चिरंजीव ।

(इतिगन्तुमिच्छति ।)

राजा--वयस्य तिष्ठ । सावशेषंमेवचः ।

विदूषकः- आज्ञापयति भवान् ।

राजा--विश्रान्तेन भवताममाप्यनायासेकर्मणि सहायेन भवितव्यम् ।

विदूषकः--किं मोदकखण्डिकायाम् । तेनह्ययंसुगृहीतः क्षणः ।

राजा--यत्र वक्ष्यामि । कःकोऽत्रभोः ।

(प्रविश्य ।)

दौवारिकः--(प्रणम्य ।) आज्ञापयतुभर्ता ।

राजा--रैवतक, सेनापतिस्तावदाहूयताम् ।

दौवारिकः--तथा ।

(इति निष्क्रम्य सेनापतिनासह पुनः प्रविश्य ।) एष आज्ञावचनोत्कंठोभर्तेतोदत्तदृष्टिरेवतिष्ठति । उपसर्प त्वार्यः ।

सेनापतिः--(राजानमवलोक्य ।) दृष्टदोषापिस्वामिनि मृगया केवलंगुणएव संवृत्ता । तथाहि । देवः ।

टीका

तुम्हारे मन में जानैं क्या शोच है ॥ मेरी बात तो ऐसी हो-
गई जैसे वनमें रोना।

राजा—(हँसके।) मेरे मनमें यही है कि तुम सखाकी बात मानूं।

माढव्य—बड़ी आयुर्ब्बलहो।

(जानेकी मनमें करताभया)

राजा—मित्र ! ठहरो हमको और कुछ कहनाहै।

माढव्य—कहिये।

राजा—जब तुम विश्राम लेचुको तब हम एक ऐसे काममें तुम से
सहायता लेंगे जिसमें कुछ भागना दौड़ना न होगा।

माढव्य—अहह क्या खांड़ के लड्डू खिलाओ गे तौ तौ अभी अ-
च्छा अवसर है।

राजा—यहां कहूं किसको। कौनहै रे।

(जाके)

द्वारपाल—(नमस्कार करके।)
स्वामीकी क्या आज्ञा है॥

राजा—हे रैवतक, तुम सेनापति को बुलावो।

द्वारपाल—बहुतअच्छा।

(बाहर जाकर सेनापति को बुला लाया।) आओ तुम्हारी
ही राह देखते हैं बैठे॥

सेनापति—(राजा की ओर देखके।) मृगयां को यद्यपि बड़ों ने
दोष लगाया है। और अनर्थ कहा है परन्तु हमारे स्वामी को
गुणदायक हुई जैसे महाराज।

मूलम्

अनवरतधनुर्ज्यास्फालनक्रूरपूर्वं रविकिरणसहिष्णु स्वेदलेशैरभिन्नम् । अपचितमपि गात्रं व्यायतत्वादलक्ष्यं गिरिचर इव नागः प्राणसारं बिभर्ति ॥ ४ ॥

(उपेत्य ।)

जयतु स्वामी । गृहीतश्वापदमरण्यम् । किमन्यत्रावस्थीयते ।

राजा--मंदोत्साहः कृतोस्मिमृगयापवादिनामाढव्येन ।

सेनापतिः--(जनान्तिकम् ।) सखेस्थिरप्रतिबंधोभव । अहंतावत्स्वामिनश्चित्तवृत्तिमनुवर्तिष्ये । (प्रकाशम्) प्रलपत्वेषवैधवेयः । ननुप्रभुरेवनिदर्शनम् ।

मेदश्छेदकृशोदरं लघु भवत्युत्थानयोग्यं वपुः सत्त्वानामपिलक्ष्यतेविकृतिमच्चित्तंभयक्रोधयोः ॥ उत्कर्षःसच धन्विनांयदिषवः सिध्यंतिलक्ष्येचले मिथ्यैवव्यसनंवदन्तिमृगयामीदृग्विनोदःकुतः ॥ ५ ॥

विदूषकः--अत्रभवान्प्रकृतिमापन्नः । त्वंतावदटवीतोऽटवीमाहिण्डमानो नरनासिकालोलुपस्यजीर्णऋक्षस्य कस्यापिमुखे पतिष्यसि ।

राजा--भद्रसेनापते, आश्रमसंनिकृष्टे स्थितास्मः । अतस्ते वचो नाभिनन्दामि ।

टीका।

कवित्त–

स्वामि हमार हमेश जु खैंचत बारम्बार धनू तिहिसेही।
देख बड़ा यह देह कड़ा तिसके गुण से अतिपुष्ट जु देही॥
नहिं व्यापत धूप औ रूपघना यदिहै यह दुरबल देह सनेही।
डील पहाड़ बना यह बलमें तेग घना कहु हाथिहु सेही॥४॥

(राजाके निकट जाके।)

स्वामी की जयहो। महाराज इस वनमें हमने आखेटी पशुओं के खोज देखे हैं यहां मृगया वहुत हैं आप कैसे बैठे हो।

राजा–हे भद्रसेन इस माढव्य ने इस मृगयाकी निन्दा करके मेरा उत्साह मन्द करदिया है।

सेनापति–(हौले माढव्य से।) तुम अपनी बात पर बने रहो मैं स्वामी के मन सुहाती कहूंगा। (प्रकट) महाराज इस रांड़केको बकने दीजिये। भला आपही सोचो।

कवित्त– पचत अहार अरु उदर ह्वै हलका। चलन फिरन हित चित अतिबलका॥ जीव जन्तु क्रोधकर बहुभय छलका। चलत भगत पशु बींधत न बलका॥ यह काम बीर कर और है अकलका। मृगया को दोष देत तेहि जन फलका॥ ५॥

माढव्य–अरे राजा को तो मृगया की टेव लगगई है तुझे क्या हुआ है वनमें बहुत दौड़ता फिरता है तू किसी दिन किसी बूढ़े रीछ के स्यार के धोखे मूं में न पड़े।

राजा–हे सेनापते! यह आश्रम का समीप है अब हम आखेट की बड़ाई करने में तुम्हारा पक्ष नहीं ले सकते हैं। आज अब। यहां ऐसा होने दो कि।

मूलम्

अद्यतावत्। एवम्।

गाहन्ताम्महिषानिपानसलिलं शृङ्गैर्मुहुस्ताडितं। छायाबद्धकदम्बकं मृगकुलंरोमन्थमभ्यस्यतु॥ विश्रब्धं क्रियतांवराहपतिभिर्मुस्ताक्षतिःपल्वलेविश्रामंलभतामिदं च शिथिलज्याबन्धमस्मद्धनुः॥ ६॥

सेनापतिः—यत्प्रभविष्णवेरोचते।

राजा—तेनहिनिवर्तय पूर्वगतान्वनग्राहिणः। यथानमेसैनिकास्तपोवनमुपरुन्धान्तितथानिषेद्धव्याः। पश्य।

शमप्रधानेषु तपोधनेषु गूढंहि दाहात्मकमस्ति तेजः॥ स्पर्शानुकूला इवसूर्यकांतास्तदन्यतेजोऽभिभवाद्वमन्ति॥ ७॥

सेनापतिः—यदाज्ञापयति स्वामी।

विदूषकः—ध्वंसतांतउत्साह वृत्तांतः।

(निष्क्रान्तः सेनापतिः।)

राजा—(परिजनं विलोक्य।) अपनयंतुभवत्यो मृगयावेशम्। रैवतक, त्वमपिस्वंनियोगमशून्यंकुरु।

परिजनः—यद्देवआज्ञापयति।

(इति निष्क्रान्तः।)

विदूषकः—कृतम्भवतानिर्मक्षिकम्। सांप्रतमेतस्यांपादपच्छायायां विरचितलतावितानदर्शनीयायामासने निषीदतु भवान्। यावदहमपिसुखासीनोभवामि।

टीका

छन्द शिखरिणी-

तलाओं में लोटें महिष अरने और हरने।
घनी छाया में हो स्थित सुखितहो जांय चरने॥
उखाड़ो मोथोंको लघुजल तला सूअर चले।
धनूकी प्रत्यञ्चा यह थकित विश्राम अब ले॥ ६॥

सेनापति-जो आज्ञा महाराजकी।

राजा-आगे जो कमनैत बढ़गई हैं उनको लौटालो और सेनाके लोगों को बर्ज दो कि इस तपोवन में कुछ विघ्न न डालें उन को समझा दो ऐसे देखो।

चौपाई।

क्षमा बहुरि ऋषिजन में होई। भीतर शक्ति दाह की सोई॥
सूर्य कान्तिमणि शीतल पर्शा। सम्मुख रविके जलतन अर्शा ७

सेनापति-जो आज्ञा महाराजकी।

माढव्य-मिटा, तेरे उत्साहका समाचार।

(सेनापति बाहर गया।)

राजा-(सेवकों को देखके।) तुम भी अपना वेष उतार डालो रैवतक, तुमभी अपने काममें लगो।

सेवक-जो आज्ञा देवकी।

(बाहरगया।)

माढव्य-इस स्थान को भला आपने निर्म्मल किया अब यहां कोई मक्खी भी नहीं रही सुन्दर वृक्षों की छाया में आसन पर बैठिये मैं भी सुखसे विश्राम लूंगा।

मूलम्

राजा—गच्छाग्रतः

विदूषकः—एतु भवान्।

(इत्युभौ परिक्रम्योपविष्टौ।).

राजा—माढव्य, अनवाप्तचक्षुःफलोसि येन त्वया दर्शनीयं न दृष्टम्।

विदूषकः—ननु भवानग्रतोमेवर्तते।

राजा—सर्वः कान्तमात्मनंपश्यति। तामाश्रमललामभूतां शकुन्तलामधिकृत्यब्रवीमि।

विदूषकः—(स्वगतम्।) भवतु अस्यावसरंनदास्ये। (प्रकाशम्।) भो वयस्य तेतापसकन्यकाऽभ्यर्थनी याद्दश्यते

राजा—सखे,न परिहार्ये वस्तुनि पौरवाणां मनःप्रवर्तते।

सुरयुवतिसंभवंकिल मुनेरपत्यं तदुज्झिताधिगतम्॥ अर्कस्योपरिशिथिलंच्युतमिवनवमालिकाकुसमम्॥ ८॥

विदूषकः—(विहस्य।) यथाकस्यापि पिण्डखर्जूरैरुद्वेजितस्य तिन्तिण्यामभिलाषो भवेत्। तथास्त्रीरत्नपरिभाविनो भवत इयमभ्यर्थना।

राजा—न तावदेनां पश्यसि येनैवमवादीः।

विदूषकः—तत्खलु रमणीयंयद्भवतोपिविस्मयमुत्पादयति।

टीका

राजा–चलो आगे बैठो ।

माढव्य–आइये ।

(दोनों लौटकर एक वृक्षकी छाया में बैठे ।)

राजा–हे माढव्य, इस संसार में जो पदार्थ देखने योग्यहै उस के दर्शनका सुख तेरे नेत्रों को प्राप्त नहीं हुआ ।

माढव्य–काहे से इन नेत्रों को नित्य महाराजका दर्शन होताहै ।

राजा–अपनी बड़ाई तो सब को भाती है परन्तु मेरा कहना यह है कि तेरे नेत्रों ने कभी शकुन्तला को नहीं देखा है जो इस आश्रमकी शोभाहै ।

विदूषक–(आपही आप ।)

ऐसी लगन को बढ़ने देना अच्छा नहीं है । (प्रकट) जान पड़ा मित्र । तुम तपस्वी की कन्या को चाहते हो सो भला इससे क्या मिलेगा ।

राजा–सखे ! तू निश्चय मान कि अलीन वस्तुमें पुरुवंशियों का मन नहीं जाताहै ।

दोहा–राजर्षी की पुत्रिहै छोड़ि अप्सरा मात ।
आकपत्रमें मालती कराव लयी जिमि तात ॥ ८ ॥

माढव्य–(हँसकर) जैसे किसी की रुचि छुहारों से हटकर इमली पर लगे । तैसेही तुम रनवास की स्त्रीरत्नों को छोड़ इस गँवारी पर आसक्त भयेहो ।

राजा–हे सखा ! जो तू उस को एकबेर देखै तो फिर ऐसी न कहै ।

माढव्य–सत्य है जिसकी राजा बड़ाईकरे वह क्यों न उत्तम होगी ।

मूलम्

राजा—वयस्य, किंबहुना ।

चित्रे निवेश्य परिकल्पितसत्त्वयोगारूपोच्चयेन मनसाविधिनाकृतानु ॥ स्त्रीरत्नसृष्टिरपरा प्रतिभाति सामेधातुर्विभुत्वमनुचिंत्यवपुश्चतस्याः ॥ ९ ॥

विदूषकः—यद्येवं प्रत्यादेश इदानीं रूपवतीनाम् ।

राजा—इदं च मे मनसि वर्तते ॥

अनाघ्रातं पुष्पं किसलयमलूनं कररुहै रनाविद्धं रत्नं मधुनवमनास्वादितरसम् ॥ अखंडं पुण्यानां फलमिवचतद्रूपमनघं न जाने भोक्तारं कमिह समुपस्थास्यति विधिः ॥ १० ॥

विदूषकः—तेनहि लघु परित्रायतामेनांभवान् । माकस्यापि तपस्विन इंगुदीतैलमिश्रचिक्कणशीर्षस्यहस्ते पतिष्यति ।

राजा—परवती खलु तत्रभवती । नच संनिहितोत्र गुरुजनः ।

विदूषकः—अत्रभवन्तमन्तरेण कीदृशस्तस्या दृष्टिरागः ।

राजा—निसर्गादेवाप्रगल्भस्तपस्विकन्याजनस्तथापि ।

अभिमुखे मयि संहृतमीक्षणं हसितमन्यनिमित्तकृतोदयम् । विनयवारितवृत्तिरतस्तया नविवृतो मदनोनचसंवृतः ॥ ११ ॥

विदूषकः—न खलु दृष्टमात्रस्य तवाङ्कंसमारोहति ।

टीका

राजा—बहुत कहांतक वर्णन करूं

कड़खा—

विधिने सुधिकर ये रची अहो अनोखी सृष्टि ।
और रतन अब आज सब फीके देखत दृष्टि ॥
अपने तन मन दत्तसे रची मूर्त्ति है एक ।
पुनि निज अतिमतिविभवसे प्राणधरे बहुनेक ॥ ९ ॥

माढव्य—जो ऐसीही है तो उसके आगे सब रूपवती स्त्री निरादर हैं ।

राजा—मेरीदृष्टि में तो ऐसीही है ।

न सूंघा पुष्पाहै अपितु नहिं छेदा कमलपात् । न बींधा रत्नाहै मधु नव न चाखा भि रसहै ॥ अखण्डा पुण्योंका फल अनघहै रूप तिसका । न जानें किस् भोगी कुहिं यह मिलेगा विधि दिया ॥१०॥

माढव्य—उससे वेगि विवाह कर लो नहीं तो अखण्ड पुण्यका फल किसी ऐसे अनगढ़ योगी के हाथ लग जायगा जिसका सब शृङ्गार शिरमें हिंगोट का तेल होगा ।

राजा—मित्र ! वह परवश है और उसका पिता घर नहीं है ।

माढव्य—भला जी तुमको वह कैसा चाहती है ।

राजा—सुनों तपस्वियों की कन्या स्वभावकी सकुचीली होती हैं तौभी । शेर—

हंसती छिपाय तनको शर्म् सेर माराथा । खोली छिपी न आशकी बेदर्द माराथा ॥ ११ ॥

माढव्य—और क्या देखतेही तुम्हारी गोदमें आबैठती ।

मूलम्

राजा—मिथःप्रस्थानेपुनः शालीनतयापि काममाविष्कृ
तोभावस्तत्रभवत्या । तथाहि ।

दर्भांकुरेण चरणः क्षत इत्यकाण्डे तन्वीस्थिता क
तिचिदेव पदानि गत्वा ॥ आसीद्विवृत्तवदना च विमोच
यन्ती शाखासु वल्कलमसक्तमपिद्रुमाणाम् ॥ १२ ॥

विदूषकः—तेनहिगृहीतपाथेयोभव । कृतं त्वयोपवनंत
पोवनमिति पश्यामि ।

राजा—सखे,तपस्विभिःकैश्चित्परिज्ञातोऽस्मि । चिन्त
यतावत्केनापदेशेन सकृदप्याश्रमेवसामः ।

विदूषकः—कोऽपरोपदेशस्तवराज्ञः । नीवारषष्ठभागम
स्माकमुपहरन्त्विति ।

राजा—मूर्ख, अन्यद्भागधेयमेतेषांरक्षणेनिपततियद्रत्नरा
शीनपि विहायाभिनन्द्यम् ।

पश्य ।

यदुत्तिष्ठतिवर्णेभ्यो नृपाणांक्षयितत्फलम् ॥ तपःष
ड्भागमक्षय्यंददत्यारण्यका हि नः ॥ १३ ॥

(नेपथ्ये ।)

हन्त, सिद्धार्थौस्वः ॥

राजा—(कर्णंदत्त्वा ।) अये, धीरप्रशांतस्वरैस्तपस्वि
भिर्भवितव्यम् ।

(प्रविश्य ।)

टीका

राजा—जिस समय मुझसे बिछुरने लगी तब बड़ीही सुघड़ाई से अपनी चाह दिखाई।

तैसेही। कवित्त—

प्यारि हमारि चली रु भली तब कांटेके आटेसे ठाढ़ि भईथी।
नहिं दूरचली कहिं फांस लगा पटना अटका मिस झूठ लईथी॥
चलती हटती फटती झुमती झुकती मनमोर जु चोरि लईथी।
वह प्राणप्रिया पर जीवलिया यह दुःखदिया प्रिया ऐसि नईथी १२॥

माढव्य—तौ तौ रस्तेका सामान करो। इसीसे यह तपोवन तुमको (उपवन) बाग़ीचे से अच्छा मालूम होताहै।

राजा—हे सखा! कई एक तपस्वियों ने मुझे पहिचान भी लिया है अब कहो किस मिस से इस आश्रम में रहैं।

माढव्य—इस से अधिक, और क्या मिस राजा को चाहिये। कि तपस्वियों से अन्नका अपना छठाभाग मांगो।

राजा—धिक् मूर्ख, कुछ और मिस बतला जिसमें बड़ाई मिले तपस्वियों की रक्षाके लिये तो मैं रत्नों के ढेर उठाडालूं।

देख, दोहा—

ऋषियों की रक्षालिये रत्न उठादूं ढेर।
छठाभाग अक्षयऋषी देतेहैं मुहि हेर॥ १३॥

(नेपथ्य में।)

अब हमारा मनोरथ सिद्ध हुआ।

राजा—(कान लगाकर।) अहो बहुत मीठी धीरी आवाज तो तपस्वियों कीसी सुनाई देती है।

(द्वारपाल आया।)

मूलम्

दौवारिकः—जयतु भर्त्ता। एतौ द्वौ ऋषिकुमारौ प्रतीहारभूमिमुपस्थितौ॥
राजा—तेनह्यविलंबितंप्रवेशयतौ।
द्वारपालः—एषप्रवेशयामि। (इतिनिष्क्रम्यऋषिकुमाराभ्यां सहप्रविश्य।) इतइतोभवन्तौ॥
(उभौराजानंविलोकयतः।)
उभौ—दीप्तिमतोऽपि विश्वसनीयतास्यवपुषः। अथवोपपन्नमेतदृषिभ्यो नातिभिन्ने राजनि।
कुतः।
अध्याक्रान्तावसतिरमुनाप्याश्रमेसर्वभोग्ये, रक्षायोगादयमपितपःप्रत्यहं सञ्चिनोति॥ अस्यापिद्यांस्पृशतिवशिनश्चारणद्वन्द्वगीतः पुण्यःशब्दोमुनिरितिमुहुः केवलंराजपूर्वः॥ १४॥
द्वितीयः—गौतमअयंसबलभित्सखोदुष्यन्तः।
प्रथमः—अथ किम्।
द्वितीयः—तेनहि।
नैतच्चित्रंयदयमुदधिश्यामसीमांधरित्रीमेकःकृत्स्नांनगरपरिघप्रांशुबाहुर्भुनक्ति। आशंसंतेसुरयुवतयोबद्धवैराहिदैत्यैरस्याधिज्येधनुषिविजयंपौरुहूते च वज्रे॥१५॥
उभौ—(उपगम्य।) विजयस्वराजन्।
राजा—(आसनादुत्थाय।) अभिवादयेभवन्तौ।
उभौ—स्वस्तिभवते। (इतिफलान्युपहरतः।)

टीका

द्वारपाल–स्वामी की जय हो दो ऋषिकुमार द्वारपर खड़े हैं।

राजा–तौ शीघ्र लाओ।

द्वारपाल–अभी लाताहूं।

(बाहरगया और दो ब्राह्मणों को साथ लेकर आया।)

इधर आओ इधर आओ।

पहिलाब्राह्मण–(राजा की ओर देखकर।) अहो इस तेजस्वी राजा के दर्शन से मन में कैसा विश्वास उपजता है। यह जानाजाताहै कि ऋषि राजाओं में भेद नहीं काहे से कि।

छन्द–

बनमें धसै रक्षा करै दिन दिन तपस्या सीखता।
कुछभेद ना तपसी बना बनमें फलोंको चीखता॥
जीतके इन्द्री करी वशमें मिटाके सब खता।
गन्धर्व्वगान अप्सरा राजर्षि नाम रेखता॥ १४॥

दूसरा ब्राह्मण–हे गौतम, क्या यही इन्द्रका सखा दुष्यन्त है।

पहिलाब्राह्मण–हां यही है।

दूसरा–तौ क्या आश्चर्य्य है कि।

दोहा–

राजद्वारकी अर्गलासम भोगत सबराज। विजय बखानैं देव गण इन्द्रवज्र धनुराज॥ १५॥

दोनों–(जाकर।) महाराजकी जयहो।

राजा–(आसनसे खड़ाहोके।) आप दोनोंको प्रणाम करताहूं।

दोनों–स्वस्ति आपकी हो (फलोंकी भेंट देतेहुये।)

मूलम्

राजा–(सप्रणामंपरिगृह्य।) आज्ञापयितुमिच्छामि।
उभौ–विदितो भवानाश्रमसदामिहस्थः। तेन भवन्तं प्रार्थयन्ते।
राजा–किमाज्ञापयन्ति।
उभौ–तत्र भवतः कण्वस्य महर्षेरसांनिध्याद्रक्षांसि न इष्टिविघ्नमुत्पादयंति। तत्कतिपयरात्रं सारथिद्वितीयेन भवता सनाथीक्रियतामाश्रम इति।
राजा–अनुगृहीतोऽस्मि।
विदूषकः–(अपवार्य।) एषेदानीमनुकूलातेऽभ्यर्थना॥
राजा–(स्मितंकृत्वा।) रैवतक, मद्वचनादुच्यतां सारथिःसबाणासनं रथं स्थापयेति।
दौवारिकः–यद्देवआज्ञापयति।
उभौ–(सहर्षम्।)

अनुकारिणिपूर्वेषां युक्तरूपमिदंत्वयि। आपन्नभयसत्रेषु दीक्षिताःखलु पौरवाः॥ १६॥

राजा–(सप्रणामम्।) गच्छतांपुरो भवन्तौ। अहमप्यनुपदमागत एव।
उभौ–विजयस्व।
(इति निष्क्रान्तौ।)
राजा–माढव्य, अप्यस्ति शकुन्तलादर्शनेकुतूहलम्।
विदूषकः–प्रथमं सपरिवाह आसीत्। इदानींराक्षसवृत्तांतेन बिन्दुरपि नावशेषितः

टीका

राजा-(प्रणाम सहित ग्रहण करके।) कुछ आपके मुखसे आज्ञा सुननाचाहताहूं।

दोनों-महाराज ! आश्रमवासियोंने यह जानकर कि आप यहीं हो कुछ प्रार्थना की है।

राजा-क्या आज्ञा की है।

दोनों-हमारे गुरु कण्वऋषि यहां नहीं हैं और राक्षस आकर विघ्न डालते हैं। इसलिये आप सारथी समेत कुछ दिन इस आश्रम की रक्षाकरो।

राजा-यह तो मेरे ऊपर बड़ा अनुग्रह किया।

माढव्य-(धीरेसे।) अब तो तुम्हारी मनोकामना सिद्धहुई।

राजा-(मुसक्याकर) रैवतक तू जाकर सारथी को मेरी तरफ से कह कि बाणसहित रथको लावे।

द्वारपाल-जो आज्ञा। (बाहरगया।)

दोनों ब्राह्मण-

(बड़े हर्षसे)। पूर्वों केसे तुम्हीं राजायुक्त रूप यहीं तुम्हैं। यज्ञोंमें भयहोवे जब शिक्षांदेंखलु पौरवे ॥ १६ ॥

राजा-ब्राह्मणो तुम आगे चलो। मैं भी अभी आताहूं।

दोनों ब्राह्मण-सदा जय रहै। (दोनों गये।)

राजा-माढव्य क्यातेरी इच्छा शकुन्तला देखने की है।

माढव्य-पहिले तो कुछ भी चिन्ता न थी परन्तु जबसे राक्षसों का नाम सुना है तबसे उधर जानेको जी डरता है मानों आनंद की नदी भरीथी सो राक्षसके वृत्तांत से सूखगई।

मूलम्

राजा–माभैषीः ननुमत्समीपेवर्तिष्यसे
विदूषकः–एषराक्षसाद्रक्षितोऽस्मि ।

(प्रविश्य ।)

दौवारिकः–सज्जोरथोभर्तुर्विजयप्रस्थानमपेक्षते । एषपुनर्नगराद्देवीनामाज्ञाप्तिहरः करभक आगतः ।
राजा–(सादरम् ।) किमम्बाभिः प्रेषितः ।
दौवारिकः–अथकिम् ।
राजा–ननुप्रवेश्यताम् ।
दौवारिकः–तथा (इतिनिष्क्रम्यकरभकेणसहप्रविश्य।) एषभर्ता । उपसर्प ।
करभकः–जयतुभर्ता । देव्याज्ञापयति ।
आगामिनि चतुर्थदिवसे प्रवृत्तपारणोमउपवासो भविष्यति । तत्रदीर्घायुषावश्यं संभावनीयेति ।
राजा–इतस्तपस्विकार्यम् । इतोगुरुजनाज्ञा । द्वयमप्यनतिक्रमणीयम् । किमत्रप्रतिविधेयम् ।
विदूषकः–त्रिशंकुरिवान्तरालेतिष्ठ ।
राजा–सत्यमाकुलीभूतोऽस्मि ।
कृत्ययोर्भिन्नदेशत्वाद्द्वैधीभवति मेमनः । पुरः प्रतिहतं शैले स्रोतः स्रोतोवहोयथा ॥ १७ ॥

(विचिंत्य ।)

सखेत्वमम्बयापुत्र इति प्रतिगृहीतः ।

टीका

राजा–मतडर मेरेपास रहेगा।

माढव्य–यह राक्षसों से बचा मैं।

(द्वारपाल आया।)

द्वारपाल–महाराज विजयको चलनेके लिये रथ तय्यार है। और आपकी माताकी आज्ञालेकर करभकदूतभी नगरसे आयाहै।

राजा–(आदरसे।) क्या माताने भेजा है।

द्वारपाल–हां महाराज।

राजा–तो उसको आने दो।

द्वारपाल–अच्छा (बाहरगया और करभक को लिवालाया।) महाराज इधरहैं। सन्मुखजा।

करभक–जयहो महाराजकी। माताने आज्ञादी है कि।

आपकी आयुर्बल बढ़ानेके निमित्त आजसे चौथेदिन आपकी बरसगांठका उत्सव होगा सो मेरे व्रतका पारण है। उस समय आप का आनाभी अवश्य है।

राजा–इधरतो तपस्वियों का काम। उधर बड़ोंकी आज्ञा। इनमेंसे कोईभी उल्लंघन करने योग्य नहीं। कहो क्याकरना चाहिये।

माढव्य–अब तौ त्रिशंकु तुम बनकर यहीं ठहरो।

राजा–इस समय मेरे चित्त को सच्चा असमञ्जसहै।

सोरठा–काम भये अब दोउ याही ते मनमोर दो।
फिरभी गिरि जिमि होउ पर्वतसे चलतै नदी ॥१७॥

(सोचके।)

सखे! तुझे भी तौ माता पुत्र कहा करती है।

मूलम्

अतो भवानितः प्रतिनिवृत्त्य तपस्विकार्य्येव्यग्रमानसं मामावेद्य तत्र भवतीनां पुत्रकृत्यमनुष्ठातुमर्हति।

विदूषकः—न खलु मां रक्षोभीरुकं गणय।

राजा—(सस्मितम्।) कथमेतद्भवति सम्भाव्यते।

विदूषकः— ते नहि युवराजोऽस्मीदानीं संवृत्तः।

राजा—ननु तपोवनोपरोधः परिहरणीय इति सर्व्वानानुयात्रिकांस्त्वयैवसह प्रस्थापयामि।

विदूषकः—यथाराजानुजेनगन्तव्यंतथागच्छामि।

राजा—(स्वगतम्।) चपलोऽयं वटुः। कदाचिदस्मत् प्रार्थनामन्तःपुरेभ्यः कथयेत् भवतु। एनमेवं वक्ष्ये।

(विदूषकं हस्ते गृहीत्वा। प्रकाशम्।)

वयस्य, ऋषिगौरवादाश्रमं गच्छामि। न खलु सत्यमेव तापसकन्यकायां ममाभिलाषः।

पश्य—

क्ववयं क्वपरोक्षमन्मथो मृगशावैः सममेधितो जनः॥ परिहासविजल्पितं सखे परमार्थेन न गृह्यतां वचः॥ १८॥

(इति निष्क्रान्ताःसर्व्वे।)

इति द्वितीयोऽङ्कः।

—०—

टीका

इस से तूही नगर को जा और कहदे कि हम को तपस्त्रियों का काम करना अवश्य है तुम पुत्रका काम भी करो।

माढव्य—तुम कहीं मेरेको राक्षस से डरा मत समझना।

राजा—(मुसक्याकर।)नहीं तू बड़ा शूरवीर है ऐसा नहीं समझतेहैं।

माढव्य—अब मैं राजाका छोटा भाईहूं या नहीं।

राजा—हां ठीक है इसी लिये तेरे साथ भीड़ भाड़ चाहिये।

इन सब को अपने साथ लेजा क्योंकि तपोवन में इतना ठौर भी नहीं।

माढव्य—तौ तो मैं राजाही होगया।

राजा—यह ब्राह्मण बड़ा चपल है। कहीं हमारी लगन का वृत्तान्त रनवास में न कहदे। खैर। अब इस को यूं कहना चाहिये

(माढव्य का हाथ पकड़के। प्रकट।)

हे मित्र! केवल ऋषियोंका बड़प्पन रखने को इस तपोवन में जाऊंगा यह तू निश्चय जान कि तपस्वी की कन्या शकुन्तला के कारण नहीं जाताहूं।

देख-- सोरठा--

रही मृगों के साथ क्या जानै शृङ्गाररस।
प्रीति न याके साथ खाली दिल बहलावना॥ १८॥

(सबगये)

इति श्रीस्वामिलक्ष्मीदत्तशर्म्मणा विरचितायां
हेलातरङ्गिण्यां द्वितीयोऽङ्कः॥ २॥

(दूसरा अङ्क) समाप्त हुआ।

———०———

श्रीगणेशाय नमः ॥

अभिज्ञानशाकुन्तलन्नाटकम् ॥

—o—

तृतीयोऽङ्कः ॥

(ततःप्रविशति कुशानादाय यजमानशिष्यः)

शिष्यः—अहो महानुभावः पार्थिवोदुष्यन्तः । प्रविष्टमात्रएवाश्रमंतत्रभवतिराजनि निरुपद्रवानिनः कर्माणि प्रवृत्तानि भवन्ति ।

का कथाबाणसंधाने ज्याशब्देनैवदूरतः । हुंकारेणैव धनुषः स हि विघ्नानपोहति ॥ १ ॥

यावदिमान्वेदिसंस्तरणार्थं दर्भान्नृत्विग्भ्य उपनयामि । (परिक्रम्यावलोक्य च आकाशे ।) प्रियंवदे, कस्येदमुशीरानुलेपनं मृणालवन्तिच नलिनीपत्राणिनीयन्ते। (आकर्ण्य ।) किंब्रवीषि । आतपलंघनाद्बलव दस्वस्था शकुन्तला । तस्याः शरीरनिर्वापणायेति । तर्हि त्वरितं गम्यताम् । सखि सा खलु भगवतः कण्वस्यकुलपतेरुच्छ्वासितम् । अहमपितावद्वैतानिकं शान्त्युदकमस्यै गौतमीहस्तेविसर्जयिष्यामि ।

(इति निष्क्रान्तः ।)

* विष्कम्भकः ।

---

* सुधाकरे-तत्रविष्कम्भकोभूत भाविवस्त्वंशसूचकः । इति ।

श्रीगणेशाय नमः ॥

अभिज्ञानशकुन्तला नाटक ॥

तीसरा अङ्क ।

(कुशा हाथमें लिये कण्वका चेला आया ।)

चेला—अहा दुष्यन्त का कैसा आतङ्क है कि जिसके चरण वनमें आतेही हमारे सब यज्ञकर्म्म निर्विघ्न होने लगे ।

दोहा—

धनुवाके टङ्कोर से विघ्न भये सब नाश ।
बानतानते क्या कथा पूरण सबकी आश ॥ १ ॥

अब चलूं ये दाभ वेदी पर बिछाने के लिये यज्ञ करनेवाले ब्राह्मणोंको देने हैं ॥

(फिरकर और देखकर ।) हे प्रियंवदा ! किसके लिये उशीरका लेप, और कमल के पत्ते लिये जाती है ।

(कान लगाकर सुनता हुआ ।)

क्या कहा कि धूप लगने से शकुन्तला बहुत व्याकुल होगई है ।

उस के लिये ठण्ढाई लिये जातीहूँ अच्छा तौ दौड़ी जा । वह कन्या कण्व का प्राणहै । मैं भी गौतमी के हाथ यज्ञमन्त्र का पढ़ा जल भेजूंगा ।

(बाहरगया ।)

*(विष्कम्भक समाप्त हुआ ।)

---

* लक्षण सुधाकर में । विष्कम्भक भूत भविष्यत् काल के अंश की वस्तु का जनानेवाला होना है ॥

मूलम्

(ततःप्रविशतिकामायमानावस्थो राजा ।)

राजा-(निश्वस्य ।)

जानेतपसो वीर्यं साबालापरवतीति मे विदितम् ।
अलमस्मि ततोहृदयं तथापिनेदंनिवर्तयितुम् ॥ २॥

(मदनबाधां निरूप्य ।)

भगवन् कुसुमायुध । त्वयाचन्द्रमसाच विश्वसनीया भ्यामतिसंधीयते कामिजनसार्थः ।

कुतः ।

तव कुसुमशरत्वं शीतरश्मित्वमिंदोर्द्वयमिदमयथार्थं दृश्यते मद्विधेषु ॥ विसृजति हिमगर्भैरग्निमिन्दुर्मयूखैस्त्वमपि कुसुमबाणान्वज्रसारीकरोषि ॥ ३ ॥

(परिक्रम्य ।)

क्वनुखलुसंस्थिते कर्मणिसदस्यैरनुज्ञातः श्रमक्लान्तमात्मानं विनोदयामि ।

(निःश्वस्य ।) किंनुखलुमेप्रियादर्शनादृते शरणमन्यत् । यावदेनामन्विष्यामि । (सूर्यमवलोक्य ।) इमामुग्रातपवेलां प्रायेण लतावलयवत्सुमालिनीतीरेषु ससखीजनाशकुन्तला गमयति । तत्रैवतावद्गच्छामि (परिक्रम्य । संस्पर्शंरूपयित्वा ।) अहोप्रभातसुभगोयमुद्देशः ।

टीका

(आसक्त मनुष्योंकीसी दशा बनाये राजा आया।)

राजा—(श्वास मारकर।)

सोरठा—

जाना तपका जोर प्यारी परवश जानता।
चाहे सो हो शोर मन न हटाया मम हटे॥ २ ॥

(कामदेव का दुःख निरूपण करके।)

हे भगवन्, कुसुमायुध, तैनें और चन्द्रमा ने विरही जनों को अच्छीतरह ठगाहै।

काहे से।

कवित्त—

कामक बाण बखानत फूल रु चन्दक शीतल तेज बतावैं।
सब झूठ बखानी कहानी यही कविता कविकोविद झूठजतावैं॥
यहवज्र समान जु बानचढ़ावत काम हमें भि तौ मार हलावै।
आग अँगार बनाय कलानिधि हमरे तनको यह आज जलावै ३॥

(फिरकर।) हाय जब यज्ञ समाप्त होगा तब ऋषियों से बिदाहोकर कहां अपने दुःखी जीवको बहलाऊंगा।

(ठण्ढी श्वास लेकर।)

प्रिया के दर्शन विना मुझे कोई धीरज देने वाला नहीं है अब उसी को ढूंढू (ऊपर देखकर।) इस धूप को कहीं प्यारी मालिनी के तटपर लता कुञ्जों में सखियों के साथ बिताती होगी।

(स्पर्श को निरूपण करके।)

अहो परमात कासा सुहावना समय है।

मूलम्

शक्यमरविन्दसुरभिः
कणवाही मालिनीतरङ्गाणाम् ॥
अङ्गैरनंगतप्तै
रविरलमालिंगितुंपवनः ॥ ४ ॥

(परिक्रम्यावलोक्यच ।)

अस्मिन् वेतसपरिक्षिप्तेलतामण्डपे सन्निहितया तयाभवितव्यम् ॥ (अधोविलोक्य ।) तथाहि ।

अभ्युन्नता पुरस्तादवगाढा जघनगौरवात् ॥ पश्चात्तुद्वारेस्य पांडुसिकतेपदपंक्तिर्दश्यतेभिनवा ॥ ५ ॥

यावद्विटपान्तरेणावलोकयामि । (परिक्रम्य । तथा कृत्वा । सहर्षम् ।)

अयेलब्धं—नेत्र निर्वाणम् । एषामेमनोरथप्रियतमा सुकुसुमास्तरणं शिलापट्टमधिशयानासखीभ्यामन्वास्यते । भवतुश्रोष्याम्यासां विस्रम्भकथितानि

(इति विलोकयन्स्थितः ।)

(ततःप्रविशति यथोक्तव्यापारासह सखीभ्यांशकुन्तला ।)

सख्यौ—(उपवीज्य सस्नेहम्) हला शकुन्तले, अपिसुखयतितेनलिनीपत्रवातः ।

शकुन्तला—किंवीजयतो मांसख्यौ ।

टीका

छन्द—

मन्द मन्द सुगन्धि शीतल पवन चलती है भली।
मालिनी के तीरको छूके सुगन्धी ले चली॥
बिन देहसे जो ये दही देही को छूती हे अली!।
हाहा प्रिया के योगमें देही हमारी है जली॥ ४॥

(फिरकर और चित्त लगाये देखकर।)

प्यारी इस बेलचढ़ी बेतकी कुटी में बैठी होगी।

(नीचे देखके।) ऐसेही।

(नाटकीयध्वनि)

चलत चलत पद दबत दबत यह पीछे से देखो। कुछ उठत उठत पद आगे से देखो॥ चमक चमक गम गमक गमक पदचिह्न बने देखो। लचक लचक सच हिचक २ पद बालूमें देखो॥ ५॥

बेलके समीप छुपा देखूं। (फिर कर और देखके खुशी से।)

अहो मिला नेत्रों का फल। मनभावनी उस पटिया पर फूल बिछाये पौढ़ी है सखी सेवा में खड़ी हैं अब चाहे सो हो। इन के मतेकी बातें सुनूंगा।

(खड़ाहोकर गहरी दृष्टिसे देखता हुआ।)

(दोनों सखियों समेत शकुन्तला दिखाई दी।)

दोनोंसखी—(पङ्खा झलकती हुई प्यार से।)

हे सखी! शकुन्तला हम कमल के पत्तों से ब्यार करती हैं तेरे शरीर को सुख देती हैं या नहीं।

शकुन्तला—क्यों हमें हवा करती हो सखियो!।

मूलम्

सख्यौ—विषादं नाटयित्वा परस्परमवलोकयतः।
राजा—बलवदस्वस्थशरीरा शकुन्तला दृश्यते।

(सवितर्कम्)

तत्किमयमातपदोषः स्यात्। उत यथा मे मनसि वर्तते।

(साभिलाषं निर्वर्ण्य।)

अथवा कृतं संदेहेन।

स्तनन्यस्तोशीरं शिथिलितमृणालैकवलयं प्रियायाः साबाधं किमपि कमनीयं वपुरिदम्॥ समस्तापः कामं मनसिजनिदाघप्रसरयोर्नतु ग्रीष्मस्यैवं सुभगमपराद्धं युवतिषु॥ ६॥

प्रियंवदा—(जनांतिकम्।)

अनसूये! तस्य राजर्षेः प्रथमदर्शनादारभ्य पर्य्युत्सुकेव शकुन्तला। किंनु खलु तस्यास्तन्निमित्तोऽयमातङ्को भवेत्।

अनसूया—सखि! ममापीदृश्याशंका हृदयस्य। भवतु। पृच्छामि तावदेनाम्।

(प्रकाशम्।)

सखि प्रष्टव्यासि किमपि। बलवान् खलु ते सन्तापः।

शकुन्तला—(पूर्वार्द्धेन शयनादुत्थाय।)

टीका

(दोनोंसखी दुखती सी आपस में देखती हुई)॥
राजा—हैं इसकी तो ये दशा हो रही है।

(शोच में डूबासा।)

तौ यह क्या धूपकी सताई है या मेरे मनमें है वही बात है। (अभिलाषा सहित विचारके।) अथवा मेरा सन्देहही है।

कवित्त—

प्यारी के लेप लगा कुचमें भि उशीरा का सुन्दर मालुम देता। कञ्ज के नालका कंगन है खिसक खिसक कर अब यह देता॥ यह रोगी भी देह भली दिखती पर संशय एक यही मम चेता। यह तापका ताप कि काम का ताप प्रिया मम जासु भई है अचेता॥ ६॥

प्रियंवदा—(हौले अनसूया से।)

हे अनसूया,! पहिले उस राजर्षि के दर्शन के दिनसे लेके आजतक इसकी दशा यह भई है कहीं वही रोग तो इसे नहीं है
अनसूया—मेरे मन में यही भासती है। अब यही है कि इस से पूछना चाहिये।

(प्रकट।)

सखि! तू पूछने के योग्य है कि तेरे बड़ा सन्ताप है।
शकुन्तला—(फूलोंकी सेजसे थोड़ी सी उठ कर।)

मूलम्

हला, किंवक्तुकामासि ।

अनसूया--हला शकुंतले, अनभ्यंतरे खल्वावांमदनगत स्य वृत्तान्तस्य । किंतुयादृशीतिहासनिबंधेषुकामाय मानानामवस्था श्रूयते तादृशीं तव पश्यामि । कथ य । किंनिमित्तंतेसंतापः । विकारं खलु परमार्थतोऽ ज्ञात्वानारम्भः प्रतीकारस्य ।

राजा--अनसूयामप्यनुगतो मदीयस्तर्कः नहिस्वाभिप्रा येणदर्शनम् ।

शकुन्तला-(आत्मगतम् ।) बलवान् खलुमेऽभिनिवे शः । इदानीमपिसहसैतयोर्नशक्नोमि निवेदयितुम् ।

प्रियंवदा-सखिशकुन्तलेसुष्ठ्वेषाभणाति । किमात्मन आतङ्कमुपेक्षसे । अनुदिवसंखलुपरिहीयसेऽङ्गैः । के वलं लावण्यमयीछायात्वां न मुञ्चति ।

राजा--अवितथमाह प्रियंवदा । तथाहि ।

क्षामः क्षामकपोलमाननमुरः काठिन्यमुक्तस्तनं
मध्यःक्लान्ततरः प्रकामविनतावंसौ छविःपाण्डुरा । शो
च्याचप्रियदर्शनाच मदनक्लिष्टेयमालक्ष्यते पत्राणामिव
शोषणेन मरुतास्पृष्टालतामाधवी ॥ ७॥

शकुन्तला--सखि, कस्यवान्यस्यकथयिष्यामि ।
आयासयित्रीदानीं वांभविष्यामि ।

उभे--अतएव खलुनिर्बन्धः । स्निग्धजनसंविभक्तंहिदुः खंसह्यवेदनंभवति ।

टीका।

सखि, कुछ कहना चाहती है।

अनसूया—सखी हम तेरे हृदयकी तो क्या जानें। पर जैसी दशा लगन लगे मनुष्योंकी कहानियों में सुनी है वैसी तेरी दिखाई देती है। तूही कहदे तुझे क्या रोग है। क्योंकि जबतक मरम न जाने बैद्य औषधि भी नहीं करसक्ता है।

राजा—मेरे मनमें भी यही था। जो अनसूया कहती है।

शकुन्तला—(हौले से आपही आप।) मेरी व्यथा तो भारी। परन्तु इसका कारण तुरन्तही न कहदूंगी।

प्रियंवदा—हे शकुन्तला, यह अनसूया भली कहती है। तू अपने रोग को बढ़ने मत दे। दिन पर दिन तू दुबली होती जाती है। अब केवल स्वरूपही रहगया है।

राजा—प्रियंवदा ने सत्य कहाहै। ऐसेही।

कवित्त—

सूखत कपोल और दुर्बल देहभयी कटिअतिछीन पड़ी यह प्यारी।
कन्धेझुके और पीला पड़ारँग अंग शिथिल प्रियदृष्टि निहारी॥
काम जलाय बनाई भली तौ भी मुझको यह अधिक पियारी।
जिमि सूखिगये सब पत्र चमेलीके आपहु सूखत वायुकी मारी॥७॥

शकुन्तला—सखी तुम से न कहूंगी तौ किससे कहूंगी।

तुम्हीं को दुःख देऊंगी।

प्रियंवदा—प्यारी इसी से तौ हम हठ करके पूछती हैं कि। हितूजनोंको बताने से दुःख घटताहै।

मूलम्

राजा--पृष्टाजनेनसमदुःखसुखेनबाला नेयंनवक्ष्यतिम
नोगतमाधिहेतुम् ॥ दृष्टोविवृत्यबहुशोऽप्यनयासतृ
ष्णमत्रान्तरेश्रवणकातरतांगतोस्मि ॥ ८ ॥

शकुन्तला--सखि,यतःप्रभृतिममदर्शनपथमागतः सत
पोवनरक्षिता राजर्षिः ततआरभ्यतद्गतेनाभिलाषेणै
तदवस्थास्मिसंवृत्ता ।

राजा--(सहर्षम् ।) श्रुतंश्रोतव्यम् ।

स्मरएवतापहेतुर्निर्वापयितासएवमेजातः । दिवस
इवाभ्रश्यामस्तपात्यये जीवलोकस्य ॥ ९ ॥

शकुन्तला--तद्यदि वामनुमतंतदातथा वर्तेथांयथातस्य
राजर्षेरनुकम्पनीयाभवामि । अन्यथा वश्यंमेसिञ्चतं
तिलोदकम् ।

राजा--संशयच्छेदिवचनम् ।

प्रियंवदा--(जनान्तिकम् ।) अनसूये दूरगतमन्मथाक्ष
मेयं कालहरणस्य यस्मिन् बद्धभावैषासललामभू
तः पौरवाणाम् । तद्युक्तमस्या अभिलाषोऽभिनन्दि
तुम् ॥

अनसूया--तथायथाभणसि ।

टीका

राजा—

दोहा—

सुख दुखकी साझिन सखी पूछतहैं अब याहि।
मनकी बात सभी कहै मैंभी सुनियों ताहि॥ ८॥

शकुन्तला—हे सखी! जब से मेरे नेत्रों के आगे इस तपोवन का रखवाला चतुर राजर्षि आया तभी से मेरा मन उसके वश होकर इस दशाको पहुँचा है।

राजा—सुननेयोग्य था सो सुन लिया।

कवित्त—

मेरी व्यथा क है कारण मन्मथ ताने व्यथा यह दूर भगाई।
ग्रीष्मकाधूप सतावतहै रविने जल शोखिके आग लगाई॥
फिर सो वह भानु भला बरसे जगको सुखदेतभला दिखलाई।
तैसेही ममदुख दूरगया मन्मथने करि यह मोसों भलाई॥ ९॥

शकुन्तला—जो कुछ दोष न समझो तो ऐसा उपाय करो जिससे वह राजर्षि फिर मिले जो तुम ऐसा न करना चाहो तो मुझे तिलाञ्जलिदो।

राजा—इस वचनसे मेरा सब संशय मिटगया।

प्रियंवदा—(होले अनसूया से) इस रोगकी औषधि मिलना दुर्लभहै और रोग ऐसा है कि इस में बिलम्ब न होना चाहिये इस से जहांतक बुद्धि चलै वहां तक उपाय करो लगन तो इस की बड़ाई के योग्य है क्योंकि वह भी पुरुवंश भूषणहै।

अनसूया—तू सत्य कहती है।

मूलम्

प्रियंवदा--(प्रकाशम् ।) सखिदिष्ट्यानुरूपस्तेऽभिनिवेशः। सागरमुज्झित्वाकुत्रवा महानद्यवतरति। क इदानींसहकारमन्तरेणातिमुक्तलतांपल्लवितांसहते।

राजा--किमत्र चित्रं यदि विशाखे शशाङ्कलेखामनुवर्तेते

अनसूया--कःपुनरुपायोभवेद्येनाविलंबितम् निभृतंचसख्यामनोरथं संपादयावः।

प्रियंवदा--निभृतमितिचिन्तनीयंभवेत् । शीघ्रमितिसुकरम्॥

अनसूया--कथमिव।

प्रियंवदा--ननु,सराजर्षिरेतस्यां स्निग्धदृष्ट्यासूचिताभिलाष एतान्दिवसान्प्रजागरकृशोलक्ष्यते।

राजा--सत्यमित्थंभूत एवास्मि। तथाहि।

इदमशिशिरैरन्तस्तापाद्विवर्णमणीकृतं निशिनिशि
भुजन्यस्तापाङ्गप्रसारिभिरश्रुभिः। अनभिलुलितज्या
घाताङ्कं मुहुर्मणिबंधनात्कनकवलयंस्रस्तंस्रस्तं मया
प्रतिसार्यते॥ १०॥

प्रियंवदा--(विचिंत्य।) हलामदनलेखोस्यक्रियताम्। इमंदेवप्रसादस्यापदेशेनसुमनोगोपितंकृत्वा तस्यहस्तंप्रापयिष्यामि।

अनसूया--रोचतेमेसुकुमारप्रयोगः किंवाशकुन्तला भणाति।

टीका

प्रियंवदा-(प्रकट) सखि बड़ी बधाई है। कि तेरे सदृश में तेरा मन उलझा। कौनसी बड़ी नदी समुद्र छोड़ के कहीं चली जाती है। कौन आम के बिना नये पत्तेवाली बेलको अपने पर चढ़ाता है।

राजा-चन्द्रमा विशाखा नक्षत्र में आजाय तो क्या आश्चर्य है।

अनसूया-कौन ऐसा उपायहै कि गुप्त रखकर जिससे सखी का शीघ्रही मनोरथ पूरा करें।

प्रियंवदा-उपायका गुप्त रखना तो कुछ कठिन नहीं है परन्तु तुरन्त मिलना दुर्लभहै।

अनसूया-यह कैसे।

प्रियंवदा-जिस समय प्रथमही उस राजर्पि ने इस को स्नेहदृष्टिसे देखा जब मैं जान गई थी कि उसका भी मन इस पर आसक्त हुआ अब दिखाता है कि वह भी इसी में चित्त लगाये रात-भर न सोने से दुबला और पीला पड़गया है।

राजा-हो तो ऐसाही गयाहूं। ऐसेही।

दोहा-

आंशू गिर भुजबन्द यह फीके हैं सब रत्न।
रैन चैन सोता नहीं क्या कीजै अब यत्न॥ १०॥

प्रियंवदा-(शोचके।) हे सखी अनसूया! मेरे विचार में यह आता है कि एक प्रीतिपत्र लिखना चाहिये। फूलों में छुपाकर प्रसाद के मिससे राजा को देना चाहिये।

अनसूया-सखी यह उपाय बहुत उत्तम है। या शकुन्तला कहै सोही ठीकहै।

मूलम्

शकुन्तला--कोनियोगोविकल्प्यते ।

प्रियंवदा--तेनह्यात्मनउपन्यासपूर्वं चिन्तय तावल्ललित पदबन्धनम् ।

शकुन्तला--हला,चिन्तयाम्यहम् । अवधीरणभीरुपुनर्वेपतेमेहृदयम् ।

राजा--(सहर्षम् ।)

अयंस ते तिष्ठति संगमोत्सुको विशंकसे भीरु यतोऽव धीरणाम् ॥ लभेतवाप्रार्थयितानवाश्रियं श्रियादुरापः कथमीप्सितो भवेत् ॥ ११ ॥

सख्यौ--आत्मगुणावमानिनि क इदानीं शरीरनिर्वापयित्रीं शारदींज्योत्स्नांपटान्तेन वारयति ॥

शकुन्तला--(सस्मितम् ।) नियोजितेदानीमस्मि (इत्युपविष्टा चिन्तयति ।)

राजा--स्थानेखलुविस्मृतनिमेषेणचक्षुषाप्रियामवलोकयामि । यतः ।

उन्नमितैकभ्रूलतमाननमस्याःपदानिरचयंत्याः । कण्टकितेनप्रथयतिमय्यनुरागंकपोलेन ॥ १२ ॥

शकुन्तला--हला, चिन्तितंमयागीतवस्तु । नखलुसंनिहितानि पुनर्लेखनसाधनानि ।

प्रियंवदा---एतस्मिञ्छुकोदरसुकुमारेनलिनीपत्रेनखैर्निक्षिप्तवर्णंकुरु ।

टीका

शकुन्तला-कौनसा उपाय रचा है।

प्रियंवदा-जैसी तेरी दशा होरही है वैसाही सुन्दर छन्द भी बनादे।

शकुन्तला-सखी मैं छन्द तो रचूंगी परन्तु डरती हूँ कहीं वह राजा अपमान करके फेर न दे।

राजा-(प्रसन्नता से।) छन्द।

मैं तो खड़ाहूं चाहता चाहे तुही नहिं चाहिये।
तू करै शङ्क अचङ्क झूठी सोहि तू डरती हिये॥
लक्ष्मी को जो चाहे तिसे वो ना मिले ऐसाहिये।
भलालक्ष्मी जिसेचाहे नहीं क्यों वो मिलाचाहिये॥ ११॥

दोनों-सखी तू अपने गुणों को घटा कर कहती है नहीं तो ऐसा मूर्ख कौन होगा जो सूर्य्य का ताप मिटाने वाली शीतल शरद चांदनी के रोकने के लिये अपने शिरपर कपड़ा तानै।

शकुन्तला-(मुसक्या कर।) मैं उसी बातके शोच विचारमें हूं जो तुमने कही थी।

(बैठके शोचने लगी।)

राजा-प्यारी को यही अवसर लोचन भरकर देखने का है। जिस से। दोहा-

छन्द बनाते भौं चढ़ी शोभा पुलक कपोल।
इसने मुखसे प्रीति अब स्पष्ट दिखाई खोल॥ १२॥

शकुन्तला-सखी छन्द तो मैंने बना लिया परन्तु लिखनेकी सामग्री नहीं है।

प्रियंवदा-इस तोते के उदर समान कोमल कमल के पत्ते पै अपने नखों से लिख दे।

मूलम्

शकुन्तला--(यथोक्तंरूपयित्वा ।) हला,शृणुतमिदानीं संगतार्थं नवेति ।

उभे--अवहिते स्वः ।

शकुन्तला-(वाचयति ।)

तव न जाने हृदयं ममपुनः कामो दिवापिरात्रावपि ॥
निर्घृण तपति बलीयस्त्वयि वृत्तमनोरथान्यंगानि॥१३॥

राजा-(सहसोपसृत्य ।) तपति तनुगात्रिमदनस्त्वा मनिशंमांपुनर्दहत्येव । ग्लपयति यथा शशाङ्कंनत थाहि कुमुद्वतीं दिवसः ॥ १४ ॥

सख्यौ-(सहर्षम् ।) स्वागतमविलंबिनोमनोरथस्य ।

(शकुन्तलाभ्युत्थातुमिच्छति ।)

राजा-अलमलमायासेन ।

संदष्टकुसुमशयनान्याशुक्लान्तविसभङ्गसुरभीणि ।
गुरुपरितापानिनतेगात्राण्युपचारमर्हन्ति ॥ १५ ॥

अनसूया-इतःशिलातलैकदेशमलंकरोतु वयस्यः। (राजोपविशति । शकुन्तलासलज्जातिष्ठति ।

प्रियंवदा-द्वयोर्ननु युवयोरन्योन्यानुरागः प्रत्यक्षः । सखीस्नेहोमां पुनरुक्तवादिनींकरोति ।

टीका

शकुन्तला-(लिखतीभई) सखियो सुनो इस छंदमें अर्थ बनाया नहीं
दोनों-हम सावधान हैं ।
शकुन्तला-(बांचतीहुई ।)
दोहा-तो मनकी जानति नहीं अहो मीत सुख दैन ।
पर मो मनको करत है मैन महा बेचैन ॥
सोरठा-लाग्यो तोसो नेह रैनदिना कलना परै ।
प्रेम तपावत देह तन मन अपनो देचुकी ॥ १३ ॥
राजा-(झटपट आगे बढ़कर ।)
दोहा-केवल तोहितपावता अहो मदन सुकुमारि ।
भस्म करत पर मोहिं यो तू चित देखि बिचारि ।
सोरठा-भानुमंद कर देत केवल गंध कुमोदिनिहि ।
पर शशिमंडल श्वेत होत प्रातके दरशते ॥ १४ ॥
(शकुन्तला आदर देने को उठने की इच्छा करती भई ।)
राजा-रहो रहो मेरे लिये क्यों परिश्रम करती हो ।

सोरठा-

ताप सताया देह कुमलावत है सेज को ।
मुरझे कंगन तेह कष्ट सहन नहिं योग्य है ॥ १५ ॥
अनसूया-महाराज आप भी उसी चटानपै विराजिये जहाँ शकुन्तला है ।
(राजा बैठगया । शकुन्तला लज्जा को प्राप्त होती भई ।)
प्रियंवदा-यद्यपि तुम दोनोंकी प्रीति प्रत्यक्षहै । पर तौ भी सखी की प्रीति मेरे को कुछ कहाया चाहती है ।

मूलम्

राजा—भद्रेनैतत्परिहार्य्यम् । विवक्षितंह्यनुक्तमनुतापं जनयति।

प्रियंवदा—आपन्नस्यविषयनिवासिनो जनस्यार्तिहरेण राज्ञाभवितव्यमित्येषयुष्माकंधर्मः।

राजा—नास्मात्परम्।

प्रियंवदा—तेनहीयमावयोः प्रियसखी त्वामुद्दिश्येदमव स्थान्तरंभगवतामदनेनारोपिता । तदर्हस्यभ्युपप त्त्या जीवितं तस्या अवलंबितुम्।

राजा—भद्रेसाधारणोऽयंप्रणयः।सर्वथाऽनुगृहीतोऽस्मि।

शकुन्तला—(प्रियंवदामवलोक्य।) हला, किमन्तःपुर विरहपर्य्युत्सुकस्यराजर्षेरुपरोधेन।

राजा—

इदमनन्यपरायणमन्यथा
हृदयसंनिहितेहृदयंमम।
यदिसमर्थयसेमदिरेक्षणे
मदनबाणहतोऽस्मिहतः पुनः॥ १६॥

अनसूया—वयस्यबहुवल्लभाराजानःश्रूयन्ते । यथानौप्रि यसखीबन्धुजनशोचनीयानभवातितथानिर्वर्तय।

राजा—भद्रेकिंबहुना।

परिग्रहबहुत्वेऽपिद्वेप्रतिष्ठेकुलस्यमे। समुद्रवसनाचो र्वीसखीचयुवयोरियम्॥ १७॥

टीका

राजा–सुंदरी जो कुछ कहा चाहती हो सो निधड़क कहो छुपाओ मत। क्योंकि कहने को मनमें आवे और न कहाजाय तो पीछे चित्त को खेद करता है।

प्रियंवदा–प्रजाको दुःख होतो राजा का धर्म है कि उस दुःख को मिटावे।

राजा–सत्य है इस से बड़ा कोई धर्म राजा के–लिये नहीं है।

प्रियंवदा–हमारी सखी को तुम्हारी लगन ने इस दशाको पहुँचा दिया है। अब तुम्हीं इस योग्यहो कि इसे जीवदान दो।

राजा–हे सुंदरी प्रीति तो हमारी परस्परहै। परन्तु इसमें सब विधि कृतार्थ मैंही हूँ।

शकुन्तला–(प्रियंवदा को देखकर) राजा को क्यों बिलमातीहो उनका मन रनवास में धरा होगा।

राजा–

मनलगा तुहि में नहिं और में।
अरि हृदेतु लगी मन मोर में॥
यदि तु और कहै कुछ मो यहूँ।
मदन बाण मरे कु तु मारती॥ १६॥

अनसूया–हे सज्जन हम यह सुनते हैं कि राजा बहुत रानियों के प्यारे होते हैं तुम हमारी सखी का ऐसा निर्वाह करना जिससे हमको दुःख न पहुँचे॥

राजा–हेसुन्दरी अधिक क्या कहूँ।

रानि ज्यादाभि होनेपे दोहिको मानताहूँ मैं! समुद्र कपड़ा पृथ्वी औ सखी तुम्हरी यही॥ १७॥

मूलम्

उभे–निर्वृतेस्वः ॥

प्रियंवदा–(सदृष्टिक्षेपम् ।) अनसूयेयथैष इतोदत्तदृष्टिरुत्सुकोमृगपोतकोमातरमन्विष्यति । एहि । संयोजयाव एनम् । (इत्युभेप्रस्थिते ।)

शकुन्तला–हलाअशरणास्मि । अन्यतरायुवयोरागच्छतु ।

उभे–पृथिव्यायःशरणंस तवसमीपेवर्तते ।

(इतिनिष्क्रान्ते ।)

शकुन्तला--कथंगते एव ।

राजा--अलमावेगेन । नन्वयमाराधयिता जनस्तव समीपे वर्तते ।

किं शीतलैः क्लमविनोदिभिरार्द्रवातान्संचारयामि नलिनीदलतालवृन्तैः । अङ्के निधायकरभोरुयथासुखंते संवाहयामिचरणावुत पद्मताम्रौ ॥ १८ ॥

शकुन्तला--नमाननीयेष्वात्मानमपराधयिष्ये । (इत्युत्थायगंतुमिच्छति)

राजा–सुंदरि अनिर्वाणोदिवसः । इयंचते शरीरावस्था ।

उत्सृज्यकुसुमशयनंनलिनीदलकल्पितस्तनावरणम् । कथमातपे गमिष्यासि परिबाधापेलवैरंगैः ॥ १९ ॥

(इतिबलादेनां निवर्तयति ।)

शकुन्तला–पौरवरक्षाविनयम् । मदनसंतप्तापिनखल्वात्मनःप्रभवामि ।

टीका

दोनोंसखी–तो अब हमारी चिन्ता मिटी।

प्रियंवदा–(सैनदेकर) हे अनसूया ! हरिणका बच्चा अपनी माको ढूँढ़ता फिरता है। चलो। उसे मिला दें। (दोनों चलीं)

शकुन्तला–सखियो मैं अकेली रही जाती हूं। तुममें से एकतो मेरे पास रहो

दोनों सखी–अकेली क्यों है जो सब पृथ्वीका रखवाला है सो तो तेरे पास बैठा है। (दोनों गईं।)

शकुन्तला–हाय हाय मुझे अकेली छोड़कर तुम को कैसे जाते बनता है।

राजा–प्यारी कुछ चिन्ता मत कर मैं तेरा टहलुआ बनाहूं।

छन्द–

ले कमलपात हवाकरूं जिससे परिश्रम दूरहो।
या गोदमें लेके चरणदाबौं प्रिया सोती रहौ॥
पद तो बने बहुलालहैं जिसमें रँगे रँगताम्रहो।
सेवाकरूं मैंहूं सुखी प्यारी सुखी तुम होरहो १८॥

शकुन्तला–मैं बड़ों का अपराध न लूंगी।

(उठकर चलने को मन किया।)

राजा–हे सुन्दरी ! दुपहरी कड़ी है और तेरी यह दशा हो रही है।

दोहा–पुष्पशयन अब छोड़िकै कस जइहै तू धूप।
कुचा छिपाये पत्रसे कमलनके अतिरूप॥ १९॥

(खैंचकर बिठाने लगा -)

शकुन्तला– हे पुरुवंशी नीति का पालन करो। यद्यपि मैं कामसे पीड़ितहूं पर तौभी पराधीनहूं।

मूलम्

राजा–भीरु अलंगुरुजनभयेन।

दृष्ट्वा तेविदितधर्मा तत्रभवान्नदोषंग्रहीष्यति कुलपतिः। अपिच।

गान्धर्वेण विवाहेन बह्व्योराजर्षिकन्यकाः॥ श्रूयन्तेपरिणीतास्ताः पितृभिश्चाभिनन्दिताः॥ २०॥

शकुन्तला–मुञ्चतावन्माम्। भूयोऽपिसखीजनमनुमानयिष्ये।

राजा–भवतु मोक्ष्यामि।

शकुन्तला–कदा।

राजा–

अपरीक्षितकोमलस्य यावत्कुसुमस्येवनवस्यषट्पदेन। अधरस्यपिपासतामयातेसदयंगृह्यतेरसोऽस्य२१॥

इतिमुखमस्याः समुन्नमयितुमिच्छति। शकुन्तला परिहरतिनाट्येन।)

(नेपथ्ये।)

चक्रवाकवधूः आमन्त्रयस्वसहचरम्। उपस्थितारजनी।

शकुन्तला–(ससम्भ्रमम्) पौरव असंशयं ममशरीरवृत्तान्तोपलम्भायार्या गौतमीतएवागच्छति।

यावद्विटपान्तरितोभव॥

राजा–तथा (इत्यात्मानमावृत्यतिष्ठति।)

(ततःप्रविशतिपात्रहस्तागौतमीसख्यौच।)

टीका

राजा—हे कामिनी ! गुरुजनों का कुछ भय मत कर।

काहे से कि कण्व धर्म्म को जानते हैं तुझे दोष न देंगे।

गान्धर्व्व रीतिसे ब्याही बहु राजर्षि कन्यका ॥ सुनते हैं ब्याहि ऐसेही तिनके तात खुशी भये॥ २०॥

शकुन्तला—अञ्चल छोड़ दो। मैं कुछ अपनी सखी से बात कह आऊं।

राजा—अच्छा छोडूंगा।

शकुन्तला—कब।

राजा—

दोहा—

विना परीक्षा भ्रमर जिमि नये कुसुम रसलेत।
इसके होठ पियाससे सुन्दर रस में लेत॥ २१॥

(राजा मुख उठाता है शकुन्तला हटाती है।)

(नेपथ्य में।)

हे चकवाकी प्यारी बुला प्यारे को आई रात।

शकुन्तला—(घबराकर।) हे पुरुवंशी,अवश्य गौतमी आर्या मेरे शरीरका वृत्तान्त पूछने इधरही आती है।

जबतक वृक्षों में छिप जावो।

राजा—जो तू कहै (वृक्षों के ओटमें छुप गया।

(हाथ में कमण्डलु लिये गौतमी आई।)

मूलम्

सख्यौ—इतइत आर्यागौतमी ।

गौतमी—(शकुन्तलामुपेत्य ।) जाते अपिलघुसन्तापानितेऽङ्गानि ।

शकुन्तला—अस्तिमेविशेषः ।

गौतमी—अनेनदर्भोदकेन निराबाधमेवतेशरीरंभविष्यति । (शिरसिशकुन्तलामभ्युक्ष्य ।) वत्सेपरिणतो दिवसः । एहि । उटजमेवगच्छामः ।

(इति प्रस्थिताः ।)

शकुन्तला—(आत्मगतम् ।) हृदयप्रथममेवसुखोपनतेमनोरथेकातरभावन्नमुञ्चसि । सानुशयविघटितस्यकथंतेसांप्रतंसन्तापः । (पदान्तरेस्थित्वा । प्रकाशम् ।) लतावलयसन्तापहारकआमंत्रयेत्वांभूयोऽपिपरिभोगाय ।

(इतिदुःखेननिष्क्रान्ताशकुन्तलासहेतराभिः ।)

राजा—(पूर्वस्थानमुपेत्य । सनिःश्वासम् ।) अहोविघ्नवत्यः प्रार्थितार्थसिद्धयः । मयाहि ।

मुहुरंगुलिसंवृताधरोष्ठंप्रतिषेधाक्षरविक्लवाभिरामम् ॥ मुखमंसविवर्तिपक्ष्मलाक्ष्याः कथमप्युन्नामितंनचुम्बितं तु ॥ २२ ॥

क्वनुखलुसंप्रतिगच्छामि । अथवा । इहैव प्रियापरिमुक्तमुक्तेलतावलये मुहूर्तंस्थास्यामि । (सर्वतोऽवलोक्य ।)

टीका

दोनोंसखी–इधर आओ इधर गौतमी।

गौतमी–(शकुन्तला के पास जाके।) पुत्रि! तेरे शरीरका सन्ताप कुछ कम हुआ।

शकुन्तला–बहुत, कम सन्ताप है।

गौतमी–इस कुशके जल से तेरा शरीर नीरोग होजायगा। (शकुन्तला के शिरपै जल छिड़कके।) पुत्रि! अब संध्याभई। आव। घरको चलें।

(सब गईं।)

शकुन्तला–(आपही आप) हे मन तेरी आकांक्षा पूरी होगई तौभी चिन्ता न मिटी। इसका क्या होगा। (कुछ आगे चलके। प्रकट।) हे सन्तापहरनेवाली लताओ! मैं तुमसे विनती करतीहूं कि फिरभी सुख दिखाना।

(शकुन्तला साथ सखियों के दुःख से गई।)

राजा–(उसी स्थानपर आके और (गहरी साँसभरकर।) सत्य है जिस बातका मनोरथ किया जाय उसमें विघ्न अवश्य होताहै। मैंने भी।

सोरठा–

मुखहि छिपावति सोय गदगद बाणी बोलती।
मुखको लिया उठाय पर मैंने चूमा नहीं॥ २२॥

हाय अब मैं कहाँ जाऊँ। या प्यारी की छोड़ी बेलकुटीमें ही दो घड़ी विश्रामलूँ।

मूलम्

तस्याःपुष्पमयीशरीरलुलिताशय्याशिलायामियंक्रान्तोमन्मथलेख एषनलिनीपत्रेनखैरर्पितः। हस्ताद्भ्रष्टमिदंविसाभरणमित्यासज्जमानेक्षणो निर्गन्तुंसहसानवेतसगृहाच्छक्नोमिशून्यादपि॥ २३॥

(आकाशे।)

राजन्।

सायंतने सवनिकर्मणिसंप्रवृत्तेवेदिंहुताशनवतींपरितःप्रयस्ताः। छायाश्चरंति बहुधा भयमादधानाः संध्यापयोदकपिशाः पिशिताशनानाम्॥ २४॥

राजा—अयमयमागच्छामि।

(इतिनिष्क्रान्तः।)

। इतितृतीयोङ्कः।

टीका

(चारों ओरदेखकर ।)

कवित्व-

यह फूलन सेज बनी तिसकी जिसमें वह मोरि प्रिया सुख सोती ।
प्यारीने पत्र लिखा जिस में वह कंजधरा जिमि अक्षर मोती ॥
अब और पड़ा यह कंगन खुलअरु वेतलता तिहुँ शून्यहि रोती ।
यद्यपि शून्यरही कुटिया तब भी मुझसे नहिं छोड़िहिजाती॥२३॥

(आकाशमें)

हे राजन् ! ।

संध्याभये यज्ञकरैं जभी तो घूरैं फिरैं यह पिशाच भयादि लागै । छाया फिरैं बहुतसा भय देत होते संध्या भये बदरिया जिमिलाल तैसे २४ ॥

राजा-यह मैं आताहूं ।

(बाहर गया)

इति श्रीमल्लक्ष्मीनारायणशर्मविरचितस्तृतीयोऽङ्कः ॥ ३ ॥

श्रीगणेशाय नमः ॥

अभिज्ञानशाकुन्तलन्नाटकम् ॥

—o—

चतुर्थोऽङ्कः ।

(ततः प्रविशतःकुसुमावचयंनाटयन्त्यौसख्यौ ।)

अनसूया–प्रियंवदेयद्यपिगान्धर्वेण विधिना निर्वृत्तक ल्याणा शकुन्तलानुरूपभर्तृगामिनीसंवृत्तेतिनिर्वृतं मेहृदयम् । तथाप्येतावच्चिन्तनीयम् ।

प्रियंवदा–कथमिव ।

अनसूया–अद्यसराजर्षिरिष्टिंपरिसमाप्य ऋषिभिर्विस र्जितआत्मनोनगरंप्रविश्यान्तःपुरसमागत इतोगतं वृत्तान्तंस्मरतिवानवेति ।

प्रियंवदा–विस्रब्धाभव । नतादृशाआकृतिविशेषागुण विरोधिनोभवन्ति । तातइदानीमिमंवृत्तान्तंश्रुत्वान जाने किंप्रतिपत्स्यत इति ।

अनसूया–यथाहं पश्यामि तथातस्यानुमतंभवेत् ।

प्रियंवदा–कथमिव

अनसूया–गुणवते कन्यकाप्रतिपादनीयेत्ययंतावत् प्र थमःसंकल्पः । तंयदिदैवमेव संपादयतिनन्वप्रयासे न कृतार्थोगुरुजनः ।

प्रियंवदा–(पुष्पभाजनं विलोक्य ।)

श्रीगणेशाय नमः।

अभिज्ञानशकुन्तला नाटक

चौथा अङ्क ॥

(दोनोंसखी फूलबीनती आई ।)

अनसूया—हे सखी प्रियंवदा! हमारी सहेली शकुन्तला का गान्धर्व्व विवाह हुआ पति भी समान उसी के मिला इस से हमारे मन को सुख हुआ परन्तु फिर भी चिन्ता न मिटी।

प्रियंवदा—और क्या चिन्ता रहगई।

अनसूया—आज वह राजर्षि तपस्वियों का यज्ञ पूरा कराकर अपनी राजधानी (हस्तिनापुर) को बिदा हुआहै वहां रनवास में पहुँच कर जाने यहां की सुधि रहैगी या नहीं।

प्रियंवदा—उस का विश्वास रक्खो। कि ऐसे गुणवान् मनुष्य कभी निर्ल्लज्ज नहीं होते हैं। अब चिन्ता की बात यहहै कि न जाने पिता कण्व इस वृत्तान्त को सुनकर क्या कहैंगे।

अनसूया—मेरे मनमें तो यह भासती है कि वे इस वृत्तान्त से प्रसन्न होंगे।

प्रियंवदा—क्यों।

अनसूया—इस लिये कि उनका सङ्कल्पथा कि यह कन्या किसी गुणवान् को दें सो दैवने वैसाही योग. मिला दिया फिर वे क्यों अप्रसन्न होंगे।

प्रियंवदा—(फूलों की टोकरी देख के।)

मूलम्

सखि! अवचितानि बलिकर्मपर्याप्तानिकुसुमानि।

अनसूया–ननुसख्याःशकुन्तलायाः सौभाग्यदेवतार्च नीया

प्रियंवदा–युज्यते।

(इतितदेव कर्मारभेते।)

अयमहंभोः। (नेपथ्ये।)

अनसूया–(कर्णंदत्त्वा।) सखिअतिथीनामिवानिवेदितम्।

प्रियंवदा–ननुटजसंनिहिताशकुंतला।(आत्मगतम्।) अद्यपुनर्हृदयेनासंनिहिता।

अनसूया–भवतु। अलमेतावद्भिः कुसुमैः।

(इतिप्रस्थिते।)

(नेपथ्ये।)

आःअतिथिपरिभाविनि !

विचिन्तयन्तीयमनन्यमानसातपोधनंवेत्सिनमामुप

स्थितम्॥स्मरिष्यतित्वांनसबोधितोऽपिसन्कथांप्रमत्तः

प्रथमंकृतामिव॥ १॥

प्रियंवदा–हाधिक्। अप्रियमेवसंवृत्तम्। कस्मिन्नपिपूजार्हेऽपराद्धाशून्यहृदयाशकुन्तला।(पुरोऽवलोक्य।) नखलुयस्मिन् कस्मिन्नपि। एषदुर्वासाः सुलभकोपो महर्षिः। तथाशप्त्वावेगबलोत्फुल्लयादुर्वारयागत्या प्रतिनिवृत्तःकोऽन्योहुतवहाद्दग्धुंप्रभवति।

टीका

हे सखी! जितने फूलपूजाकेलिये चाहिये उतने तो बीनचुकीं।

अनसूया–अब थोड़े से शकुन्तला से गौरीपूजा कराने के लिये और बीनले।

प्रियंवदा–योग्य है। (दोनों फूल बीनने लगीं।)

मैं आताहूं। (नेपथ्य में।)

अनसूया–(कान लगाकर।) हे सखी! ऐसा बोल जान पड़ताहै मानों कोई अतिथि आश्रम में आयाहै।

प्रियंवदा–क्या डरहै शकुन्तला वहां बनी है (आपही आप।) शकुन्तलाहै तो पर उसका मन ठिकाने नहीं है।

अनसूया–चलो इतनेही फूल बहुत हैं।

(चलदीं।)

(नेपथ्य में।)

आह अतिथि का निरादर करनेवाली।

छन्द–आया मुझे ना जानती मेरा दिया अब शापले।
तू ध्यान में बैठीहुई सोचै जिसे वह ना मिले॥
याद ना आवे उसे जिससे हि आदर ना मिले।
ज्यों जो नशेमें बातहो फिर बोध होते ना तुले॥ १॥

प्रियंवदा–हाय हाय बुरी भई। किसी तपसी का अपराध बेसुधी शकुन्तला से बन गया। (आगे देखकर।) हो ऐसे वैसे में अपराध नहीं हुआ है। यह दुर्व्वासा ऋषि फुरती से मारे क्रोधके जल्दी पाओं लौटा जाता है। इन को छोड़ और किसकी सामर्थ्य है कि शापसे अपराधी को भस्मकरदे।

मूलम्

अनसूया--गच्छपादयोः प्रणम्यनिवर्तयैनम् । यावदह मर्घोदकमुपकल्पयामि ।

प्रियंवदा--तथा । (इतिनिष्क्रान्ता ।)

अनसूया- (पदान्तरेस्खलितंनिरूप्य ।) अहो । आवेगस्खलितयागत्याप्रभ्रष्टं ममाग्रहस्तात् पुष्पभाजनम् । (इतिपुष्पोच्चयंरूपयति ।)

(प्रविश्य ।)

प्रियंवदा--सखिप्रकृतिवक्रःसकस्यानुनयं प्रतिगृह्णाति । किमपिपुनःसानुक्रोशःकृतः ।

अनसूया--(सस्मितम् । (तस्मिन्बह्वेतदपि । कथय ।

प्रियंवदा--यदानिवर्तितुंनेच्छतितदा विज्ञापितोमया । भगवन् ! प्रथमइतिप्रेक्ष्याविज्ञाततपः प्रभावस्य दुहितृजनस्यभगवतेकोऽपराधोमर्षितव्य इति ।

अनसूया--ततस्ततः ।

प्रियंवदा--ततोवचनमन्यथाभवितुंनार्हति । किंत्वभिज्ञानाभरणदर्शनेनशापोनिवर्तिष्यत इतिमन्त्रयनूस्वयमन्तर्हितः ।

अनसूया--शक्यमिदानीमाश्वासयितुम् । अस्तितेनराजर्षिणासंप्रस्थितेनस्वनामधेयाङ्कितमंगुलीयकंस्मरणीयमितिस्वयं पिनद्धम् ।

टीका

अनसूया–जा इस के चरणों में धोकदेके उलटा लेआ। तबतक मैं उनके लिये अर्घ संजोती हूँ।

प्रियंवदा–मैं जातीहूँ। (गई।)

अनसूया–(कुछ अगाड़ी चलकर पांव रपट गया।) हाय उतावली होकर मैंने फूलोंकी टोकरी गिराई। (फूल बीनने लगी।)

(आके।)

प्रियंवदा–सखी ! इनका स्वभाव बड़ा टेढ़ा है। क्रोध इतना है कि किसी भांति मनाये नहीं मानते । परन्तु तौ भी कुछ मैंने सीधे कर लिये हैं ।

अनसूया–(मुसक्याकर।) उनका यह भी बहुत है। कह कैसे सीधे किये।

प्रियंवदा–जब किसी भांति न माने तब मैंने पैरों में गिरकर यह कहा कि हे महापुरुष ! तुम को इस ने आगे नहीं देखा था इस से तुम्हारे प्रभाव को नहीं जानती थी अब इस कन्या का अपराध क्षमा करो।

अनसूया–तब क्या कहा ।

प्रियंवदा–तब बोले कि मेरा शाप झूठा नहीं होता है। परन्तु जब इसका पति अपनी मुँदरी को देखेगा तब शाप मिट जायगा यह कहकर अन्तर्धान होगये।

अनसूया–तो कुछ आशा है। क्योंकि जब वह राजर्षि चलने को हुआ तब अपनी अँगूठीकि जिसमें उसका नाम खुदाभयाथा शकुन्तला की अँगुली में पहिनादी।

मूलम्

तस्मिन्स्वाधीनोपायाशकुन्तलाभविष्यति ।

प्रियंवदा–सखिएहि । देवकार्यं तावन्निर्वर्तयावः ।

(इतिपरिक्रामतः ।)

प्रियंवदा--(विलोक्य ।) अनसूये ! पश्य तावत् । वामह
स्तोपहितवदनालिखितेवप्रियसखी । भर्तृगतयाचिं
तयात्मानमपि नैषाविभावयति । किंपुनरागन्तुकम् ।

अनसूया- प्रियंवदेद्वयोरेवननुनौ मुखएषवृत्तान्तास्तिष्ठ
तु । रक्षितव्याखलुप्रकृतिपेलवाप्रियसखी ।

प्रियंवदा--कोनामोष्णोदकेननवमालिकांसिंचति ।

(इत्युभेनिष्क्रान्ते ।)

। विष्कंभकः ।

(ततःप्रविशतिसुप्तोत्थितःशिष्यः ।)

शिष्यः-वेलोपलक्षणार्थमादिष्टोऽस्मितत्रभवताप्रवासादु
पावृत्तेनकाश्यपेन । प्रकाशंनिर्गतस्तावदवलोकया
मि । कियदवशिष्टंरजन्याइति ।

(परिक्रम्यावलोक्य च ।)

हन्तप्रभातम् । तथाहि ।

यात्येकतोऽस्तशिखरं पतिरोषधीनामाविष्कृतोऽरु
णपुरः सरएकतोर्कः । तेजोद्वयस्ययुगपद्व्यसनोदया
भ्यांलोको नियम्यत इवात्मदशान्तरेषु ॥ १ ॥

टीका।

उस को तुरन्त पहिचान भी लेगा। यही शकुन्तला के लिये अच्छा उपाय है।

प्रियंवदा—आओ अब चलें देवियों से प्रार्थना करें।

(लौट गईं।)

प्रियंवदा—(देखके।) हे अनसूया ! देख बांयें करपर कपोल धरे पति के वियोग में कैसी चित्रसी बनरही है दूसरेकी तो क्या चलाई इसे अपनी भी सुधि नहीं है।

अनसूया—हे प्रियंवदा। यह शाप की बात हमहीं तुम जानें शकुन्तलाको मत सुनाओ क्योंकि उसका स्वभाव बहुत कोमलहै।

प्रियंवदा—ऐसा कौन होगा जो मल्लिका की लहलहाती लतापर तत्ता पानी छिड़के। (दोनों गईं।)

(विष्कम्भक।) समाप्त।

(सोये, से उठकर एक कण्व का चेला आया।)

चेला—महात्मा कण्व ऋषि प्रभासतीर्थ से आगये हैं और मुझे आज्ञादी है कि देख आ रात कितनी रही। कुछ चांदना सा दिखाई देता है।

(इधर उधर फिरकर और आकाश की ओर देखकर।)

अहा यह तो प्रभातही होगया ऐसेही।

कवित्त—

रवि चन्द दिखावतहैं जगकी यह सम्पति और विपत्ति घनेरी।
यह देख कलानिधि अस्तभया रवि तो उदयाचलपै अतिनेरी॥
उदये अरु अस्तभये बढ़ती घटती छवि है इनकी बहुतेरी।
असही दुखमें सुखमें जन सज्जनको अतिधीरज टेरी॥ १॥

मूलम्

अपिच।

अन्तर्हितेशशिनिसैवकुमुद्वतीमे दृष्टिं न नन्दयति सं स्मरणीयशोभा। इष्टप्रवासजनितान्यवलाजनस्य दुःखा निनूनमतिमात्रसुदुःसह्यानि ॥ २ ॥

(प्रविश्यापटीक्षेपेण।)

अनसूया—यद्यपिनामविषयपराङ्मुखस्यापि जनस्यैतन्न विदितं तथापि तेन राज्ञा शकुन्तलायामनार्यमाचरितम्।

शिष्यः—यावदुपस्थितां होमवेलांगुरवेनिवेदयामि। (इतिनिष्क्रान्तः।)

अनसूया—प्रतिबुद्धापि किंकरिष्ये नम उचितेष्वपिनिज कार्येषुहस्तपादंप्रसरति। कामइदानींसकामोभवतु। येनासत्यसंधेजने शून्यहृदयासखीपदंकारिता। अथवादुर्वाससःकोपएषविकारयति। अन्यथाकथंसराजर्षिस्तादृशानिमन्त्रयित्वैतावत्कालस्य लेखमात्रमपिनविसृजति। तदितोऽभिज्ञानमंगुलीयकंतस्य विसृजावः। दुःखशीलेतपस्विजनेकोऽभ्यर्थ्यताम्। ननुसखीगामीदोष इतिव्यवसितापिनपारयामि प्रवासप्रतिनिवृत्तस्य तातकाश्यपस्यदुष्यंतपरिणीतामापन्नसत्त्वांशकुन्तलांनिवेदयितुम्। इत्थंगतेऽस्माभिःकिंकरणीयम्।

टीका

और भी। दोहा-

चन्द्र खिले शोभा खिली वो न कुमोदिनि सोय।
निरखत सुख नहिं देतहै जिमि वियोगमें जोय॥२॥

(झटपट जाकर।)

अनसूया-यद्यपि शकुन्तला इतनी बड़ी तपोवन में हुई है और इन्द्रियों का सुख नहीं जाना है तौभी लगन ने यह दशा उसकी करदी है। हाय राजाने कैसी अनीति इसके साथकी।

चेला-अब होमका समय हुआ गुरुसे चलकर कहना चाहिये।

(बाहरगया।)

अनसूया-रैन बीतगई मैं अभी सोते से भी नहीं उठीहूं और जो उठी भी होती तौ क्या करती हाथ पैर तो कहनेही में नहीं हैं। अब निर्दयी काम का मनोरथ पूरा हुआ कि उसने एक मिथ्यावादी राजा के वशमें हमारी सीधी सच्ची सखी को डालकर इस दशा को पहुँचायाहै। और जो यह फल दुर्व्वासा के शाप का नहीं है तौ क्या हेतुहै कि धर्म्मात्मा राजाने ऐसे वचन दे कर अब तक सन्देशा भी न भेजा अब यह उचित है या नहीं कि उस सुन्दरी को हम राजा के पास भेजें अथवा और भी कोई उपाय है जिससे हमारी प्यारी सखी का बिरह मिटै उसका तो कुछ अपराध नहीं है पिता कण्व तीर्थ करके आगये परन्तु उनसे यह बात कहने को कि शकुन्तला का विवाह राजा दुष्यन्त से होगया है और गर्भवती भी है। मेरा हियाव नहीं पड़ता है हे दैव! अब क्या उपाय करें जिससे शकुन्तला की व्यथा दूरहो।

मूलम्

(प्रविश्य ।)

प्रियंवदा—(सहर्षम् ।)
सखित्वरस्वशकुन्तलायाः प्रस्थानकौतुकंनिर्वतयितुम् ।

अनसूया—सखिकथमेतत् ।

प्रियंवदा—शृणु । इदानींसुखशयनपृच्छिका शकुन्तलासकाशंगतास्मि । यावदेनांलज्जावनतमुखींपरिष्वज्यतातकाश्यपेनैवमभिनन्दितम् । दिष्ट्याधूमाकुलितदृष्टेरपियजमानस्यपावकएवाहुतिःपतिता । वत्सेसुशिष्यपरिदत्ताविद्येवाशोचनीयासंवृत्ता । अद्येवऋषिरक्षितांत्वांभर्तुःसकाशंविसर्जयामि । इति।

अनसूया—अथकेनसूचितस्तातकाश्यपस्य ।

प्रियंवदा—अग्निशरणंप्रविष्टस्यशरीरं विनाछन्दोमय्यावाण्या (संस्कृतमाश्रित्य ।)

दुष्यन्तेनाहितंतेजोदधानाभूतयेभुवः ।
अवेहितनयांब्रह्मन्नग्निगर्भांशमीमिव ॥ ३ ॥

अनसूया—(प्रियंवदामाश्लिष्य) सखिप्रियंमेकिंत्वद्यैवशकुन्तलानीयत इत्युत्कण्ठासाधारणंपरितोपमनुभवामि । .

प्रियंवदा—सखिआवांतावदुत्कण्ठांविनोदयिष्यावः।सातपस्विनीनिर्वृताभवतु ।

टीका

(प्रियंवदा आई।)

प्रियंवदा-हर्षसे

सखी चलो शकुन्तला की बिदा का उपचार करैं।

अनसूया-सखी तू क्या कहती है।

प्रियंवदा-सुन। अभी मैं शकुन्तला से यह पूछने गईथी कि रात को चैन से सोयी या नहीं। सो वह तो शिर झुकाये बैठीथी इतने में पिता कण्व निकट आकर उससे मिले और यह शुभवचन बोले कि हे पुत्रि! बड़े मङ्गलकी बात है कि आज प्रातःकाल ब्राह्मण ने अग्निकुण्ड में आहुति दी तब यज्ञ के धुयें से यद्यपि उसकी दृष्टि धुँधुली हो रहीथी तौभी आहुति अग्नि के बीचमें पड़ी। हे पुत्रि! सुशिष्यको दई विद्याकी तरह अशोचनीय भई। आज तुम्हारी बिदा इस कुटी से करदूंगा जिसने तुम्हारा पाणिग्रहण कियाहै।

अनसूया- तौ पिता कण्व को किसने कहा।

प्रियंवदा-जब मुनि यज्ञस्थान के निकट पहुँचे तब आकाशवाणी कहगई। (संस्कृत में।)

दोहा-तेज धरा दुष्यन्त ने भूति भूमि को होय।
हे ब्रह्मन् जानों जिमि अग्निगर्भ शमि होय॥ ३॥

अनसूया-(प्रियंवदा से लिपट कर।) सखी! यह सुन कर मुझे बड़ा सुखहुआ परन्तु सखी के बिछोहका दुःखभी है इसलिये आज हमारा हर्ष शोक समान है।

प्रियंवदा-सखी को सुख होगा इससे हमको भी शोक न करना चाहिये।

मूलम्

अनसूया-तेनह्येतस्मिंश्चूतशाखावलंबिते नालिकेरसमुद्गक एतन्निमित्तमेव कालान्तरक्षमानिक्षिप्ता मयाकेसरमालिका। तदिमांहस्तसंनिहितांकुरु। यावदहमपितस्यैमृगरोचनां तीर्थमृत्तिकां दूर्वाकिसलयानीतिमङ्गलसमालम्भनानि विरचयामि।

प्रियंवदा–तथाक्रियताम्।

(अनसूयानिष्क्रान्ताप्रियंवदानाट्येनसुमनसोगृह्णाति।)

(नेपथ्ये।)

गौतमि, आदिश्यतां शार्ङ्गरवमिश्राःशकुन्तलानयनाय।

प्रियंवदा–(कर्णंदत्त्वा)

अनसूये त्वरस्व। एतेखलुहस्तिनापुरगामिनऋषयआकार्यंते। (प्रविश्यसमालम्भनहस्ता।)

अनसूया–सखिएहि। गच्छावः।

(इतिपरिक्रामतः।)

प्रियंवदा–(विलोक्य।) एषासूर्योदय एव शिखामज्जिताप्रतिष्ठितनीवारहस्ताभिः स्वस्तिवाचनिकाभिस्तापसीभिरभिनन्द्यमाना शकुन्तलातिष्ठति। उपसर्पावएताम्।

(इत्युपसर्पतः।)

(ततःप्रविशति यथोद्दिष्टव्यापारासनस्था। शकुन्तला)

तापसीनामन्यतमा–(शकुन्तलांप्रति।) जाते, भर्तुर्बहुमानसूचकं महादेवीशब्दं लभस्व।

टीका

अनसूया-मैंने इसी दिनके लिये उसनारियल में जो वह देखो आमके वृक्षपर लटकताहै नागकेसर भररक्खीथी तुम उसे उतार कमलके पत्तेमें रक्खो तबतक मैं थोड़ासा गोरोचन और मिट्टी और दूब मंगल कार्यके लिये ले आऊँ।

प्रियंवदा-बहुत अच्छा।

(नेपथ्यमें।)

हे गौतमी! शारङ्गरव और शारद्वतमिश्रोंको कहदो कि शकुन्तला के संग जानाहोगा।

प्रियंवदा-(कानलगाकर।)

अनसूया शीघ्रताकर। पिता कण्व हस्तिनापुर जानेवालोंको पुकार रहे हैं॥

(अनसूया सामग्री लिये आई।)

अनसूया-चलो सखी आवो।

प्रियंवदा-(देखकर।) वह देखो शकुन्तला सूर्य्य उदयका शिर स्नान किये खड़ी है और बहुतसी ऋषियोंकी स्त्रियाँ टोकरियों में तन्दुल लिये आशीष देरही हैं। आवो हम भी उसके पास चलें।

(दोनों गईं।).

(ऊपर कहे वेषसे आसन पै स्थित शकुन्तला आई।)

१ तपस्विनी-(शकुन्तला को।) हे राजवधू! तू पतिको प्यारीहो।

मूलम्

द्वितीया—वत्सेवीरप्रसविनीभव ।

तृतीया—वत्सेभर्तुर्बहुमताभव ।

(इत्याशिषोदत्त्वा गौतमीवर्जंनिष्क्रान्ताः ।)

सख्यौ—(उपसृत्य । सखि सुखमज्जनंतेभवतु ।

शकुन्तला—स्वागतंमेसख्योः । इतोनिषीदतम् ।

उभे—(मंगलपात्राण्यादाय । उपविश्य ।) हलासज्जा भव । यावन्मंगलसमालम्भनं विरचयावः ।

शकुन्तला—इदमपिबहुमन्तव्यम् । दुर्लभमिदानींमेसखीमण्डनंभविष्यति । (इतिबाष्पंविसृजति ।)

उभे—सखिउचितंनतेमंगलकालेरोदितुम् ।

(इत्यश्रूणिप्रमृज्यनाट्येन प्रसाधयतः ।)

प्रियंवदा—आभरणोचितं रूपमाश्रमसुलभैःप्रसाधनैर्विप्रकार्यते ।

(प्रविश्योपायनहस्तौ ।)

ऋषिकुमारकौ—इदमलङ्करणम् ।अलंक्रियतामत्रभवती ।

(सर्वाविलोक्यविस्मिताः ।)

गौतमी—वत्सनारदकुतएतत् ।

प्रथमः—तातकाश्यपप्रभावात् ।

गौतमी—किंमानसीसिद्धिः ।

द्वितीयः—नखलु । श्रूयताम् । तत्रभवतावयमाज्ञप्ताःशकुन्तलाहेतोर्वनस्पतिभ्यःकुसुमान्याहरतेति । ततइदानीं ।

टीका

२ तपस्विनी–तू शूरवीर पुत्रवालीहो ।
३ तपस्विनी–पुत्रि ! भर्त्ता को बहुत प्यारी हो।
(आशीर्वाद देकर तपस्विनी गईं । गौतमी विना ।)
दोनोंसखी–(जाके ।) सखि सुखसे स्नानकर ।
शकुन्तला–सखियो भली आईं यहां बैठो ।
दोनों–(मंगल के पात्र लेके । बैठके ।)
तुम नेक ठहरो तो मंगल नेग करदूं ।
शकुन्तला–तुम करोगी सो अच्छाही करोगी फिर तुम से आभूषण पहिनना दुर्लभ होगा (यह कहकर आंसू डालदिये ।)
दोनोंसखी–सखी ! ऐसे मंगलसमय जब कि तू सुख भोगने जाती है रोना उचित नहीं है ।
(आंसू पूँछकर वस्त्र पहिरातीभई ।)
प्रियंवदा–सखी ! इस तेरे सुन्दर अंगको तो अच्छे वस्त्र आभरण चाहियें थे परन्तु अब यही साधारण फूल पत्ते आश्रमसे मिल सके हम पहिराती हैं ।
(कण्वके दोचेले सामग्री सहित आये) यह हैं वस्त्र आभूषण इसको पहराओ ।
(सब देखके अचंभेमें आगईं ।)
गौतमी–हे पुत्र नारद ! कहां से लाये यह ।
पहिला–पिता कण्वके तपके प्रभावसे ।
गौतमी–क्या ये मनमें विचारतेही प्राप्त होगये ।
दूसरा–नहीं । सुनों । महात्मा काश्यपकी आज्ञाभई कि शकुन्तला के निमित्त वृक्षोंसे फूल लेआओ । सोही ।

मूलम्

क्षौमंकेनचिदिन्दुपाण्डुतरुणा माङ्गल्यमाविष्कृतं
निष्ठ्यूतश्चरणोपभोगसुलभो लाक्षारसःकेनचित् ।
अन्योभ्यो वनदेवताकरतलैरापर्वभागोत्थितै-
र्दत्तान्याभरणानितात्किसलयोद्भेदप्रतिद्वंद्विभिः ॥ ४ ॥

प्रियंवदा-(शकुन्तलांविलोक्य ।) हला अनयाभ्युपप
त्त्यासूचिताते भर्तुर्गेहेऽनुभवितव्याराजलक्ष्मीरिति ।

(शकुन्तलाव्रीडांरूपयति ।)

प्रथमः-गौतम एह्येहि । अभिषेकोत्तीर्णायकाश्यपायव
नस्पतिसेवांनिवेदयावः ।

द्वितीयः-तथा (इतिनिष्क्रान्तौ ।)

सख्यौ-अयेअनुपयुक्तभूषणोऽयंजनः । चित्रकर्मपरिच
येनाङ्गेषुतआभरणविनियोगंकुर्वः ।

शकुन्तला-जानेवांनैपुणम् ॥

(उभेनाट्येनालंकुरुतः ।)

(ततःप्रविशतिस्नानोत्तीर्णःकाश्यपः ।)

काश्यपः-

यास्यत्यद्यशकुन्तलेतिहृदयंसंस्पृष्टमुत्कंठया
कण्ठःस्तंभितबाष्पवृत्तिकलुषश्चिंताजडंदर्शनम् ।
वैक्लव्यंममतावदीदृशमिदंस्नेहादरण्यौकसः
पीड्यन्तेगृहिणःकथंनतनयाविश्लेषदुःखैर्नवैः ॥ ५ ॥

टीका

पीला चाँद कसा तुवस्त्र इसको मांगल्यरूपी दिया चोखी ये महंदी मिलाखुरसकी लालवर्ण जिसका भला । औरोंने वन देवताक करसे अच्छीदयी वस्तु सब काहूने गहने दिये शुभ सभी आये नये पत्रहैं ॥ ४ ॥

प्रियंवदा—(शकुन्तलाको देखकर ।) वनदेवियोंसे वस्त्राभरण मिलना यह सगुन तुझे सासुरेमें राजलक्ष्मीदाता होगा ।

(शकुन्तला लजागयी ।)

पहिलाचेला—गुरूजी मालिनी के स्नानों को गये हैं वहीं जाकर यह वृत्तान्त वनदेवियों के सत्कारका उनसे कहेंगे ।

दूसरा—अच्छा । (दोनोंगये ।)

दोनोंसखी—हे सखी ! हम वन वासियों ने ऐसे आभूषण आगे कभी न देखे थे इससे हम ज्योंकेत्यों पहिराना नहीं जानती हैं पर हम अपनी चित्रविद्याके बलसे शृंगार करती हैं ।

शकुन्तला—मैं तुम्हारी निपुणता को जानतीहूं

(दोनों आभूषण पहरातीभईं ।)

(कणवस्नानसे निमटकर आये ।)

काश्यपः—

छंद—

जाती है आज शकुन्तला चितमें उदासी छारही ।
ये दशा वनमें बसे की स्नेह से मम होरही ॥
कंठ में वाणी रुकी आंशू कि बूंदाँ आरही ।
गृहियों कि क्यागति होयहै यह मैंतु अब जानों नही ॥ ५ ॥

मूलम्

(इतिपरिक्रामति।)

सख्यौ—हलाशकुन्तलेअवासितमंडनाासि। परिधत्स्वसां प्रतंक्षौमयुगुलम्।

(शकुन्तलोत्थायपरिधत्ते।)

गौतमी—जातेएषतआनन्दपरिवाहिणाचक्षुषापरिष्वज्य मानइवगुरुरुपस्थितः। आचारंतावत्प्रतिपद्यस्व।

शकुन्तला--(सव्रीडम्) तातवन्दे।

काश्यपः--वत्से—

ययातेरिवशर्मिष्ठाभर्तुर्बहुमताभव। सुतंत्वमपिसम्राजंसे वपूरुमवाप्नुहि॥ ६॥

गौतमी—भगवन्वरःखल्वेषनाशीः।

काश्यपः—वत्सेइतःसद्योहुताग्नीन्प्रदक्षिणीकुरुष्व।

(सर्वेपरिक्रामन्ति।)

काश्यपः—(ऋक्छंदसाशास्ते।)

अमीवेदिं परितःक्लृप्तधिष्ण्याः समिद्वंतःप्रान्तसंस्तीर्ण दर्भाः। अपघ्नन्तोदुरितंहव्यगन्धैर्वैतानास्त्वांवह्नयः पावयन्तु॥ ७॥

प्रतिष्ठस्वेदानीम् (सदृष्टिक्षेपम्।) क्वतेशार्ङ्गरवमिश्राः।

(प्रविश्य।)

शिष्यः—भगवन्इमेस्मः।

टीका

(इधर उधर मन बहलाने के लिये टहलने लगे।)

दोनोंसखी–सखी शकुन्तला अब तुम्हारा शृंगार यथोचित हुआ। अब इस साड़ीके जोड़े को पहिरो।

(शकुन्तला ने उठकर साड़ी पहरी।)

गौतमी–हे पुत्रि ए तेरे आनंद के सुखसे पिता कण्व नेत्रोंमें प्रेम का जल लिये आरहे हैं। उठकर प्रणामकर।

शकुन्तला–(लज्जासे।) पिता मैं नमस्कार करती हूँ।

कण्व–पुत्रि,

ययातीको तुशर्मिष्ठा जैसे भर्ताकु प्यारिहो तूभी तुचक्रवर्तीहि पुत्र को अब प्राप्त हो। ॥ ६ ॥

गौतमी–भगवन् आशीस नहीं है ए वर है।

काश्यप–आओबेटी हुताशन की प्रदक्षिणा करलो।

(सबनेप्रदक्षिणाकी।)

काश्यप–(वेदऋचासे।) दोहा–

दर्भ धरी निज स्थान में वेदी के चहुंओर।
समिध धरी अरुमंत्र पढ़ अपनी अपनी ठौर॥

चौपाई–

निज सुगंधि से पाप दुरावैं। पुण्यपुंज से दुःख हटावें॥
असविशिष्ट यह गंध हवीकी। रक्षकहोय पुत्रितवनीकी॥७॥

अब पुत्रि तू शुभघड़ी में विदाहो।

(चारोंओर देखकर।) संगजानेवाले मिश्रकहाँ हैं।

(जाके।)

चला–भगवन् ये हैं हम।

मूलम्

काश्यपः—भगिन्यास्तेमार्गमादेशय ।
शार्ङ्गरवः—इतइतोभवती ।

(सर्वेपरिक्रामन्ति ।)

काश्यपः—भोभोःसन्निहितास्तपोवनतरवः ।
पातुंनप्रथमंव्यवस्यतिजलंयुष्मास्वपीतेषुया । नादत्तेप्रियमंडनापिभवतांस्नेहेनयापल्लवम् । आद्येवःकुसुमप्रसूतिसमयेयस्याभवत्युत्सवः । सेयंयातिशकुन्तलापतिगृहंसर्वैरनुज्ञायताम् ॥ ८ ॥

(कोकिलरवंसूचयित्वा ।)

अनुमतगमनाशकुन्तलातरुभिरियंवनवासबंधुभिः॥ परभृतविरुतंकलंयथाप्रतिवचनीकृतमेभिरीदृशम् ॥९॥

(आकाशे ।)

रम्यान्तरःकमलिनीहरितैःसरोभिश्छायाद्रुमैर्नियमितार्कमयूखतापः ॥ भूयात्कुशेशयरजोमृदुरेणुरस्याःशांतानुकूलपवनश्चशिवश्चपंथाः ॥ १० ॥

(सर्वेसविस्मयमाकर्णयन्ति ।)

गौतमी-जातेज्ञातिजनस्निग्धाभिरनुज्ञातगमनासितपोवनदेवताभिः । प्रणमभगवतीः ।
शकुन्तला—(सप्रणामंपरिक्रम्य । जनान्तिकम् ।) हलाप्रियंवदेनन्वार्यपुत्रदर्शनोत्सुकाया अप्याश्रमपदं परित्यजन्त्यादुःखेनमेचरणौपुरतःप्रवर्तेते ।

टीका

कण्व—पुत्र शार्ङ्गरव अपनी बहनको गैल बताओ।

शार्ङ्गरव—आओ भगवती इधर आओ। (सबचले।)

कण्व—अरेतपोवन के वृक्षो ! सावधान हो।

पीवेना जल जो तुम्हार विन ए तुमरे पियेपीवती ना पहने गह-नाभि प्यार तुम्हरे स्नेहाभये पुत्रका॥ उत्साहा जिसको तुम्हार पुष्पा उत्पत्ति होनेमे हो सोये जाय शकुन्तला पति घरों आज्ञा करो सो तुम्हीं॥ ८॥

(कोयलबोली) सोरठा—

आज्ञा देवें तोय वनवासी सब बंधु अब।
मंगलकारी होय सबके मतमे जाय सो॥ ९॥

(आकाशवाणी) छंद—

अब पंथके हित होय सुख सब दुःख एकहु नाइसे।
पवन शीतल गंधदे अरु मार्ग कोमल होइसे॥
कमल फूले ताल में शोभा भली सो छारही।
वृक्षों कि छाया से सुखी अरु धूपसे दुखहो नहीं॥१०॥

गौतमी—हे पुत्री तपस्वियों की हितकारी वनदेवियों ने तुझे आ-शीर्वाद दी है। तूभी इनको प्रणामकर।

शकुन्तला—(प्रियंवदासे हौले।) हेप्रियंवदा आर्यपुत्रसे फिर मि-लनेका तो बड़ा उत्साह है पर इस वनको जिसमें मैं इतनी बड़ीहुई हूँ छोड़ते आगेको पाउँ नहीं पड़ता।

मूलम्

प्रियंवदा—नकेवलंतपोवनविरहकातरासख्येव। त्वयोपस्थितवियोगस्यतपोवनस्यापि तावत्समवस्था दृश्यते।

उद्गलितदर्भकवलामृग्यः परित्यक्तनर्तनामयूराः। अपसृतपांडुपत्रामुञ्चन्त्यश्रूणीवलताः॥ ११॥

शकुन्तला—(स्मृत्वा।) तातलताभगिनींवनज्योत्स्नां तावदामन्त्रयिष्ये।

काश्यपः—अवैमितेतस्यांसोदर्यस्नेहम्। इयंतावद्दक्षिणेन।

शकुन्तला—(लतामुपेत्य।) वनज्योत्स्नेचूतसंगतापि मांप्रत्यालिंगेतोगताभिःशाखाबाहाभिः। अद्यप्रभृतिदूरपरिवर्तिनीभविष्यामि।

काश्यपः—

संकल्पितंप्रथममेव मयातवार्थे। भर्तारमात्मसदृशंसुकृतैर्गतात्वम्॥ चूतेनसंश्रितवतीनवमालिकेयमस्यामहंत्वयिचसंप्रतिवीतचिंतः॥ १२॥

इतःपंथानंप्रतिपद्यस्व।

शकुन्तला—(सख्यौप्रति।) हलाएषाद्वयोर्युवयोर्हस्ते निक्षेपः।

सख्यौ—अयंजनःकस्यहस्तेसमर्पितः। (इतिबाष्पंविहरतः।)

टीका

प्रियंवदा-अकेली तुझीको शोक नहीं है ज्यों ज्यों तेरे बिदाहो-
नेका समय निकट आता है तेरे विरहसे वनमें बिथासी छा-
यी जाती है।

चौपाई-

हरिणी देखहु घास न चरहीं। मोर नृत्य अब सब परिहरहीं।
वृक्षबिछोह सहत नहिं जासू। पीलेपात गिरहिं जिमिआंसू११॥

शकुन्तला-(यादकरके।) पिता आज्ञादो तो इस माधवीलता
से भेटलूँ क्योंकि इससे मेरा बहिन का सा स्नेह है॥

कण्व-बेटी मिलले मैंभी तुम्हारे बहिन के स्नेह को जानताहूँ

शकुन्तला-(लतासे भेटकर।) हे वनज्योतिस्न! यद्यपि तू आ-
मका आश्रय ले रही है तौभी भुजा पसारकर मुझसे मिलले
अब मैं तुमसे दूर जापड़ूंगी।

कण्व- शिखरिणी-

किया संकल्पा था प्रथम यह पुत्रीजु तुझको।
भला तेरासाही पति सुख मिले आज मुझको॥
चमेली कोभी ये पति अब मिला आम तिससे।
भला दोनों में मैं निमट सुख पायाहुँ इससे॥ १२॥

तू बिलम्ब मतकर बिदाहो।

शकुन्तला-(दोनों सखियोंसे) हे सखियो! प्यारी माधवी को
मैं तुम्हें सौंपतीहूं॥

दोनोंसखी-सखी हमें किसको सौंपे जातीहो।(दोनों ने आंशू
डाल दिये।)

मूलम्

काश्यपः—अनसूये अलं रुदित्वा। ननु भवतीभ्यामेव स्थिरीकर्तव्या शकुन्तला।

(सर्वे परिक्रामन्ति।)

शकुन्तला—तात एषोटजपर्यंतचारिणी गर्भमन्थरा मृगवधूर्यदानघप्रसवा भवति तदा मह्यं कमपि प्रियनिवेदयितृकं विसर्जयिष्यथ।

काश्यपः—नेदं विस्मरिष्यामः।

शकुन्तला-(गतिभङ्गं रूपयित्वा।) कोनु खल्वेष निवसने मे सज्जते। (इति परावर्तते।)

काश्यपः—वत्से,

यस्य त्वया व्रणविरोपणमिंगुदीनां तैलं न्यषिच्यत मुखे कुशसूचिविद्धे॥ श्यामाकमुष्टिपरिवर्धितको जहाति सोऽयं न पुत्रकृतकः पदवीं मृगस्ते॥ १३॥

शकुन्तला—वत्स किं सहवासपरित्यागिनीं मामनुसरसि। अचिरप्रसूतया जनन्या विना वर्धित एव। इदानीमपि मया विरहितं त्वां तातश्चिंतयिष्यति। निवर्तस्व तावत्। (इति रुदती प्रस्थिता।)

काश्यपः—

उत्पक्ष्मणोर्नयनयोरुपरुद्धवृत्तिं बाष्पं कुरु स्थिरतया विहतानुबन्धम्। अस्मिन्नलक्षितनतोन्नतभूमिभागे मार्गे पदानि खलु ते विषमीभवन्ति॥ १४॥

टीका

कण्व–अनसूया इस समय रोना न चाहिये। शकुन्तला को धीरज बंधाओ।

(सब आगेको चले।)

शकुन्तला–हे पिता! जब यह हरिणी जो गर्भके बोझसे चलनेमें अलसाती है बच्चा जनै तब मेरे पास खबर भेजदीजो।

कण्व–नहीं भूलूंगा।

शकुन्तला–(कुछ चलकर और फिरकर।)

यह कौनहै जो मेरे अंचल को नहीं छोड़ता है। (फिर पीछे फिरकर देखा।)

कण्व–प्रियपुत्रि, कवित्त–

जिसके कुशके मुखसेदुख घावभये तिस केतुझने वहघाव भरे हैं।
कहु कैसे भरे जु हरे यह तेलहिंगोट लगाय भरे हैं॥
सामक मुट्ठि भरी तिसको हित पालन से वह प्राण धरे हैं।
योंहि किया यह पुत्र भला मृगसो वह छोड़ तुझे न टरे हैं १३॥

शकुन्तला–अरेछोना तू मेरेलिये क्यों रोता है। तेरी माता तो तुझे जनतेही छोड़ मरीथी। मैंने पालकर तुझे इतना बड़ा किया है। तैसेही पिता कण्व मेरे पीछे तेरा पालन करैंगे। अबतूलौटजा। (आंसू डालती चली।)

कण्व–

चौपाई–

नयन रुके आंसू जिमि मीची। भूमि न दीखत ऊँची नीची।
याते सब सुधार तू आंसू। पंथ दृष्टि अब आवे जासू॥ १४॥

मूलम्

शार्ङ्गरवः--भगवन् उदकान्तं स्निग्धोजनोऽनुगंतव्य इति श्रूयते । तदिदं सरस्तीरम् । अत्र संदिश्य प्रतिगन्तुमर्हसि ।

काश्यपः--तेनहीमां क्षीरवृक्षच्छायामाश्रयामः ।

(सर्वेपरिक्रम्यस्थिताः ।)

काश्यपः--(आत्मगतम् ।) किंनुखलुतत्रभवतोदुष्यंतस्ययुक्तरूपमस्माभिःसंदेष्टव्यम् (इतिचिन्तयति)

शकुन्तला--(जनान्तिकम् ।) हला, पश्यनलिनीपत्रान्तरितमपिसहचरमपश्यन्त्यातुराचक्रवाक्यारौतिदुष्करमहंकरोमि । इति ।

अनसूया--सखिमैवंमन्त्रय ।

एषापिप्रियेणविनागमयतिरजनींविषाददीर्घतराम् । गुर्वपिविरहदुःखमाशाबन्धःसाहयति ॥ १५ ॥

काश्यपः--शार्ङ्गरव इतित्वयामद्वचनात्सराजाशकुन्तलां पुरस्कृत्यवक्तव्यः ।

शार्ङ्गरवः--आज्ञापयतुभवान् ।

काश्यपः--

अस्मान्साधुविचिन्त्य संयमधनानुच्चैःकुलंचात्मन ।
स्त्वय्यस्याः कथमप्यबान्धवकृतांस्नेहप्रवृत्तिंचताम् ॥
सामान्यप्रतिपत्तिपूर्वकमियंदारेषुदृश्यात्वया ।
भाग्यायत्तमतःपरं नखलुतद्वाच्यंवधूबंधुभिः ॥ १६ ॥

टीका

शार्ङ्गरव—हे महात्मा सुनते हैं कि प्यारे मनुष्योंको पहुँचाने वहीं तक आना चाहिये जहांतक जलाशय न मिले अब यह सरोवर का तट आगया। आप हमको आज्ञादेके आश्रम कोसिधारो।

कण्व—तौ आओ क्षणमात्र इस वटकी छाया में ठहरलें।

(सबछाया में गये।)

कण्व—(आपही आप।) अब वहां राजा दुष्यंत योग्य क्या संदेश भेजना चाहिये। (विचार करनेलगा।)

शकुन्तला—(हौले अनसूयासे।) सखी देख कमलिनी के पत्तों में बैठे भी चकवे को नहीं देखती चकवी आतुरभई रोती ही है। दुष्करकरतीहूँ मैं।

अनसूया—सखि ऐसी मतकहो।

दोहा—

पति वियोगमें रात्रि सब दुःख वितावै सोय।
आशाकरत सहायसब अधिकविरह दुखहोय॥१५॥

कण्व—शार्ङ्गरव जब तू राजाके सम्मुख पहुँचे तब शकुन्तला को अगाड़ी करके मेरी ओरसे यूँकहियो।

शार्ङ्गरव—आज्ञाकीजिये।

काश्यप— कवित्त—

हमतो तपसी तपके धनहैं तुमतो महराज बड़े कुल सोहो।
यह बात विचारि इसे तुमतो सब रानिन भांति सनेह करोहो॥
आपहि आप उत्पन्न भया वह पालन योग्य तिसे तुमहीहो।
और नहीं हमको कहना कुछ इसके भाग्य लिखा वहहीहो१६॥

मूलम्

शार्ङ्गरवः—गृहीतःसंदेशः।

काश्यपः—वत्से, त्वमिदानीमनुशासनीयासिवनौकसोपि सन्तोलौकिकज्ञावयम्।

शार्ङ्गरवः—नखलुधीमतांकश्चिदविषयोनाम।

काश्यपः—सा त्वमितःपतिकुलंप्राप्य।

शुश्रूषस्वगुरून्कुरुसखीवृत्तंसपत्नीजने।
भर्तुर्विप्रकृतापिरोषणतयामास्मप्रतीपंगमः॥
भूयिष्ठंभवदक्षिणापरिजनेभाग्येष्वनुत्सेकिनी।
यांत्येवंगृहणीपदंयुवतयोवामाः कुलस्याधयः॥ १॥

कथंवागौतमीमन्यते।

गौतमी—एतावान्वधूजनस्योपदेशः। जातेएतत्खलुसर्वमवधारय।

काश्यपः—वत्सेपरिष्वजस्व मांसखीजनंच।

शकुन्तला—तातइतएवकिंप्रियंवदामिश्राःसख्योनिवर्तिष्यन्ते।

काश्यपः—वत्सेइमेअपिप्रदेये। नयुक्तमनयोस्तत्रगमनम्। त्वयासहगौतमीयास्यति।

शकुन्तला—(पितरमाश्लिष्य।) कथमिदानींतातस्याङ्कात्परिभ्रष्टामलयतरून्मूलिताचन्दनलतेव देशान्तरेजीवितंधारयिष्ये।

टीका

शार्ङ्गरव—आपका संदेशा मैंने भली भांति गांठबाँध लिया।

कण्व—हेपुत्री! अबतुझे भी कुछ सीखदूंगा। क्योंकि यद्यपि हम वनवासी हैं तौभी लोकके व्यवहारोंको भलीभांति जानतेहैं।

शार्ङ्गरव—विद्वान् पुरुषों से क्या छुपाहै।

कण्व—जब तू रनवास में वास पावे तब।

दोहा—पतिका आदर करितथा गुरुजन सेवा और।
सौत सपत्नी भाव नहिं सखी भाव सब ठौर॥

सोरठा—

करे न आज्ञा भंग क्रोधित पति होवे तभी।
सब सेवक सम अंग अपस्वार्थी मत हूजिये॥

चौपाई—

यहि विधिते जे कुलबधु रहई। ताहिभलीगृहिणी सबकहई १७॥
गौतमी यह शिक्षा कैसी है॥

गौतमी—कुलवधुओं के लिये ये उपदेश बहुत श्रेष्ठहै। पुत्री इस को भूल मत जाना।

कण्व—बेटी आ मुझसे और सखियोंसे एकबेर मिलले।

शकुन्तला—क्या प्रियंवदा और अनसूया यहीं से आश्रमको लौट जायंगी।

कण्व—पुत्रि अभीतक यह दोनों क्वारी हैं। इसवास्ते इनको नगर में जाना योग्य नहीं है। गौतमी तेरे संग जायगी।

शकुन्तला—(कण्वसे मिलकर।) हाय मैं पिताकी गोदसे न्यारी होकर मलयगिरिसे उखाड़ी चन्दनकी बेलकी भांति बिरानी भूमिमें कैसे जीऊंगी।

मूलम्

काश्यपः—वत्से, किमेवङ्कातरासि ।

अभिजनवतोभर्तुःश्लाघ्येस्थितागृहिणीपदे ।
विभवगुरुभिःकृत्यैस्तस्यप्रतिक्षणमाकुला ॥
तनयमचिरात्प्राचीवार्कंप्रसूयचपावनं ।
ममविरहजां नत्वंवत्सेशुचंगणयिष्यसि ॥ १८ ॥

(शकुन्तलापितुःपादयोःपतति ।)

काश्यपः--यदिच्छामितेतदस्तु ।

शकुन्तला—(सख्यावुपेत्य ।) हला, द्वेअपिमांसममेवपरिष्वजेथाम् ।

सख्यौ—(तथाकृत्वा ।) सखियदिनामसराजाप्रत्यभिज्ञानमन्थरोभवेत्ततस्तस्येदमात्मनामधेयांकितमंगुलीयकंदर्शय ।

शकुन्तला—अनेनसंदेहेनवामाकम्पितास्मि ।

सख्यौ—माभैषीः । स्नेहः पापशङ्की ।

शार्ङ्गरवः—युगान्तमारूढःसवितात्वरतामत्रभवती ।

शकुन्तला—(आश्रमाभिमुखीस्थित्वा ।) तातकदानुभूयस्तपोवनंप्रेक्षिष्ये ।

काश्यपः—श्रूयताम् ।

भूत्वाचिरायचतुरंतमहीसपत्नी ।
दौष्यन्तिमप्रतिरथंतनयंनिवेश्य ॥
भर्त्रातदर्पितकुटुम्बभरेणसार्धं ।
शान्तेकरिष्यसिपदंपुनराश्रमेऽस्मिन् ॥ १९ ॥

टीका

कण्व-पुत्री! ऐसी विकल मतहो।

चौपाई।

जब तू घरकी धनी बनेरी। पीतम प्रीतिरु बिभव घनेरी॥
मेरा शोच तुझे नहिंआवे। गृही कामसे सुध ना पावे॥
तेजस्वी सुत पैदा करि है। पूर्वदिशा जिमि सूर्यहुधरिहै १८॥

(शकुन्तला पिता के चरणों में गिरी।)

कण्व-तेरे जैसा मैं चाहताहूं तैसाहो।

शकुन्तला-(दोनों सखियों के पास जाकर।) आओ सखियो दोनों एकही संग भुजा पसारके भेंटलो।

दोनों सखी-(मिलिके।) हे सखी! कदाचित् राजा तुरंत तुझको न पहिचानले तो यह मुंदरी जिसके ऊपर उसका नाम खुदा भया है दिखादीजो।

शकुन्तला-सखियो तुम्हारे इस वचनने तो मेरा हृदय कंपादिया।

दोनों०-प्यारी डरै मत स्नेह में झूठी शङ्का बहुधा उठती है।

शार्ङ्गरव-अब दिन बहुत चढ़गया है जल्दी करो।

शकुन्तला-(फिर आश्रमकी ओर देखकर।) हे पिता! इस आश्रमको कब फिर देखूंगी।

कण्व-पुत्री, सुन।

सोरठा।

बीते पति के संग कुछ दिन, सुतको राजदे।
फेरि मिलेमे अंग, राजा सह आश्रम इसे॥ १९॥

मूलम्

गौतमी—जातेपरिहीयतेगमनवेला निवर्तयपितरम् । अथवाचिरेणापिपुनः पुनरेषैवंमंत्रयिष्यतेनिवर्ततांभवान् ।

काश्यपः—वत्सेउपरुध्यतेतपोनुष्ठानम् ।

शकुन्तला—(भूयःपितरमाश्लिष्य । तपश्चरणपीडितं तातशरीरम् । तन्मातिमात्रंममकृतउत्कंठितुम् ।

काश्यपः—(सनिःश्वासम् ।)

शममेष्यतिममशोकःकथंनुवत्सेत्वयारचितपूर्वम् । उटजद्वारविरूढंनीवारवलिंविलोकयतः ॥ २० ॥

गच्छशिवास्तेपन्थानःसन्तु ।

(निष्क्रान्ताशकुन्तलासहयायिनश्च ।)

सख्यौ—(शकुन्तलांविलोक्य ।) हाधिक् हाधिक्, । अन्तर्हिताशकुन्तलावनराज्या ।

काश्यपः—सनिःश्वासम् । अनसूये,गतवतीवांसह धर्मचारिणी । निगृह्यशोकमनुगच्छतं मांप्रस्थितम् ।

उभे—तातशकुन्तलाविरहितंशून्यमिवतपोवनं कथंप्रविशावः ।

काश्यपः—स्नेहप्रवृत्तिरेवंदर्शिनी ।

(सविमर्शंपरिक्रम्य ।) हन्तभोः, शकुन्तलांपतिकुलंविसृज्यलब्धमिदानींस्वास्थ्यम् । कुतः ।

टीका

गौतमी-पुत्री! चलनेका समय बीताजाताहै। पिताको लौटादे। यह तो बहुत बार योंही कहे जायगी। मुनिजी आप जाओ।

कण्व-मेरे नित्यकर्म में भी अतिकाल हुआ जाता है।

शकुन्तला-(फिर पितासे भेंटकर।) पिता तुम्हारा शरीर तपकरने से दुबला होरहाहै। मेरी बहुत उत्कंठा मत करो।

कण्व-(सांस लेकर।)

चौपाई।

मेरा शोक घटेगा कैसे। रचा पूर्व तैंने जो ऐसे॥
कुटी सामने बोया धाना। प्रेम विलोकत सो न भुलाना २०॥

अब सिधारो मार्ग मंगलकारी हो।

(गौतमी और दोनों मित्रों सहित शकुन्तलागई।)

दोनों सखी-(शकुन्तला की ओर देखकर।) अबतो सखी वृक्षों की ओट भई।

कण्व-(श्वासलेकर।) बेटियो अब तुम्हारी सखी गई। तुम इस शोचको त्यागकर हमारे साथ आओ।

दोनों सखी-पिता शकुन्तला बिन तपोवन सूना दिखताहै कैसेचलें।

कण्व-सत्य है तुमको ऐसाही दिखाई देताहोगा। (विचार करते हुए चले।) शकुन्तला को बिदाकर आज मैं सुचित्त हुआ। काहेसे कि।

मूलम्

अर्थोहिकन्यापरकीयएवतामद्यसंप्रेष्यपरिग्रहीतुः ॥
जातोममायं विशदः प्रकामं प्रत्यर्पित न्यासइवा
न्तरात्मा ॥ २१ ॥

(इति निष्क्रान्ताःसर्वे ।)

इतिचतुर्थोङ्कः ।

———

टीका

दोहा–

परधन कन्या भेजके सुखीभया भरपूर ॥
जिमि जन सौंप धरोहर चित्त दुःखज्वर दूर ॥ २१ ॥

इति श्रीमत्स्वामिलक्ष्मीनारायणशर्मणासंकलितश्चतुर्थोऽङ्कः ॥ ४ ॥
चौथा अंक समाप्त ।

श्रीगणेशाय नमः ॥

अभिज्ञानशाकुन्तलन्नाटकम् ॥

—०—

पञ्चमोऽङ्कः ॥

(ततःप्रविशत्यासनस्थोराजाविदूषकश्च ।)

विदूषकः–(कर्णंदत्त्वा ।) भोवयस्य, संगीतशालांतरेऽवधानंदेहि । कलविशुद्धायाः गीतेःस्वरसंयोगः श्रूयते । जानेतत्रभवतीहंसपदिकावर्णपरिचयंकरोति ।

राजा–तूष्णींभव । यावदाकर्णयामि ।

(आकाशेगीयते ।)

अभिनवमधुलोलुपो भवांस्तथापरिचुम्ब्यचूतमंजरीम् । कमलवसतिमात्रनिर्वृतोमधुकरविस्मृतोऽस्येनां कथम् ॥ १ ॥

राजा–अहोरागपरिवाहिनीगीतिः ।

विदूषकः–किंतावद्गीत्याऽवगतोऽक्षरार्थः ।

राजा–(स्मितंकृत्वा ।) सकृत्कृतप्रणयोऽयंजनः । तस्यादेवीवसुमतीमन्तरेणमदुपालम्भमवगतोस्मि । सखेमाढव्यमद्वचनादुच्यतांहंसपदिका । निपुणमुपालब्धोस्मीति ।

श्रीगणेशाय नमः ॥

अभिज्ञानशकुन्तला नाटक ॥

पांचवां अङ्क ॥

(आसनपै बैठे राजा और विदूषक आया ।)

विदूषक-(कानदेके ।) मित्र ! संगीतशाला की ओर ध्यान दो देखो बीनकी तान कैसी मधुर मधुर आतीहै रानी हंसमती तुम्हारे सुनाने को किसी नयेगीतपर अभ्यास करती है ।

राजा-चुपरह । सुननेदे ।

(आकाशमें गान ।)

राग कलिंगड़ा इकताला-भ्रमर तुम मधुके चाखनहार । आम की रसभरी मृदुल मंजरी तासों प्रीति अपार ॥ रहसि रहसि नित रसलेबेको धावतहै करिनेम । क्योंकर आई कमलबसेरे कितभूले प्यारी को प्रेम ॥ १ ॥

राजा-अहा यह गति कैसा प्रेम उपजाती है ।

माढव्य-क्या आपने अर्थ समझ लिया ।

राजा-(मुसक्याकर ।) एक समय मैं हंसमतीपर आसक्तथा और अब इतनेदिन बिछुरे होगये हैं । इससे उलहना देती है । मित्र! तूजा हमारी ओरसे कहदे कि रानी हम तेरी चेतावनी को समझे ।

मूलम्

विदूषकः—यद्भवानाज्ञापयति। (उत्थाय।) भोवयस्य गृहीतस्यतयापरकीयैर्हस्तैः शिखण्डकेताड्यमान स्याप्सरावीतरागस्येवनास्तीदानींमेमोक्षः।

राजा—गच्छ। नागरिकवृत्त्यासंज्ञापयैनाम्।

विदूषकः—कागतिः। (इतिनिष्क्रान्तः।)

राजा—(आत्मगतम्।) किंनुखलुगीतार्थमाकर्ण्येष्टज नविरहादृतेऽपिबलवदुत्कंठितोस्मि। अथवा।

रम्याणिवीक्ष्यमधुरांश्चनिशम्यशब्दान् पर्युत्सुकी भवतियत्सुखितोऽपिजन्तुः। तच्चेतसास्मरतिनूनमबो धपूर्वं भावास्थिराणिजननान्तरसौहृदानि॥ २॥

(इति पर्य्याकुलस्तिष्ठति।)

(ततःप्रविशतिकञ्चुकी।)

*कञ्चुकी—अहोनुखल्वीदृशीमवस्थांप्राप्तोस्मि।

आचारइत्यवहितेनमयागृहीतायावेत्रयष्टिरवरोधगृ हेषुराज्ञः॥ कालेगतेबहुतिथेममसैवजाता प्रस्थानवि क्लवगतेरवलम्बनार्था॥ ३॥

---

* ये नित्यं सत्यसंपन्नाः कामदोषविवर्जिताः। ज्ञानविज्ञानकुशलाः कंचुकीयास्तुनेस्मृता इति॥

टीका।

माढव्य–जो आज्ञा महाराज की (हौले से उठकर।) परंतु तुम तो मित्र ऐसी कहते हो कि जैसे कोई तीक्ष्ण बरछी की भाल को पराये हाथसे पकड़ना चाहे मुझे अच्छा नहीं लगता है कि रोसभरी स्त्री से ऐसा संदेशा जाकर कहूँ॥

राजा–जा सखा तेरी चतुराई की बातें उसका रोस मिटादेंगी॥

माढव्य–धन्य है अच्छा संदेशा दिया देखिये क्याहो।

(बाहरगया।)

राजा–(आपही आप।) यह क्याकारण है कि यद्यपि मुझे किसी स्नेहीका वियोग नहीं है तौभी विरहका गीतही सुनते मेरे चित्तको उदासी हो आती है। या।

दोहा–

सुन्दर रूपहिं देखिके और मधुर सुनगान॥
पूर्वजन्मकी प्रीति भी प्रकट चित्तहो जान॥ २॥

(उदास होगया।)

(कञ्चुकी आया।)

*कञ्चुकी–अहो? मैं इसदशाको प्राप्तहोगया कि।

दोहा–

जो छड़िया रनवासमें शोभा सेली हाथ॥
सोहि सहारे को भयी लकड़ी मेरे साथ॥ ३॥

---

* काम दोष रहित सत्यवक्ता और ज्ञान विज्ञान में चतुरहो उसको कञ्चुकी कहते हैं॥

मूलम्

भोऽकामंधर्मकार्यमनतिपात्यंदेवस्य। तथापीदानी मेवधर्मासनादुत्थितायपुनरुपरोधकारिकण्वशिष्यागम नमस्मैनोत्सहे निवेदितुम्। अथवा विश्रमोयंलोकतन्त्रा धिकारः। कुतः।

भानुःसकृद्युक्ततुरङ्गएव
रात्रिंदिवंगन्धवहःप्रयाति॥
शेषःसदैवाहितभूमिभारः।
षष्ठांशवृत्तेरपिधर्मएषः॥ ४॥

यावन्नियोगमनुतिष्ठामि। (परिक्रम्यावलोक्य च।) एषदेवः।

प्रजाःप्रजाःस्वाइवतन्त्रयित्वा निषेवतेशान्तमनाविविक्तम्। यूथानिसंचार्यरविप्रतप्तः शीतंदिवास्थानमिव द्विपेंद्रः॥ ५॥

(उपगम्य।) जयतुजयतुदेवः।

एतेखलुहिमगिरेरुपत्यकारण्यवासिनः काश्यपसंदेश मादायसस्त्रीकास्तपस्विनःसंप्राप्ताः। श्रुत्वादेवःप्रमाणम्।

राजा—(सादरम्।) किंकाश्यपसंदेशहारिणः

कंचुकी—अथकिम्।

राजा—तेनहिमद्वचनाद्विज्ञाप्यतामुपाध्यायः सोमरातः। अमूनाश्रमवासिनः श्रौतेनविधिनासत्कृत्यस्वयमेव प्रवेशयितुमर्हतीति। अहमप्यत्र तपस्विदर्शनोचिते प्रदेशेस्थितः प्रतिपालयामि।

टीका

हो ! महाराज को धर्म, कार्य नहीं उल्लंघन करने योग्यहै। राजा अभी धर्मासन से उठेहैं इस लिये मुझे उचित नहीं है कि इस समय कण्वके चेलों के आनेका संदेशा कहूँ नहीं तो राजा विश्रामको जानेसे रुक जायँगे। परन्तु जिनके शिर पृथ्वीका भारहै उन को विश्राम कहाँ। काहेसे।

कवित्त–

एकहिबार जुते रवि के रथ में यह अश्व लगे रहतेहैं।
दिनरात कभी थकते भि नहीं अरु वायु सदा चलते रहतेहैं॥
धरणीधरभी धरणी धरिके शिरपेहि सदा न कहीं थकतेहैं।
निजहेतु लिया छठवाँ जिनभाग तिसे विश्राम नहीं मिलतेहैं॥४॥

अच्छा जबतक ठहरूं। (फिरकर और देखकर।)
यह महाराजहैं।

दोहा–

निजहिं प्रजा सुतसम समझि समाधान करिराज॥
बैठे शीतल छाहँ जिमि, यूथ चरत गजराज॥५॥

(जाके।) महाराज की जयहो। हिमालय की तराई के दो वनवासी तपस्वी कुछ स्त्रियोंसमेत आयेहैं और मुनि कण्वका संदेशालाये हैं। महाराजकी क्या आज्ञा है।

राजा–(आदरसे।) क्या कण्वका संदेश लाये हैं।

कंचुकी–हाँ महाराज।

राजा–सोमरात से कहदो कि वनवासियों को वेदकी विधिसे सत्कार करके लिवालावे मैंभी उन से भेटने योग्य स्थान में बैठताहूं।

मूलम्

कंचुकी—यदाज्ञापयति । (इति निष्क्रान्तः ।)

राजा—(उत्थाय । वेत्रवति अग्निशरणमार्गमादेशय ।

प्रतीहारी—इतइतोदेवः ।

राजा—(परिक्रामति । अधिकारखेदंनिरूप्य ।) सर्वः प्रार्थितमर्थमधिगम्यसुखीसंपद्यतेजन्तुः । राज्ञांतुच रितार्थतादुःखान्तरैव ।

औत्सुक्यमात्रमवसाययति प्रतिष्ठा
क्लिश्नातिलब्धपरिपालनवृत्तिरेनम् ॥
नातिश्रमापनयनायनचश्रमाय
राज्यंस्वहस्तधृतदंडमिवातपत्रम् ॥ ६ ॥

(नेपथ्ये ।)

वैतालिकौ—विजयतांदेवः ।

प्रथमः—

स्वसुखनिरभिलाषः खिद्यसेलोकहेतोः
प्रतिदिनमथवाते वृत्तिरेवंविधैव ॥
अनुभवतिहिमूर्ध्नापादपस्तीव्रमुष्णं
शमयतिपरितापं छाययासंश्रितानाम् ॥ ७ ॥

द्वितीयः—

---

(१) प्रतीहारीलक्षणम्--संधिविग्रहसंबद्धं नानाकार्यसमुत्थितम् । निवेदयन्तिया: कार्यं प्रतीहार्यस्तुता:स्मृता: ॥ मातृगुप्ताचार्यैरुक्तम् ।

टीका

कंचुकी–जो आज्ञा।

(बाहर गया।)

राजा–(उठके।) हे वेत्रवति! हमको अग्निस्थानकी गैल बतावो

(१) प्रतीहारी–महाराज गैल यह है।

राजा–(आगेचला। अधिकार के दुःख को सूचन करता) सब अपना बांछित पाकर प्रसन्नताको प्राप्त होते हैं मनुष्य। परन्तु राजातो सदैव चिंतामें रहता है।

शिखरिणी–

अहो देखो राज्या कुछ नहिं घनाये सुख करै।
प्रजाका जो मैं हूँ करत प्रति पाला सुख हरै॥
न मैं दुःखी होता अपितु न सुखी होत सबना।
बड़े छत्तेको ज्यों पकड़ दुख भी औ सुख ठना॥ ६॥

(नेपथ्यमें।)

दो ढाढ़ी–जयहो महाराजकी।

पहिला– कड़खा–

निज कारण दुख नाशहो, सहो पराये काज।
राजकुलन व्यवहार यह, सो पालहु महराज॥
अपने शिरपर लेत हैं, बर्षा शीतरु घाम।
जिमि तरुवर हित पथिकके, निजतर दै विश्राम॥ ७॥

दूसरा–

---

१ प्रतीहारीके लक्षण="मिलाप से और वैरसे भये बहुत से कार्योंको जतानेवाली प्रतीहारी कहाती है" यह लक्षण मातृगुप्ताचार्योंने कहे हैं।

मूलम्

नियमयसि कुमार्गप्रस्थितानात्तदण्डः
प्रशमयसि विवादं कल्पसे रक्षणाय ॥
अतनुषु विभवेषु ज्ञातयःसन्तु नाम
त्वयि तु परिसमाप्तं बन्धुकृत्यं प्रजानाम् ॥ ८ ॥

राजा—एतेक्लान्तमनसः पुनर्नवीकृताःस्मः ।

(इतिपरिक्रामति।)

प्रतीहारी—अभिनवसंमार्जनसश्रीकः संनिहितहोमधेनुरग्निशरणालिंदः। आरोहतुदेवः ।

राजा—(आरुह्यपरिजनांसावलम्बीतिष्ठति।) वेत्रवति, किमुद्दिश्यभगवताकाश्यपेनमत्सकाशमृषयः प्रेषिताःस्युः ।

किंतावद्व्रतिनामुपोढतपसां विघ्नैस्तपोदूषितं
धर्मारण्यचरेषुकेनचिदुतप्राणीष्वसच्चेष्टितम् ॥
आहोस्वित्प्रसवोममापचरितैर्विष्टम्भितोवीरुधा
मित्यारूढबहुप्रतर्कमपरिच्छेदाकुलंमेमनः ॥ ९ ॥

प्रतीहारी—सुचरितनन्दनऋषयोदेवं सभाजयितुमागताइतितर्कयामि । (ततःप्रविशन्तिगौतमीसहिताः शकुन्तलांपुरस्कृत्यमुनयः। पुरश्चैषांकञ्चुकी पुरोहितश्च)।

टीका

छप्पय–दुष्ट जनन बशकरन लेत जब दंड प्रचंडहि।
देत दंड उन नरन चलत मर्य्याद जो छंडहि॥
करत प्रजा प्रतिपाल कलह के मूल विनाशहि।
जिहि निमित्त नृप जन्म धर्म सब करत प्रकाशहि॥
महाराज दुष्यन्तजू चिरजीवो नित नवल वय।
मेटि विघ्न उत्पात सब प्रजहिं करि राखो अभय॥
दोहा–धन वैभवतो और भी बहुत क्षत्रियन माहिं।
सबजन बंधुसमानहों ऐसा कोई नाहिं॥ ८॥

राजा–यह रागसुन कर मेरा दुख दूरहोकर चित्त नयासा होगयाहै॥ (फिरगया।)

प्रतीहारी–यह द्वार जिस में होम धेनु बंधी है और झाड़ पोंछकर स्वच्छ किया है सो यज्ञस्थानका है। पधारिये।

राजा–(नौकरोंके कंधों पर सहारा लेकर दुष्यंत अग्निस्थानकी देहली पर गया।) वेत्रवति, कण्वमुनिने क्या संदेशा देकर ऋषि भेजेहैं। कवित्व–

क्या कुछ विघ्न हुवा उनको मुनि जो तप साधतहैं वन में।
या कहिं कर्म कुकर्म भया दुष्टों करिके जु तपोवन में॥
अथवा फल फूल न आवत हैं तरुयें मम पाप उगेतन में।
यहि विधि सोचतहूं चितमें अरु खेद बड़ा मेरे मन में॥ ९॥

प्रतीहारी–मेरेजान ये तपस्वी महाराज के सुकर्मों से प्रसन्न होकर धन्यवाद देने आये हैं॥

(गौतमीके साथ शार्ङ्गरव शारद्वत शकुन्तलाको अगाड़ी किये आये। उनके आगे कंचुकी और पुरोहित।)

मूलम्

कञ्चुकी—इतइतोभवन्तः।

शार्ङ्गरवः—शारद्वत।

महाभागःकामंनरपतिरभिन्नस्थितिरहो
नकश्चिद्वर्णानामपथमपकृष्टोपिभजते ॥
तथापीदंशश्वत्परिचितविविक्तेनमनसा
जनाकीर्णं मन्ये हुतवहपरीतं गृहमिव ॥ १० ॥

शारद्वतः—जानेभवान्पुरप्रवेशादित्थंभूतः संवृत्तः। अहमपि।

अभ्यक्तमिवस्नातः शुचिरशुचिमिवप्रबुद्धइवसुप्तम्।
बद्धमिवस्वैरगतिर्जनमिहसुखसंगिनमवैमि ॥ ११ ॥

शकुन्तला-(निमित्तंसूचयित्वा।) अहोकिंमेवामेतरन्नयनंविस्फुरति।

गौतमी—जाते प्रतिहतममङ्गलम्। सुखानितेभर्तृकुलदेवतावितरन्तु।

(इति परिक्रामति।)

पुरोहितः-(राजानंनिर्दिश्य।) भोभोस्तपस्विनः असावत्रभवान्वर्णाश्रमाणां रक्षिताप्रागेवमुक्तासनोयः प्रतिपालयति। पश्यतैनम् ॥

शार्ङ्गरवः—भोमहाब्राह्मणकाममेतदभिनन्दनीयंतथापि वयमत्रमध्यस्थाःकुतः।

टीका

कंचुकी–इधरआओ महात्माओ इस मार्ग आओ।

शार्ङ्गरव–हे मित्र शारद्वत,

शिखरिणी–

इसी राजाके तो सबहि सुख आधीन रहते।
सभी का ये राजा सफल सब सन्मान करते॥
भलाभी है येतो तदपि मन मोरा जलत है।
तपोभूमी स्थायी मम चित इसीसे खलत है॥ १०॥

शारद्वत–सत्य है मैं जानता हूं कि नगरमें धसने से तुमको ऐसा जानपड़ता है और मैंभी।

चौपाई–

स्नान किये को तेललगाया। शुद्धभये को अशुची काया॥
जागतको जिमि सोवत संगा। बँधुये से स्वतंत्र तिमि टंगा॥
यहि बिधि से मिलते दुख होई। सुखी संग मम लागत सोई॥११॥

शकुन्तला–(बुराशकुनदेखकर।) हाय मेरी दाहिनी आँख क्यों फरकती है।

गौतमी–दैव कुशल करेगा तेरे भर्ता के कुलदेव अमंगलों को दूरकरके तुझे सुख देंगे।

(सब आगेको बढ़े)

पुरोहित–(राजाको बताकर।) हे तपस्वियो! वर्णाश्रमकी रक्षा-करनेवाले महाराज आसनपर बैठे तुम्हारी बाट हेरते हैं। देखो।

शार्ङ्गरव–यही हमारी चाहथी। पर तौभी हम मध्यस्थहैं क्योंकि।

मूलम्

भवन्तिनम्रास्तरवः फलागमै-
र्नवाम्बुभिर्दूरविलम्बिनोघनाः ॥
अनुद्धताः सत्पुरुषाःसमृद्धिभिः
स्वभावएवैषपरोपकारिणाम् ॥ १२ ॥

प्रतीहारी–देवप्रसन्नमुखवर्णादृश्यन्ते । जानामिविश्र
ब्धकार्याऋषयः।

राजा–(शकुन्तलांदृष्ट्वा ।) अथात्रभवती ।
कास्विदवगुण्ठनवतीनातिपरिस्फुटशरीरलावण्या ॥
मध्येतपोधनानांकिसलयमिवपाण्डुपत्राणाम् ॥ १३ ॥

प्रतीहारी–देवकुतूहलगर्भोपहितोनमेतर्कःप्रसरति । न
नुदर्शनीयापुनरस्याआकृतिर्लक्ष्यते।

राजा–भवतु अनिर्वर्णनीयंपरकलत्रम्।

शकुन्तला–(हस्तमुरसिकृत्वा । आत्मगतम् ।) हृदय
किमेवंवेपसे । आर्यपुत्रस्यभावमवधार्यधीरन्ताव
द्भव।

पुरोहितः–(पुरोगत्वा ।) एते विधिवदर्चितास्तपस्वि
नः। कश्चिदेषामुपाध्यायसंदेशः। तंदेवःश्रोतुमर्हति।

राजा–अवहितोऽस्मि।

ऋषयः–(हस्तानुद्यम्य ।) विजयस्व राजन्।

राजा–सर्वानभिवादये।

टीका

चौपाई—

फलन फलत तरु झुकतहि नीचे। झुकत मेघ नव जल जो सींचे।
भले पुरुष संपति से तैसे। नर परोपकारी हों ऐसे ॥ १२ ॥

प्रतीहारी—महाराज ये ऋषिलोग आपके सन्मुख चलेआते हैं। इस से आप में इन का स्नेह दिखाई देता है।

राजा—(शकुन्तला को देखकर।) अहा यह नारी कौन है।

सोरठा—

झलकत है किमि रूप, घूंघट वाली नारि यह।
सोहत रूप अनूप, तपो धनों के बीच में॥

चौपाई—

दीप्यमानहैं मानों कैसे। पीले पत्तों कोंपल जैसे ॥ १३ ॥

प्रतीहारी—महाराज आश्चर्य से भरा मेरी तर्कतो चल नहीं सकी। पर रूप इसका दर्शन योग्य है ॥

राजा—रहनेदो परायी स्त्री देखनी उचित नहीं है।

शकुन्तला—(आपहीआप अपने हृदयपै हाथ रख के) हे हृदय तू क्यों धड़कता है। राजाके प्रथम मिलाप का ध्यान करके धीरज धर।

पुरोहित—(आगेजाकर।) इन तपस्वियों का आदर सत्कार विधिपूर्वक हो चुका। ये अब अपने गुरूका संदेशा लाये हैं सुन लीजिये।

राजा—सावधानहूं।

दोनोंऋषि—(हाथ उठाकर।) महाराज की जय।

राजा—तुम सबको मैंभी प्रणाम करता हूं।

मूलम्

ऋषयः–इष्टेनयुज्यस्व।
राजा–अपिनिर्विघ्नतपसोमुनयः।

ऋषयः–

कुतोधर्मक्रियाविघ्नाःसतांरक्षितरित्वयि। तमस्तप
तिघर्मांशौ कथमाविर्भविष्यति।

राजा–अर्थवान्खलुमेराजशब्दः। अथभगवाँल्लोकानु
ग्रहायकुशलीकाश्यपः।

ऋषयः–स्वाधीनकुशलाः सिद्धिमन्तः। सभवन्तमनाम
यप्रश्नपूर्वकमिदमाह।

राजा–किमाज्ञापयतिभगवान्।

शार्ङ्गरवः–यन्मिथःसमयादिमांमदीयांदुहितरं भवानुपा
यंस्ततन्मयाप्रीतिमतायुवयोरनुज्ञातम्। कुतः।

त्वमर्हतांप्राग्रसरः स्मृतोसिय
च्छकुन्तलामूर्तिमतीचसत्क्रिया॥
समानयंस्तुल्यगुणं वधूवरं
चिरस्यवाच्यंनगतःप्रजापतिः॥ १५॥

तदिदानीमापन्नसत्त्वा प्रतिगृह्यतां सहधर्मचारणा
येति।

गौतमी–आर्यकिमपिवक्तुकामास्मि। नमेवचनावसरो
स्ति। कथमिति।

नापेक्षितोगुरुजनोऽनयानखलुपृष्टश्चबन्धुजनः।
परस्परस्मिन्नेवचरितेभणामिकिमेकैकम्॥ १६॥

टीका

दो०ऋषि–आपका कल्याणहो।

राजा–तुम्हारे तपमें तो भंग कुछ नहीं पड़ा।

सबऋषि–

कहाँ धर्म क्रियों विघ्नाभले रक्षाकरो तुम्हीं ॥ सूर्य तापे अँधेरा ये कैसें आवे तुम्हीं कहो ॥ १४ ॥

राजा–अब मेरा राजशब्द यथार्थ है। लोकके अनुग्रहको मुनि कण्व प्रसन्नहैं।

ऋषि–महाराज कुशल तो तपस्वियों के सदा आधीन है। गुरुने आपकी अनामय पूछकर यह कहा है।

राजा–क्या आज्ञाकी है।

शार्ङ्गरव–कि आपका इस कन्यासे विवाह हुआ सो हमने प्रसन्नतासे अंगीकार किया। क्योंकि।

दोहा–

पुत्री ये मम शीलता लेहु शिरोमणि राज।
विधिका सम जोड़ी मिले मिटा उलहना आज ॥ १५ ॥

शकुन्तला तुमसे गर्भवती है अब इसको अपने रनवासमें लो दोनों मिलके शास्त्रानुसार व्यवहार करो।

गौतमी–हे राजा मेरी कुछ कहनेकी इच्छा है। पर कहनेका समय नहीं मिला। यह कैसे कि।

सोरठा–

बंधुन पूँछे आप, याने गुरु पूँछे नहीं।
प्रेम किया सब आप, मेरा क्या कहना रहा॥ १६ ॥

मूलम्

शकुन्तला–(आत्मगतम्।) किंनुखल्वार्यपुत्रोभणति।
राजा–किमिदमुपन्यस्तम्।
शकुन्तला–(आत्मगतम्।) पावकः खलुवचनोप न्यासः।
शार्ङ्गरवः–कथमिदंनाम। भवन्तएवसुतरांलोकवृत्तांत निष्णाताः।

सतीमपिज्ञातिकुलैकसंश्रयां
जनोन्यथाभर्तृमतींविशङ्कते॥
अतः समीपेपरिणेतुरिष्यते
प्रियाप्रियावाप्रमदास्वबन्धुभिः॥ १७॥

राजा–किंचात्रभवती परिणीतपूर्वा।
शकुन्तला–(सविषादम्। आत्मगतम्।) सांप्रतंत आशंका।
शार्ङ्गरवः–

किंकृतकार्यद्वेषो धर्मं प्रति विमुखताकृतावज्ञा॥

राजा–कुतोऽयमसत्कल्पनाप्रश्नः।
शार्ङ्गरवः–

मूर्च्छन्त्यमी विकाराःप्रायेणैश्वर्यमत्तेषु॥ १८॥

राजा–विशेषेणाधिक्षिप्तोस्मि।
गौतमी–जातेमुहूर्तमालज्जस्व। अपनेष्यामितावत्तेव गुण्ठनम्। ततस्त्वांभर्ताभिज्ञास्यति। (इतियथोक्तं करोति।)

टीका

शकुन्तला-(आपही आप ।) देखूं अब यह क्या कहै ।

राजा-यह क्या वृत्तान्त है ।

शकुन्तला-(आपही आप) यह आग भरावचन है ।

शार्ङ्गरव-यह ऐसे क्यों कहा । राजा तुम लोकाचारकी सबबातों को जानते हो ।

छंद-

यदि कामिनी होतो पिताके घरौंना रहना चहै ।
कुलकी भलीहो तौभि जग असती तिसे तो यों कहै ॥
इससे तुम्हारा प्यारहो चाहो नहीं तुमसे रहै ।
तुमरे घरोंमें ये रहै तिससे सभी अच्छीकहै ॥ १७ ॥

शकुन्तला- (उदास होकर आपही आप) अरे मन जो तुझे डर था सो आगे आया ।

शार्ङ्गरव-

सोरठा-

धर्म पलटते राज, किये काम से वैर अब ॥

राजा-तुम किस भरोसे पर इस निर्मूल कहानी को सच्ची बनाया चाहते हो ।

शार्ङ्गरव-

ईश्वर मदसे आज, यह विकार दिखते नहीं ॥ १८ ॥

राजा-तुमने मुझे बहुतही नीचा गिराया ॥

गौतमी-हे पुत्री । अब बहुत लाज मतकर ला मैं तेरा घूँघट खोलदूं जिससे तेरा भर्ता तुझे पहिचानले । (घूँघटखोलदिया ।)

मूलम्

राजा–(शकुन्तलांनिर्वर्ण्य । आत्मगतम् ।)

इदमुपनतमेवंरूपमक्लिष्टकान्ति प्रथमपरिगृहीतंस्यान्नवेतिव्यवस्यन् ॥ भ्रमरइवविभातेकुन्दमन्दस्तुषारं नचखलुपरिभोक्तुंनैवशक्नोमिहातुम् ॥ १९ ॥

(इतिविचारयन्स्थितः ।)

प्रतीहारी–अहोधर्मापेक्षितोभर्तुः । ईदृशंनामसुखोपनतंरूपंदृष्ट्वाकोऽन्योविचारयति ।

शार्ङ्गरवः–भोराजन्, किमितिजोषमास्यते ।

राजा–भोस्तपोधनाः चिंतयन्नपिनखलुस्वीकरणमत्रभवत्याः स्मरामितत्कथमिमामभिव्यक्तसत्त्वलक्षणांप्रत्यात्मानंक्षेत्रिणमाशङ्कमानः प्रतिपत्स्यते ।

शकुन्तला–(अपवार्य ।) आर्यस्यपरिणयएव संदेहः । कुतइदानींमेदूराधिरोहिण्याशा ।

शार्ङ्गरवः–मा तावत् ।

कृताभिमर्षामनुमन्यमानः सुतांत्वयानाममुनिर्विमान्यः । मुष्टंप्रतिग्राहयतास्वमर्थं पात्रीकृतोदस्युरिवासियेन ॥ २० ॥

शारद्वतः–शार्ङ्गरव विरमत्वमिदानीम् ।
शकुन्तले,वक्तव्यमुक्तमस्माभिः । सोऽयमत्रभवानेवमाह । दीयतामस्मैप्रत्ययप्रतिवचनम् ।

टीका

राजा—(शकुन्तला को देखकर आपही आप ।)

छंद—

विचारताहुं मैं जभी, विवाहिता कि ना कभी ।
जुचित्त मोर ये तभी, उसी दशा गया अभी ॥
किज्यों भ्रमें भ्रमैंर कुंद, होत ओस पातबुंद ।
भूमता तु अंध धुंद, छोड़भी सकैन कुंद ॥ १६ ॥

(ऐसे विचारता भया ।)

प्रतीहारी—महाराज ! अपने धर्म और अधिकार में सावधान हैं नहीं तो ऐसे स्त्रीरत्नको देख कौन और विचारता है ।

शार्ङ्गरव—महाराज ! क्यों चुप होरहे ।

राजा—हे तपस्त्री मैं बारबार सुध करताहूं परन्तु स्मरण नहीं होता कि इस स्त्री को कब मैंने बिवाही । और यह बात क्षत्रियधर्म से विरुद्धहै कि जिसको पराया गर्भ हो उसे मैं अपने रन-वास मेंलूं ।

शकुन्तला—(आपहीआप) हे दैव ! जो मेरे संग बिवाहही होने में सन्देहहै तो अब मेरी वहुत दिनकी लगी आशाटूटी ।

शार्ङ्गरव—महाराज ऐसा वचन मतकहो

सोरठा—

क्षमापाप कर चाहि, भले ऋषीने पुत्रिदे ।
भलाकरै अरु ताहि, जिमि चोरीसो वस्तुदे ॥ २० ॥

शारद्वत—शार्ङ्गरव, तुमठहरो ।

अब तू कुछ आपही पता बताकर अपने पतिको सुधि दिला यह तुझे भूलाजाताहै ।

मूलम्

शकुन्तला–(अपवार्य।) इदमवस्थान्तरंगतेतादृशेऽनुरागेकिंवास्मारितेन। आत्मेदानींशोचनीयइतिव्यवसितमेतत्। (प्रकाशम्।) आर्यपुत्र, (इत्यर्धोक्ते।) संशयितइदानींनैषसमुदाचारः। पौरवनयुक्तंनामतेतथापुराश्रमपदेस्वभावोत्तानहृदयमिमंजनंसमयपूर्वंप्रतार्येदृशैरक्षरैःप्रत्याख्यातुम्।

राजा–(कर्णौपिधाय।) शान्तंपापम्। व्यपदेशमाविलयितुंकिमीहसेजनमिमंचपातयितुम्। कूलंकषेवसिंधुःप्रसन्नमम्भस्तटतरुंच॥ २१॥

शकुन्तला–भवतु। यदिपरमार्थतःपरपरिग्रहशंकिनात्वयैवंवक्तुंप्रवृत्तं तदभिज्ञानेनानेनतवशंकामपनेष्यामि।

राजा–उदारःकल्पः।

शकुन्तला–(मुद्रास्थानंपरामृश्य।) हाधिक्। अंगुलीयकशून्यामेंगुलिः। (इतिसविषादंगौतमीमवेक्षते)।

गौतमी–नूनंतेशक्रावताराभ्यंतरेशचीतीर्थसलिलंवन्दमानायाः प्रभ्रष्टमंगुलीयकम्।

राजा–(सस्मितम्।) इदंतत्प्रत्युत्पन्नमतिस्त्रैणमितियदुच्यते।

शकुन्तला–अत्रतावद्विधिनादर्शितंप्रभुत्वम्। अपरंतेकथयिष्यामि।

टीका

शकुन्तला—(आपही आप) जो वह स्नेहही नहीं रहा तौ अब सुधि दिलाये क्या होता है। और जो इस जीवको दुःख ही बदाहै तौ कुछ बश नहीं है परन्तु इससे दो बातें तो अवश्य करूंगी (प्रकट।) हे आर्यपुत्र, (फिर रुक गई।) और जो कुछ इस शब्द में संदेहहै तो हे पुरुवंशी! यह तुम को उचित नहीं है कि आगे तपोवन में ऐसी प्रीति बढ़ाई और अब ये निठुर वचन कहते हो॥

राजा—(कानों पै हाथ धरके।) पाप कटा।

दोहा—तटसे खसके जो नदी चलत छोड़ मर्य्याद।
गिंदलाजल अरु गिरततरु शोभाकी फर्य्याद॥

चौपाई—

तिमि कलंक तू मोहिं लगावै। तेरे हाथ भला क्या आवै॥२१॥

शकुन्तला—हो सो हो। जो तुम सुधि भूलकर सत्यही मुझे परनारी समझेहो तौ लो मैं पते के लिये तुम्हारे हाथ की ही मुँदरी देती हूँ।

राजा—अच्छा न्याय है।

शकुन्तला—(उंगुली को देखकर।) हाय हाय मुँदरी कहाँगई। (बड़ी व्याकुलता से गौतमी की ओर देखती भई।)

गौतमी—जब तैंने शक्रावतारके निकट शचीतीर्थ में जल आचमन किया था तब मुँदरी गिरगई होगी।

राजा—(मुसक्याकर)) यही त्रियाचरित्र है।

शकुन्तला—यह विधिने अपना बदला दिखाया पर और मैं अभी एक पता दूंगी।

मूलम्

राजा—श्रोतव्यमिदानींसंवृत्तम् ।

शकुन्तला—नन्वेकस्मिन्‌दिवसे नवमालिकामण्डपे नलिनीपत्रभाजनगतमुदकंतवहस्तेसंनिहितमासीत् ।

राजा—शृणुमस्तावत् ।

शकुन्तला—तत्क्षणेसमेपुत्रकृतको दीर्घापाङ्गोनाममृगपोतकउपस्थितः । त्वयायंतावत्प्रथमं पिबत्यनुकम्पिनोपच्छंदितउदकेन । नपुनस्तेऽपरिचयाद्धस्ताभ्यासमुपगतः । पश्चात्तस्मिन्नेवमयागृहीतेसलिलेऽनेनकृतःप्रणयः । तदात्वमित्थंप्रहासितोसि । सर्वःसगन्धेषुविश्वसिति । द्वावप्यत्रावरण्यकाविति ।

राजा—एवमादिभिरात्मकार्यनिर्वर्तिनीनामनृतमयवाङ्मधुभिराकृष्यन्तेविषयिणः ।

गौतमी—महाभागनार्हस्येवंमंत्रयितुम् । तपोवनसंवर्धितोऽनभिज्ञोऽयंजनःकैतवस्य ।

राजा—तापसवृद्धे ।

स्त्रीणामशिक्षितपटुत्वममानुषीषु संदृश्यतेकिमुतयाःप्रतिबोधवत्यः ॥ प्रागन्तरिक्षगमनात्स्वमपत्यजातमन्यैर्द्विजैःपरभृताःखलुपोषयन्ति ॥ २२ ॥

शकुन्तला—(सरोषम् ।) अनार्यआत्मनोहृदयानुमानेनपश्यसि ।

टीका।

राजा—सुनने योग्य कहा।

शकुन्तला—उस दिनकी सुधि है या नहीं जब आपने माधवी कुं-
जमें कमलके पत्तेसे जल अपने हाथ में लिया था।

राजा—सुनतेहैं हाँ।

शकुन्तला—उसी छिन एक मृगछौना जिसको मैंने पुत्रकी भाँति
पाला था आगया आपने बड़े प्यारसे कहा कि आ बच्चे पहि-
ले तूही पानी पीले। उसने तुम्हें विदेशी जान तुम्हारे हाथसे
जल न पिया। मेरे हाथसे पीलिया। तब तुमने हँसकर कहा
कि सब कोई अपनेही संघाती को पत्याता है। तुम दोनों
एकही बनके बासी हो। और एकसे मनोहर हो।

राजा—स्त्रियोंके चतुर मधुर वचनोंहींसे तो कामी मनुष्यों का मन
डिगता है।

गौतमी—बस राजा ऐसे कठोर वचन कहने योग्य नहीं हो यह क-
न्या तपोवन में पली है यह दुखिया छल क्या जानें।

राजा—हे तपस्विवृद्धे।

छंद द्रुतविलम्बित—

यदि सिखाइ नहीं अबला यही।
तदपिहों चतुराइ जनों सही॥
जिमिहि कोयल संतति औरही।
पँछिनसों पलवावति ठौरही॥ २२॥

शकुन्तला—(क्रोधकरके।) हे निर्लज्ज! तूं अपना सा कुटिल
हृदय सबका जानता है।

मूलम्

कइदानीमन्योधर्मकञ्चुकप्रवेशिनस्तृणच्छन्नकूपोपम
स्यतवानुकृतिं प्रतिपत्स्यते।

राजा-(आत्मगतम्।) संदिग्धबुद्धिंमांकुर्वन्नकैतवइ
वास्याः कोपोलक्ष्यते॥ तथाह्यनया।

मय्येवविस्मरणदारुणचित्तवृत्तौ वृत्तंरहः प्रणयम
प्रतिपद्यमाने ॥ भेदाद्भ्रुवोःकुटिलयोरतिलोहिता
भग्नंशरासनमिवातिरुषास्मरस्य ॥ २३ ॥

(प्रकाशम्।) भद्रेप्रथितंदुष्यन्तस्यचरितम्। त
थापीदन्नलक्षये॥

शकुन्तला-सुष्ठुतावदत्रस्वच्छंदचारिणी कृतास्मियाह
मस्यपुरुवंशप्रत्ययेनमुखमधोर्हृदयस्थितविषस्यह
स्ताभ्यासमुपगता।

(इति पटान्तेनमुखमावृत्यरोदिति।)

शार्ङ्गरवः-इत्थमात्मकृतं परिहतंचापलंदहति।

अतःपरीक्ष्यकर्तव्यंविशेषात्संगतंरहः। अज्ञातहृद
येष्वेवंवैरीभवतिसौहृदम्॥ २४ ॥

राजा -अयिभोःकिमत्रभवतीप्रत्ययादेवास्मान्संयुतदो
षाक्षरैः क्षिणुथ।

शार्ङ्गरवः-(सासूयम्।) श्रुतंभवद्भिरधरोत्तरम्॥

आजन्मनःशाठ्यमशिक्षितोयस्तस्याप्रमाणंवचनंज
नस्य ॥ परातिसंधानमधीयतेयैर्विद्येतितेसन्तुकिला
प्तवाचः॥ २५ ॥

टीका

तुझसा पाखंडी और कपटी राजा न कोई पृथ्वी पर हुआहै न होगा तैंने धर्म के वेषमें कपट ऐसे दुराया है मानों गहिरे कुँयेका मुख घास फूससे ढका है ॥

राजा—(आपहीआप ।) इसका कोप मेरे मनमें सन्देह उपजाता है कि इसका कहना कहीं सच्चा न हो । वैसेही इसने ।

चौपाई—

मैं भूला इससे यह ऐसे । कटूवचन बोलै अरु रोसे ॥
तिसीरूप से ठगा गयाना । लाल होठकर भौंको ताना ॥
सो सोहत है मानों कैसे । कामधनुष टूटा हो जैसे ॥२३॥

(प्रकट ।) हे बाला ! दुष्यन्तके शीलस्वभावको सबजानते हैं तेरा प्रयोजन क्या है सो कह ।

शकुन्तला—अच्छी अब आपने निज इच्छासे वर्तने वाली (जारिणी) की । जो मैं पुरुवंशी राजाके विश्वाससे मुखमें अमृत और हृदय में विषतुल्यके हाथमें पड़ी । (घूँघटकर रोनेलगी)-

शार्ङ्गरव—इस राजा की चपलता देख कर मेरा मन लजाता है परीक्षा विन पहिलेही संग करना न एकला ॥ न ज्ञातहृदया जिनका फिर बैरीउ होतहैं ॥ २४ ॥

राजा—क्यों हो ! क्या तुम इसी की चिकनी चुपड़ी बातोंको प्रतीति कर मुझे दोष में डालतेहो ।

शार्ङ्गरव—(अवज्ञा करके ।) उत्तरथा सो सुन लिया ।

ले जन्म से शठपना जिसने न सीखा तिसका प्रमाण बचनोंहि नमानतेहो ॥ बैरी कु मारन निमित्त पढ़ीहविद्या सबैबनेहैं अब वे तुम देखलो सो ॥ २५ ॥

मूलम्

राजा—भोःसत्यवादिन् अभ्युपगतं तावदस्माभिरेवम्।
किंपुनरिमामतिसंधायलभ्यते॥

शार्ङ्गरवः—विनिपातः।

राजा—विनिपातः पौरवैःप्रार्थ्यतइतिनश्रद्धेयम्।

शारद्वतः—शार्ङ्गरव,किमुत्तरेण। अनुष्ठितोगुरोःसंदेशः।
प्रतिनिवर्तामहेवयम्। (राजानंप्रति।)
तदेषाभवतः कान्तात्यज वैनांगृहाणवा॥ उपपन्नाहि
दारेषु प्रभुतासर्वतोमुखी॥ २६॥
गौतमिगच्छाग्रतः।

(इतिप्रस्थिताः।)

शकुन्तला—कथमनेनकितवेनविप्रलब्धास्मि। यूयमपि
मांपरित्यजथ। (इत्यनुप्रातिष्ठते।)

गौतमी—(स्थित्वा।) वत्स शार्ङ्गरव, अनुगच्छतीयंख
लुनःकरुणपरिदेविनीशकुन्तलाप्रत्यादेशपरुषेभर्त
रिकिंवामेपुत्रिकाकरोतु।

शार्ङ्गरवः—(सरोषंनिवृत्य।) किंपुरोभागेस्वातन्त्र्यम
वलम्बसे।

(शकुन्तलाभीतावेपते।)

शार्ङ्गरवः—शकुन्तले।
यदियथावदतिक्षितिपस्तथात्वमसिकिंपितुरुत्कालि
तात्वया। अथतुवेत्सिशुचिव्रतमात्मनःपतिकुलेतवदा
स्यमपिक्षमम्॥ २७॥

टीका

राजा—तुम बड़े सत्यवादी हो ठीक कहतेहो मैं ऐसाहीहूं। परन्तु यह कहो इस स्त्री को मुझे दोष लगाने से क्या मिलेगा।
शार्ङ्गरव—भारी विपत्ति।
राजा—नहीं पुरुवंशियों के भाग्य में विपत्ति कहीं नहीं लिखी।
शारद्वत—हे शार्ङ्गरव। इस वाद से क्या अर्थ निकलेगा। हम तो गुरुका संदेशा लायेथे सो भुगताचुके अब चलो। (राजाको।)
आपकी स्त्रीह चाहेतो छोड़ो रक्खो चहो सुतुम्॥ स्त्रीमें तो
प्रभुता पाके चाहे जैसा करो तिसे॥ २६॥
गौतमी चल आगे

(सबचले।)

शकुन्तला—हाय हाय यह तो छलिया निकला अब क्या तुमभी मुझे छोड़ जाओगे। (उनके पीछे चल खड़ीहुई।)
गौतमी—(पीछे फिरकर।) बेटा शार्ङ्गरव शकुन्तला तो विलाप करती यह पीछे पीछे आती है। दुखिया को निर्मोही पतिने छोड़ दिया अब यह क्या करे।
शार्ङ्गरव—(क्रोधकरलौटके।) हे अभागिनि तू पतिके औगुन देख कर स्वतन्त्र हुआ चाहती है। (शकुन्तला डरके काँपनेलगी।)
शार्ङ्गरव—हे शकुन्तला!।

दोहा—

पिता घरों चलना नहीं सजता है अब तोय।
जैसी राजा कहतहैं तैसीही यदि होय॥

चौपाई—

जो तू शुद्धचित्तसे अहई। दासी बन भी तू इत रहई॥ २७॥

मूलम्

तिष्ठ। साधयामोवयम्।

राजा—भोस्तपस्विन् किमत्रभवतीं विप्रलभसे।

कुमुदान्येवशशांकः सविताबोधयतिपङ्कजान्येव।
वशिनांहिपरपरिग्रहसंश्लेषपराङ्मुखीवृत्तिः॥ २८॥

शार्ङ्गरवः—यदातुपूर्ववृत्तमन्यसंगाद्विस्मृतोभवांस्तदाक थमधर्मभीरुः।

राजा—भवन्तमेवात्रगुरुलाघवंपृच्छामि।

मूढःस्यामहमेषावा वदेन्मिथ्येतिसंशये॥ दारत्या गीभवाम्याहो परस्त्रीस्पर्शपांशुलः॥ २९॥

पुरोहितः—(विचार्य) यदितावदेवं क्रियताम्।

राजा—अनुशास्तुमांभवान्।

पुरोहितः—अत्रभवतीतावदाप्रसवादस्मद्गृहेतिष्ठतु। कुतइदमुच्यतइतिचेत्। त्वंसाधुभिरुद्दिष्टःप्रथममेव चक्रवर्तिनंपुत्रंजनयिष्यसीति।
सचेन्मुनिदौहित्रस्तल्लक्षणोभविष्यति।
अभिनन्द्यशुद्धान्तमेनांप्रवेशयिष्यसि। विपर्ययेतु पितुरस्याःसमीपनयनमवस्थितमेव

राजा—यथागुरुभ्योरोचते।

पुरोहितः—वत्से, अनुगच्छमाम्।

शकुन्तला—भगवति वसुधे, देहि मे विवरम्।

टीका

अब तू यहीं ठहर हम आश्रम को जाते हैं।

राजा–हे तपस्वी! क्यों इसे झूठी आशा देते हो।

दोहा–

कुमुदों को चन्दा करै कमलों को रवि बोध॥
वशीपरस्त्री नाहिं लें यही चित्त की शोध॥ २५॥

शार्ङ्गरव–सत्य है परन्तु तू ऐसा पुरुष है कि अधर्म और अकीर्ति से डरता है तौभी अपनी विवाहिता को छोड़ते नहीं लजाता।

राजा–तौ आपही से बड़ी छोटी पूछता हूँ।

नाजानों भूल इस की है मेरी है या तुम्हीं कहो॥ परस्त्री को जु लेऊँ वा स्वकीयाको जु छोड़दूँ॥ २६॥

पुरोहित–(बहुत सोच के।) तौ अच्छा ऐसा करना चाहिये।

राजा–आप मेरे को आज्ञा करो।

पुरोहित–यह कि जबतक इस के पुत्र का जन्महो तबतक मेरेघर में निवास करने दो॥ अच्छे अच्छे ज्योतिषियोंने आगे ही कह रक्खाहै कि आपके चक्रवर्ती पुत्र होगा। सो कदाचित् इस मुनिकन्या के ऐसाही पुत्र जन्मे और उसके लक्षण चक्रवर्ती केसे पाये जायँ। तौ इसको रनवास में लेना। नहीं तो यह अपने पिता के आश्रम को जायगी।

राजा–अच्छा जो तुम्हारी इच्छा हो।

पुरोहित–आ पुत्री मेरे पीछे चली आ।

शकुन्तला–हे पृथ्वी! तू मुझे ठौरदे मैं समाजाऊं।

मूलम्

(इतिरुदतीप्रस्थिता निष्क्रान्ता सह पुरोधसा तपस्विभिश्च ।)

(राजा शापव्यवहितस्मृतिः शकुन्तलागतमेवचिन्तयति ।)

(नेपथ्ये ।)

आश्चर्यम् -

राजा-(आकर्ण्य) किंनुखलुस्यात् । (प्रविश्य ।)

पुरोहितः-(सविस्मयम् ।) देवअद्भुतंखलुसंवृत्तम् ।

राजा-किमिव ।

पुरोहितः-देवपरावृत्तेषु कण्वशिष्येषु ।

सानिन्दतीस्वानिभाग्यानिबालाबाहूत्क्षेपंक्रन्दितुंच प्रवृत्ता ॥

राजा-किंच ।

पुरोहितः-

स्त्रीसंस्थानंचाप्सरस्तीर्थमाराद्दुत्क्षिप्यैनां ज्योतिरेकं जगाम ॥ ३० ॥

(सर्वेविस्मयंरूपयन्ति ।)

राजा-भगवन् प्रागपिसोस्माभिरर्थःप्रत्यादिष्टएव । किं वृथातर्केणान्विष्यते । विश्राम्यतुभवान् ।

पुरोहितः-(विलोक्य ।) विजयस्व । (इति निष्क्रान्तः ।)

राजा वेत्रवति,पर्य्याकुलोस्मि । शयनभूमिमार्गमादेशय ।

प्रतीहारी-इतइतोदेवः । (इतिं प्रस्थिता ।)

टीका

(रोतीहुई पुरोहित के साथ तपस्वियों सहित शकुन्तलागई।)
(राजा गईभई शकुन्तलाही को सोचनेलगा पर शापके वश सुधि न आई।)

(नेपथ्यमें।)

अहा बड़ा आश्चर्य हुआ।

राजा—(कानलगाकर।) क्या हुआ। (पुरोहित फिर आया।)

पुरोहित—(जाके।) महाराज! बड़ा अचम्भा हुआ।

राजा—कैसें।

पुरोहित—जब यहाँसे कण्वके चेले निकल कर गये तब

ओ निन्दतीथी स्वभाग्यों कुबाला। बाहू फेंकै रोवने को प्रवृत्ता॥

राजा—तब क्या हुआ।

पुरोहित—

स्त्रीसाथा वो अप्सरातीर्थ आगे। ज्योतीलेके उड़गया वो नि-सेतो॥ ३०॥

(सब आश्चर्य करने लगे।)

राजा—मुझे पहिलेही भ्यास गयीथी कि इसमें कुछ छल है। सो हुआही है। अब इस में तर्क करना निष्फल है। तुम विश्राम करो।

पुरोहित—(देखके।) महाराज की जयहो। (बाहरगया।)

राजा—वेत्रवति! इस समय मेरा चित्त व्याकुल होरहा है। आतू-मुझे शयनस्थानकी गैल बतादे।

प्रतीहारी—इधरआओ इधरआओ।

मूलम्

राजा—

कामंप्रत्यादिष्टांस्मरामिनपरिग्रहंमुनेस्तनयाम् ॥ व-
लवत्तुदूयमानं प्रत्याययतीवमेहृदयम् ॥ ३१ ॥

(इति निष्क्रान्ताःसर्वे)

इति पञ्चमोऽङ्कः । ॥ ५ ॥

श्रीगणेशाय नमः ॥

अभिज्ञानशाकुन्तलन्नाटकम् ॥

षष्ठोऽङ्कः ।

(ततःप्रविशतिनागरिकःश्यालः पश्चाद्बद्धपुरुष
मादायरक्षिणौच ।)

रक्षिणौ—(ताडयित्वा ।) अरे कुम्भीरक कथय कुत्र त्वयै
तन्मणिबन्धनोत्कीर्णनामधेयराजकीयमङ्गुलीयकं
समासादितम् ।

पुरुषः—(भीतिनाटितकेन ।) प्रसीदन्तु भावमिश्राः ।
अहंनेदृशकर्मकारी ।

---

(१)"मान्योभावस्तुवक्तव्यः" इत्युक्तेर्भावेतिसंबोधनम् ।

टीका

(बाहरगई।)

राजा- सोरठा-

याद न आवे आश, शोचतहूं मैं बहुत ही।
करत शोच विश्वाश, मुनि पुत्री पाणिग्रहण॥ २१॥

(सबगये।)

पंचमअंकसमाप्त॥

इति लक्ष्मीनारायणसंकलितोऽयंपञ्चमोङ्कः॥ ५॥

श्रीगणेशाय नमः॥

अभिज्ञानशकुन्तला नाटक॥

छठवां अङ्क॥

(कोतवाल 'शाला, दो प्यादे एक मनुष्य को बांधेहुए लाये)

दोनों प्यादे-(बँधुए को पीटने भये।) अरे कुम्भिलक, बतला यह अँगूठी जिसके हीरेपर राजाका नाम खुदाभयाहै तेरे हाथ कहांसे आई ?।

कुम्भिलक-(कांपताहुआ।) मेरे पर प्रसन्न हो भावमिश्राओ॥ मैंने ऐसा कर्म नहीं किया है।

---

(१) भावमिश्र मानने योग्यहो उसको कहते हैं।

मूलम्

प्रथमः—किंशोभनोब्राह्मण इतिकलयित्वा राज्ञाप्रतिग्रहोदत्तः ।

पुरुषः—शृणुनेदानीम् । अहंशक्रावताराभ्यन्तरवासी धीवरः ।

द्वितीयः—पाटच्चर ! किमस्माभिर्जातिःपृष्टा ।

श्यालः—सूचक ! कथयतुसर्वमनुक्रमेण । मैनमन्तरेप्रतिबन्धय ।

उभौ—यदावुत्त आज्ञापयतिकथय ।

पुरुषः—अहंजालोद्गालादिभिर्मत्स्यबन्धनोपायैः कुटुम्बा भरणंकरोमि ।

श्यालः—(विहस्य ।) विशुद्धइदानीमाजीवः ।

पुरुषः—

सहजंकिलयद्विनिन्दितं नखलुतत्कर्मविवर्जनीयम् ॥ पशुमारणकर्मदारुणोऽनुकम्पामृदुरेवश्रोत्रियः ॥ १ ॥

श्यालः—ततस्ततः ।

पुरुषः—एकस्मिन्दिवसेखण्डशोरोहितमत्स्यो मयाकल्पितोयावत् । तस्योदराभ्यंतरइदंरत्नभासुरमंगुलीयं दृष्ट्वा पश्चादहंतस्यविक्रयायदर्शयन्गृहीतोभावमिश्रैः । मारयतवामुञ्चतवा । अयमस्यागमवृत्तान्तः ।

श्यालः—जानुक ! विस्रगन्धीगोधादीमत्स्यबन्धएवनिःसंशयम् ।

टीका

प० प्यादा—क्या तू कोई श्रेष्ठ ब्राह्मण है कि सुपात्र जान राजाने यह अंगूठी दक्षिणा में दीहो।

कुम्भिलक—सुनों। मैं शक्रावतार तीर्थ का धीमरहूँ।

दूसराप्यादा—अरे चोर! क्या हम तेरी जाति पांति पूछते हैं।

कोतवाल—हे सूचक! इसे अपना सब वृत्तान्त कहने दो। जब तक यह कहै तब तक इसे बाँधो मारो मत।

दोनों प्या॰—सुनता है रे! जैसे जीजा कहैं वैसाकर।

कुम्भिलक—मैंतो जाल बंशी में मछली पकड़के अपने कुटुम्बका पालन करता हूँ।

कोतवाल—(हँसकर।) तेरी बहुत अच्छी आजीविका है॥

कुम्भिलक—

सोरठा—

जो स्वभाव का कर्म, पशु मारण नहिं निंदिये।
श्रोत्रिनका यह धर्म, दया बहुतही होतहै॥ १॥

कोतवाल—अच्छा कहेजा।

कुम्भिलक—एक दिन एक रोहू मछली मैंने पकड़ी उसके पेट में यह हीरा जड़ी अँगूठी निकली इसे बेचनेके लिये मैं दिखला रहाथा तबतक तुमने आथामा। इतनाही अपराध मेराहै। अब जैसा चाहो वैसा करो। चाहो मारो चाहो छोड़ो।

कोतवाल—सत्य है इस अँगूठी में मछलीकी बास आती है।

मूलम्

अंगुलीयकदर्शनमस्यविमर्शयितव्यम् । राजकुल मेवगच्छामः ।

रक्षिणौ—तथागच्छ अरेगण्डभेदक ।

(सर्वे परिक्रामन्ति ।)

श्यालः—सूचकइमंगोपुरद्वारेऽप्रमत्तंपालयतंयावदिदम-ङ्गुलीयकंयथागमनं भर्तुर्निवेद्यततःशासनंप्रतीक्ष्य निष्क्रामामि ।

उभौ—प्रविशत्वावुत्तःस्वामिप्रसादाय ।

(इतिनिष्क्रान्तःश्यालः)

प्रथमः—जानुकचिरायतेखल्व.वुत्तः ।

द्वितीयः—नन्ववसरोपसर्पणीयाराजानः ।

प्रथमः—जानुकत्रस्फुरतो ममहस्तवस्यावधार्थं सुमनसः पिनद्धुम् ।

(इति पुरुषं निर्दिशति ।)

पुरुषः—नार्हतिभावोऽकारणमारणंभावयितुम् ।

द्वितीयः—(विलोक्य।) एषनौ स्वामीपत्रहस्तोराजशासनंप्रतीक्ष्येतो मुखोदृश्यते । गृध्रबलिर्भविष्यसिशुनो मुखंवाद्रक्ष्यसि ।

(प्रविश्य ।)

श्यालः—सूचक ? मुच्यतामेपजालोपजीवी ।

उपपन्नःखल्वंगुलीयस्यागमः ।

टीका

अंगूठी दिखाने तक इसको मतमारो चलो राजा के सामनेचलें।

दोप्यादे।-चलोजी। अरे चल चौर। (सब चले।)

कोतवाल-सूचक तुम इस बड़े फाटक पर चौक में ठहरे रहो। मैं अंगूठी का वृत्तान्त सुनाकर राजाकी आज्ञा ले आऊँ॥

दो प्यादे।- अच्छा जाइये आप।

(कोतवालगया।)

पहिला-बहुत समय भया जीजा न आये।

दूसरा-अजी अवसर देख राजाके समीप जाना चाहिये।

पहिला-हेजाल्लुक! इसचोरके मारनेको मेरेहाथ बहुत खुजाते हैं।

(पुरुषकी चेष्टा करनेलगा।)

कुम्भिलक-मुझ निरपराधी को क्यों मारना चाहिये।

दूसराप्या०-(देखकर।) वे हमारे स्वामी पत्र लिये हाथ में इधर ही आतेहैं। अब तू गिद्धोंका भक्षण बनेगा क्या कुत्तों का मुख देखेगा।

(जाकर।)

कोतवाल-सूचक छोड़ो इस धीमरको।

इस अंगूठी का वृत्तान्त जाना गया।

मूलम्

सूचकः—यथानुत्तोभणति। एषयमसदनंप्रविश्यप्रतिनि
वृत्तः।

(इति पुरुषंपरिमुक्तबन्धनंकरोति।)

पुरुषः (श्यालंप्रणम्य।) भर्तः कीदृशोमआजीवः।

श्यालः—एषभर्त्रांगुलीयकमूल्यसंमितः प्रसादोऽपिदा
पितः।

(इतिपुरुषायस्वंप्रयच्छति।)

पुरुषः—(सप्रणामंप्रतिगृह्य।) भर्तःअनुगृहीतोस्मि।

सूचकः—एषनामानुग्रहोयच्छूलादवतार्यहस्तिस्कन्धेप्र-
तिष्ठापितः।

जानुकः—आवुत्तपरितोषंकथय। तेनाङ्गुलीयकेनभर्तुः
संमतेनभवितव्यम्।

श्यालः—नतस्मिन्महार्हरत्नंभर्तुर्बहुमतमितितर्कयामि।
तस्यदर्शनेनभर्तुरभिमतोजनःस्मारितः। मुहूर्त्तंप्रकृ
तिगम्भीरोऽपिपर्युत्सुकनयनआसीत्।

सूचकः—सेवितंनामावुत्तेन।

जानुकः—ननुभण। अस्यकृतेमात्स्यिकभर्तुरिति।

(इतिपुरुषमसूययापश्यति।)

पुरुषः—भट्टारकइतोऽर्धंयुष्माकंसुमनोमूल्यंभवतु।

जानुकः—एतावद्युज्यते।

टीका

प० प्यादा–जो आज्ञा ।

दू० प्यादा–आज यह यमके घरसे बचआया । (धीमरको छो-
ड़दिया ।)

कुम्भिलक–(कोतवाल को हाथ जोड़ कर) स्वामी. कैसी मेरी
आजीविका रही ।

कोतवाल–अरे जा तेरेभाग्य खुलगये राजाकी आज्ञाहै कि अं-
गूठीका पूरा मोल तुझे मिले सो यहले । (थैली धीमरको दी ।)

कुम्भिलक–(हाथ जोड़कर ।) स्वामी ने बड़ा अनुग्रह किया ।

सूचक–फूला क्यों समायेगा यह अनुग्रह हुवा जो शूली से उतार
कर हाथीके पीठपर चढ़ा है ।

जानुक–राजाके प्रसन्नहोने का क्या कारण है अंगूठी तो कुछ
ऐसी बड़ी वस्तु नहीं है ।

कोतवाल–प्रसन्न होने का कुछ यह भी कारणहै कि अंगूठी बड़ी
मोलकी है परन्तु मुख्यहेतु मुझे यह जान पड़ा कि अंगूठीको
देखकर राजाको अपने किसी प्यारेकी सुधि आगई । क्योंकि
यद्यपि राजाका स्वभाव गंभीरहै तौ भी जिस समय अंगूठी
देखी विकल होकर मूर्च्छा आगई ।

सूचक–तौ आपने राजाको बड़ा प्रसन्न किया ।

जानुक–यों कहकि । इस धीमर के प्रतापसे ।

(धीमरको कड़ी आंखदेखा ।)

कुम्भिलक–रिसमतहो अंगूठी का आधामोल मदिरा पीने को
तुम्हेंभी दूंगा ।

जानुक–ऐसाही चाहिये ।

मूलम्

श्यालः—धीवरमहत्तरस्त्वंप्रियवयस्यकइदानींमेसंवृत्तः। कादम्बरीसाखित्वमस्माकंप्रथमशोभितमिष्यते । तच्छौंडिकापणमेवगच्छामः ।

(इतिनिष्क्रान्ताःसर्वे ।)

* प्रवेशकः ।

(ततःप्रविशत्याकाशयानेनसानुमतीनामाप्सरा ।)

सानुमती—निवर्तितंमया पर्यायनिर्वर्तनीयमप्सरस्तीर्थं सांनिध्यंयावत्साधुजनस्याभिषेककालइति । साम्प्रतमस्यराजर्षेरुदन्तंप्रत्यक्षीकरिष्यामि।मेनकासंबंधेनमेशरीरभूताशकुन्तला । तयाचदुहितृनिमित्त मादिष्टपूर्वास्मि । (समन्तादवलोक्य) किंनुखलु ऋतूत्सवेऽपिनिरुत्सवारंभमिवराजकुलंदृश्यते । अस्तिमेविभवःप्रणिधानेनसर्वंपरिज्ञातुम् । किंतुसस्याआदरोमयामानयितव्यः । भवतु । अनयोरेवोद्यानपालिकयोस्तिरस्करिणी प्रतिच्छिन्नापार्श्ववर्तिनीभूत्वोपलप्स्ये ।

(इतिनाट्येनावतीर्यस्थिता ।)

(ततःप्रविशति चूताङ्कुरमवलोकयन्ती चेटी। अप्सरा च पृष्ठतस्तस्याः ।)

प्रथमा—

---

* प्रवेशकलक्षणंतुसुधाकरे । यन्नीचैःकेवलंपात्रैर्भाविभूतार्थसूचनम् ।अङ्कयोरुभयोर्मध्ये सविज्ञेयःप्रवेशकः ।

टीका

कोतवाल—तौ तू हमारा बड़ा मित्र है मदिरा हमको बहुतप्रिय है चलो हम तुम साथही साथ हाटको चलें॥

(बाहरगये।)

*प्रवेशकसमाप्त

(मिश्रकेशी अप्सरा पवनमें दिखाईदी।)

मिश्रकेशी—एककरतब तो वह था जो मैंने अप्सरातीर्थ पै किया अब चलकर देखूं राजऋषि की क्या दशा है शकुन्तला मुझे बहुत प्यारी है काहेसे कि वह मेरी सहेली की बेटी है और मैं, मेनकाकी आज्ञा से यह वृत्तान्त देखने आईहूँ। (चारोंओर देखकर।) आहा आज उत्सवके दिन राजकुलमें क्या उदासी छारही है मुझे यहतो सामर्थ्य है कि विना प्रकट हुयेही सब वृत्तान्त जानलूं। परन्तु मेनकाकी आज्ञामाननी चाहिये। इस लिये वृक्षोंकी ओट में बैठकर देखूंगी कि क्या होता है॥

(उतरकर एक स्थान में बैठगई।)

(कामदेवकी दो चेरी आमकी मंजरी को देखतीहुईआई।)

पहिली चेरी—

---

* प्रवेशकलक्षण सुधाकर में।
जो नीचे पात्रों से होनेवाली वस्तु और हुई भई का सूचक हो वह दोनों अंकों में प्रवेशक कहाता है।

मूलम्

आताम्रहरितपाण्डुरजीवितसत्यंबसन्तमासयोः ।
दृष्टोसिचूतकोरकऋतुमङ्गलत्वांप्रसादयामि ॥ २ ॥

द्वितीया—परभृतिके किमेकाकिनीमन्त्रयसे ।

प्रथमा—मधुकरिके चूतकलिकांदृष्ट्वोन्मत्तापरभृतिकाभवति ।

द्वितीया—(सहर्षत्वरयोपगम्य।)कथमुपस्थितोमधुमासः।

प्रथमा-मधुकरिकेतवेदानींकालएषमदविभ्रमगीतानाम्

द्वितीया—सखि अवलम्बस्वमांयावदग्रपादस्थिताभूत्वा चूतकलिकांगृहीत्वाकामदेवार्चनंकरोमि ।

प्रथमा—यदिममापिखल्वर्धमर्चनफलस्य ।

द्वितीया—अकथितेऽप्येतत्संपद्यते। यतएकमेवनौजीवितंद्विधास्थितंशरीरम्। (सखीमवलम्ब्यस्थिताचूताङ्कुरंगृह्णाति।) अयेअप्रतिबुद्धोपिचूतप्रसवोऽत्रबन्धनभङ्गसुरभिर्भवति।

(इतिकपोतहस्तकंकृत्वा।)

त्वमसिमयाचूताङ्कुरदत्तःकामायगृहीतधनुषे । पथिकजनयुवतिलक्ष्यःपञ्चाभ्यधिकःशरोभव ॥ ३ ॥

(इति चूताङ्कुरंक्षिपति।)

टीका

दोहा–पीत हरित अरु लालकुछ मंजरिशोभा देत।
मूर्च्छा मनुं वसन्त की दूरकरनके हेत॥

चौपाई–एक मंजरी यामें सोंही। कामदेव के भेंटकरोंही॥ २॥

दूसरी चेरी–हे परभृतिका! तू आपही आप क्या कहरही है।

पहली चेरी–हे मधुकरी! आमकी मञ्जरी को देख कर कोकिला उन्मत्तहोतीही है सो तू जानती है कि मेरे नामकाभी कोकिलाही अर्थ है।

दूसरी चेरी–(प्रसन्नहोकर और निकट आकर।) क्या प्यारी वसन्तऋतु आगई॥

पहिलीचेरी–हां तेरेमधुरगीनगाने के दिनआगये।

दूसरीचेरी–हे सखी कामदेव के भेंटको मैं इसवृक्ष से सोंधेके गहने उतारूंगी तू मुझे सहारा देकर उचका दे।

प्रथमा–जो मैं सहारा दूंगी तो भेटके फलमें से भी आधालूंगी।

दूसरीचेरी–जोतू यह न कहती तौ क्या आधा फल न मिलता मुझे तुझे विधिनाने एक प्रान दो देह बनाया है। (एड़ीउचकाकर बायें हाथ से डाल पकड़ी और दाहिने हाथ से मंजरी तोड़ी।) अहा ये कलियां तो अभी खिली भी नहीं हैं यह देखो एक मंजरी खिलगई है इस में कैसी सुहावनी महक आती है।

(मुट्ठी भरकर कलियां तोड़लीं।)

सोरठा–आम मंजरी शीर्ण, कामदेव को प्रिय अति।
युवतीहृदय विदीर्ण, छठाकामका शरबनी॥ ३॥

(मंजरी अर्पण करदी।)

मूलम्

(प्रविश्यापटीक्षेपेणकुपितः।)

कञ्चुकी–मातावत्। अनात्मज्ञेदेवेनप्रतिषिद्धेवसन्तोत्सवेत्वमाम्रकलिकाभङ्गं किमारभसे।

उभे–(भीते।) प्रसीदत्वार्यः। अगृहीतार्थे आवाम्।

कंचुकी–नकिलश्रुतंयुवाभ्याम्यद्वासन्तिकैस्तरुभिरपि देवस्यशासनंप्रमाणीकृतम् तदाश्रयिभिःपक्षिभिश्च तथाहि।

चूतानांचिरनिर्गतापिकलिकाबध्नातिनस्वंरजः
संनद्धंयदपिस्थितंकुरवकंतत्कोरकावस्थया॥
कण्ठेषुस्खलितंगतेपिशिशिरेपुंस्कोकिलानांरुतम्
शङ्केसंहरतिस्मरोपिचकितस्तूणार्धकृष्टंशरम्॥४॥

उभे–नास्तिसंदेहः। महाप्रभावोराजर्षिः।

प्रथमा–आर्यकतिदिवसान्यावयोर्मित्रावसुनाराष्ट्रियेणभट्टिनीपादमूलंप्रेषितयोः इत्थंचनौप्रमदवनस्यपालनकर्मसमर्पितम्। तदागन्तुकतयाश्रुतपूर्वआवाभ्यामेषवृत्तान्तः।

कञ्चुकी–भवतु। नपुनरेवंप्रवर्तितव्यम्।

उभे–आर्यकौतूहलंनौ। यद्यनेनजनेनश्रोतव्यम् कथयत्वयंकिंनिमित्तंभर्त्रावसन्तोत्सवःप्रतिषिद्धः।

सानुमती–उत्सवप्रियाःखलुमनुष्याः। गुरुणाकारणेन भवितव्यम्।

टीका

(पड़दा हिलाकर रिसभरा द्वारपाल आया।)

कञ्चुकी–ऐसा मतकर। हे बाउली ! तू क्यों कच्ची कलियों को तोड़े डालती है राजाने तो आज्ञादेदी है कि अबके बरस बसन्तोत्सव न हो।

दोनोंचेरी–(डरतीहुई।) अबका हमारा अपराध क्षमाकरो हमने नहीं जानाथा कि राजाने ऐसी आज्ञादी है।

कञ्चुकी–क्या तुमने नहीं सुना रूख पेड़ों और पशुपक्षियोंने भी तौ राजाके साथ उदासी मानी है। देखो

छंद–ललित कलियां निकलती खिलती नहीं अरु चेतना।
कुरवक के फूल भि आगया तौभी कलीही है बना॥
कोकिला बोली रुकी आया शिशिर का बीतना।
आधा चढ़ाके धरलिया शर धनुष मदना का तना॥ ४॥

दोनोंचेरी–इसमें सन्देह नहीं है कि यह राजा ऐसाही प्रतापी है

पहिलीचेरी–कुछ दिन से हमको गंधर्वलोकके अधिकारी मित्रावसुने राजाके चरण देखनेको भेजा है। तब से हम राजा के उपवनों में अनेक क्रीड़ा करती फिरती थीं इस लिये राजाकी यह आज्ञा हमने नहीं सुनी।

कञ्चुकी–हुवा सो हुवा फिर ऐसा मत करना।

दोनोंचेरी–आर्य ! हमको बड़ा अचरज है। परन्तु जो हम इस वृत्तान्त के सुनने योग्यहैं। तौ कृपाकरके बतावो कि राजाने क्यों वसन्तोत्सव का होना बरजा है।

मिश्रकेशी–मनुष्यों को रागरंग सदा प्रिय होता है। इस लिये कोई बड़ाही कारण होगा।

मूलम्

कञ्चुकी—बहुलीभूतमेतत्कथंनकथ्यते। किमत्रभवत्योः कर्णपथन्नायातं शकुन्तलाप्रत्यादेशकौलीनम्।

उभे—श्रुतंराष्ट्रियमुखाद्यावदङ्गुलीयकदर्शनम्।

कञ्चुकी—तेनह्यल्पंकथयितव्यम्। यदैवखलुस्वाङ्गुलीयकदर्शनादनुस्मृतंदेवेनसत्यमूढपूर्वामेतत्रभवतीरहसिशकुन्तला। मोहात्प्रत्यादिष्टेतितदाप्रभृत्येवपश्चात्तापमुपगतोदेवः। तथाहि

रम्यंद्वेष्टियथापुराप्रकृतिभिर्नप्रत्यहंसेवते शय्याप्रान्तविवर्तनैर्विगमयत्युन्निद्रएवक्षपाः॥ दाक्षिण्येनददाति वाचमुचितामन्तःपुरेभ्योयदा गोत्रेषुस्खलितस्तदाभवतिचव्रीडाविलक्षश्चिरम्॥ ५॥

सानुमती—प्रियंमे।

कञ्चुकी-अस्मात्प्रभवतोवैमनस्यादुत्सवःप्रत्याख्यातः

उभे—युज्यते।

(नेपथ्ये।)

एतुएतु भवान्।

कञ्चुकी—(कर्णंदत्वा) अये। इतएवाभिवर्ततेदेवः। स्वकर्मानुष्ठीयताम्।

उभे—तथा। (इति निष्क्रान्ते।)

(ततःप्रविशतिपश्चात्तापसदृशवेषोराजाविदूषकः प्रतीहारीच।)

टीका

कञ्चुकी–यह तो प्रसिद्ध बात है इसके कहदेने में क्या दोष है? क्या शकुन्तला के त्यागका समाचार तुम्हारे कानों तक नहीं पहुँचा।

दोनोंचेरी–हां अंगूठी मिलजाने तक का वृत्तान्त तो हमने गंधर्व-लोकके नायक से सुनलियाहै।

कञ्चुकी–तौ अब मुझे थोड़ाही कहना पड़ेगा सो सुनों। जब अपनी अंगूठी देखकर राजाको सुध आयी तो तुरन्त कह उठा कि शकुन्तला मेरी विवाहिता है जिस समय मैंने उसे त्यागा मेरी बुद्धि ठिकाने न थी। फिर राजाने बहुत विलाप और पछतावा किया। कवित्व–

जगसे भग दूरभया तब से नहिं ओर प्रजा किछु ध्यानधरे है।
सब रात बितावत सोवत ना अरु करवटले सब रात जरे है॥
भोर उठे कहता कुछ है पर आरि येरि प्रिया मुख से निकरे है।
फिर हार विचार लजाय मरे घुटने पर शिरधर शोच करे है॥५॥

मिश्रकेशी–आहा यह बात तो मुझे बड़ी प्यारी लगी।

कञ्चुकी–इसी उदासी के कारण वसन्तोत्सव वर्जे दिया गयाहै।

दोनोंचेरी–यह वर्जना बहुत योग्य है। (नेपथ्यमें।)

आओआओ महाराज!।

कञ्चुकी–(कानलगाकर।) अरी! राजा इधरही आते हैं। अब तुम जावो।

दोनोंचेरी–अच्छा। (दोनोंगईं।)

(दुष्यन्त पछताता हुआ आया और आगे आगे एक प्रतीहारी और साथ माढव्य।)

मूलम्

कञ्चुकी—(राजानमवलोक्य) अहोसर्वास्ववस्थासुरम
णीयत्वमाकृतिविशेषाणाम् । एवमुत्सुकोपिप्रियदर्श
नोदेवः । तथाहि ।

प्रत्यादिष्टविशेषमण्डनविधिर्वामप्रकोष्ठार्पित
म्बिभ्रत्काञ्चनमेकमेववलयंश्वासोपरक्ताधरः ।
चिन्ताजागरणप्रतान्तनयनस्तेजोगुणादात्मनः
संस्कारोल्लिखितोमहामणिरिवक्षीणोपिनालक्ष्यते ६

सानुमती—(राजानंदृष्ट्वा) स्थानेखलुप्रत्यादेशविमानि
ताप्यस्यकृतेशकुन्तलाक्लाम्यतीति ।

राजा—(ध्यानमन्दम्परिक्रम्य ।)

प्रथमंसारङ्गाक्ष्याप्रियया प्रतिबोध्यमानमपिसुप्तम् ।
अनुशयदुःखायेदंहतहृदयंसंप्रतिविबुद्धम् ॥ ७ ॥
सानुमती—नन्वीदृशानितपस्विन्याभागधेयानि ।

विदूषकः—(अपवार्य ।)

लङ्घितएषभूयोपिशकुन्तलाव्याधिना । न जानेकथं
चिकित्सितव्योभविष्यति ।

कञ्चुकी—(उपगम्य ।) जयतुजयतुदेवः । महाराजप्रत्य
वेक्षिताप्रमदवनभूमयः । यथाकाममध्यास्तांविनोद
स्थानानिमहाराजः ।

टीका

कञ्चुकी—(राजाकी ओर देखकर।) सत्य है तेजस्वी पुरुष सभी अवस्था में शोभायमान होते हैं। हमारे स्वामी यद्यपि उदासी में हैं तौभी कैसे दिव्य दिखाई देते हैं। जैसे।

कवित्त—

शृंगार सभी अब छोड़ दिया अरु दुर्बल देह भयी तिहिंसेही।
भुजबंद गिरै रु गिरै सरकै पहिरे यह एकहु एक धरेही॥
गहिरे अब साँस लिये इमने तिससे नहिं ओठ जु लाल रहेही।
शोक करत तिहु आंख उनींदिहु से अति शोभत राज भलेही॥

चौपाई—

राजा सोहत है अब कैसे। हीरा शान चढ़ा हो जैसे॥ ६॥

मिश्रकेशी—(दुष्यन्त की ओर देखकर।) शकुन्तला अपना अनादर और त्यागहुये परभी इस राजाके विरहमें व्यथित होरही है।

राजा—(बहुत शोच में आगे बढ़कर।)

चौपाई -

मृगनयनीने प्रथम जगाया। सोते मुझको चेत न आया॥
पछतावेके दुःख सहनको। हृदय जगा अब आग जलनको॥७॥

मिश्रकेशी—उस तपस्विनी के ऐसे अच्छे भाग्य हैं॥

विदूषक—(आपहीआप।) यह फिरभी शकुन्तला के विरह से रोगी हुआ न जानें इसकी क्या औषधि होगी।

कञ्चुकी—(दुष्यन्तके पास जाकर।) महाराज की जयहो। मैं वन उपवनों को देखआया। आप चलकर जहाँ इच्छाहो वहाँ विश्राम कीजिये।

मूलम्

राजा–वेत्रवतिमद्वचनादमात्यमार्यपिशुनंब्रूहि । चिर-
प्रबोधनान्नसंभावितमस्माभिरद्यधर्मासनमध्यासितुं
यत्प्रत्यवेक्षितं पौरकार्यमार्येणतत्पत्रमारोप्यदीयता
मिति ।

प्रतीहारी–यद्देवआज्ञापयति ।(इति निष्क्रान्ता ।)

राजा–वातायनत्वमपिस्वंनियोगमशून्यंकुरु ।

कञ्चुकी–यदाज्ञापयतिदेवः । (इति निष्क्रान्तः ।)

विदूषकः–कृतंभवतानिर्म्मक्षिकम् साम्प्रतंशिशिरातप
च्छेदरमणीयेऽस्मिन्प्रमदवनोद्देशआत्मानं रमयि
ष्यसि ।

राजा–वयस्यरन्ध्रोपनिपातिनोऽनर्थाइतियदुच्यतेतद-
व्यभिचारिवचः । कुतः ।

मुनिसुताप्रणयस्मृतिरोधिना ममचमुक्तमिदन्तम-
सामनः ॥ मनसिजेनसखेप्रहरिष्यता धनुषिचूतशर
इचनिवेशितः ॥ ८ ॥

विदूषकः–तिष्ठतावत् । अनेनदण्डकाष्ठेन कन्दर्पव्याधिं
नाशयिष्यामि ।

(इतिदण्डकाष्ठमुद्यम्यचूताङ्कुरंपातयितुमिच्छति ।)

राजा–(सस्मितम् ।) भवतु । दृष्टंब्रह्मवर्चसम् । सखेक्को
पविष्टःप्रियायाःकिंचिदनुकारिणीषुलतासुदृष्टिं विलो
भयामि ।

टीका

राजा—वेत्रवति ! तुम राजमंत्री से कह दो कि हमारा विचार कुछ दिनके लिये नगरसे चलेजानेका है इससे राजसिंहासन सूनारहेगा जो कुछ काम काज प्रजासंबंधी हो लिखकर हमारे-पास भेज दिया करैं।

प्रतीहारी—जो आज्ञा।

(बाहरगया ।)

राजा—वातायन ! तू अपने काममें असावधानी मतकरियो ।

कञ्चुकी—जो आज्ञा महाराज की । (बाहरगया ।)

माढव्य-अच्छा तुमने इस स्थानको निर्मखियाला किया । अब इस रमणीक कुंज में मन बहलाओ।

राजा—हे माढव्य ! जब कोई किसी को कुछ दोष लगावे और वह निरपराधी ठहरे तो दोष लगानेवाला कैसा दुःख पाताहै । काहे से कि देखो।

दोहा—

प्रिया प्रीति अज्ञानने पूर्व भुलाई आन ॥
दुखद कामका धनु चढ़ा आम मंजरी बान ॥ ८ ॥

माढव्य—नेक धीरज धरो । मनोभव के तीरों को मैं अभी लाठी से तोड़े डालताहूँ।

(लकड़ी उठाके आमकी मंजरियों को झारने लगा ।)

राजा-(मुसक्याकर ।) हो देखा ब्रह्मत्व का तेज । कहो मित्र ! अब कहाँ बैठकर शकुन्तला की उनहारी लताओं को देखूँ ।

मूलम्

विदूषकः—नन्वासन्नपरिचारिका चतुरिकाभवतासंदिष्टा माधवीमण्डपइमांवेलामतिवाहयिष्ये । तत्रमेचित्र फलकगतांस्वहस्तलिखितांतत्रभवत्याः शकुन्तला याःप्रतिकृतिमानयेति ।

राजा—ईदृशंहृदयेविनोदस्थानम् तत्तमेवमार्गमादेशय ।

विदूषकः—इतइतोभवान् ।

(उभौपरिक्रामतः । सानुमत्यनुगच्छति ।)

विदूषकः-एषमणिशिलापट्टकसनाथोमाधवीमण्डपउप--हाररमणीयतयानिःसंशयम् स्वागतेनैवनौप्रतीच्छ-ति । तत्प्रविश्यनिषीदतुभवान् ।

(उभौप्रवेशङ्कृत्वोपविष्टौ ।)

सानुमती—लतासंश्रिताद्रक्ष्यामि । तावत्सख्याःप्रतिकृ-तिम् । ततोस्याभर्तुर्बहुमुखमनुरागंनिवेदयिष्यामि ।

(इति तथाकृत्वास्थिता ।)

राजा—सखेसर्वमिदानींस्मरामिशकुन्तलायाःप्रथमवृत्ता न्तम् ।

कथितवानस्मिभवतेच । सभवान् प्रत्यादेशवेलायां मत्समीपगतोनासीत् । पूर्वमपिनत्वयाकदाचित्संकीर्ति तम् तत्रभवत्यानामकच्चिदहमिवविस्मृतवानसित्वम् ।

टीका

माढव्य—वही सखी जो चित्रविद्या में चतुर है और जिससे आपने कहा था कि इस माधवी कुंजमें बैठकर हम मन बहलावेंगे आती होगी और अपने हाथ से लिखा महारानी शकुन्तला का चित्रभी आपकी आज्ञानुसार लावेगी।

राजा—चलो प्यारीके चित्रही से मन भरजायगा। कुंज की गैल बताओ।

माढव्य—इस गैल आओ मित्र। (दोनों चले और पीछे पीछे मिश्रकेशी भी चली।)

विदूषक—यह माधवी कुंज जिस में मणिजटित पटिया बिछी है। यद्यपि निर्जीव है तौभी ऐसी दिखाई देती है मानों आपका आदर करती है। आओ चलकर बैठें।

(दोनों लताकुंज में बैठे।)

मिश्रकेशी—इस लताकी ओटमें बैठकर शकुन्तला का चित्र देखूंगी। फिर उसके पतिका सच्चा स्नेह जाकर उससे कहदूंगी।

(लताकी ओटमें बैठगई।)

राजा—हे मित्र! अब मुझे शकुन्तला के प्रथम मिलापकी सब सुध आगई है।

तुझसेभी तो मैंने उसका वृत्तान्त कहाथा। परन्तु जिस समय मैंने उसका अनादर किया तब तू मेरे पास न था तैंने भी कभी उसका नाम न लिया सो क्या तूभी उसे मेरीही भाँति भूल गया था।

मूलम्

विदूषकः—नविस्मरामि । किंतुसर्वंकथयित्वावसानेपुन-
स्त्वयापरिहासविजल्पनएषभूतार्थइत्याख्यातम् ।
मयापिमृत्पिण्डबुद्धिनातथैवगृहीतम् । अथवाभवित
व्यताखलुबलवती ।

सानुमती—एवमेवैतत् ।

राजा—(ध्यात्वा)सखे त्रायस्व ।

विदूषकः—भोःकिमेतत् । अनुपपन्नंखल्वीदृशंत्वयि । कदा-
पिसत्पुरुषाःशोकवक्तव्यानभवन्ति । ननुप्रवातेपिनि
ष्कम्पागिरयः ।

राजा—वयस्यनिराकरणविक्लवायाःप्रियायाः समवस्थाम
नुस्मृत्यबलवदशरणोस्मि साहि ।

इतःप्रत्यादेशात्स्वजनमनुगन्तुंव्यवसिता
मुहुस्तिष्ठेत्युच्चैर्वदतिगुरुशिष्येगुरुसमे ॥
पुनर्दृष्टिंबाष्पप्रसरकलुषामर्पितवती
मयिक्रूरेयत्तत्सविषमिवशल्यंदहतिमाम् ॥ ९ ॥

सानुमती-अहोईदृशीस्वकार्यपरता । अस्यसंतापेनाहंरमे

विदूषकः—भो अस्तिमेतर्कः । केनापितत्रभवत्याकाश
चारिणानीतेति ।

टीका।

विदूषक—नहीं नहीं मैं नहीं भूलाहूं। परन्तु जब आप सब वृत्तान्त कह चुके थे तब यहभी तो कहाथा कि यह स्नेहकी कहानी हमने मन बहलाने को बनायी है। और मैंने आपके कहनेको अपने भोलेभावसे प्रतीत करलिया था। अथवा होनहार बलवान्।

मिश्रकेशी—सत्य है।

राजा—(ध्यानकरके।) हेमाढव्य! इस दुख से छुड़ानेका कुछ उपायकर।

विदूपक—ऐसा तुमको क्या नया दुख पड़ा है इतना अधीर होना सत्पुरुषों को योग्य नहीं है देखो पवन के ाही चले पर्वतको नहीं डिगासकती है।

दुष्यन्त—सखा जिस समय मैंने प्यारीका त्याग किया उस की ऐसी दशा थी अब उसको सुधि करके मैं व्याकुल हुवा जाता हूँ। वोजब। शिखरिणी—

चली प्यारी मेरी निज जनहिके साथ मनथा।
तिनोंने ताको जो भिड़क इत राखी न मनथा॥
मुझे निर्मोही को निरखत जुआंशू नयनसे।
वहीदृष्टी मोको जलत विषधोई लगनसे॥ ६॥

मिश्रकेशी—देखो अपना प्रयोजन कैसा होताहै कि। इसका दुख सुननाभी मुझे सुहाता है।

माढव्य—हेमित्र मेरेको शंकाहै कि। आपकी शकुन्तलाको कोई अप्सरा उड़ालेगई है।

मूलम्

राजा—कः पतिदेवतामन्यः परामर्ष्टुमुत्सहेत् । मेनका किल सख्यास्ते जन्मप्रतिष्ठेति श्रुतवानस्मि । तत्सहचारिणीभिः सखी ते हृतेति मे हृदयमाशङ्कते ।

सानुमती-संमोहः खलु विस्मयनीयो न प्रतिबोधः ।

विदूषकः—यद्येवमस्ति खलु समागमः कालेन तत्रभवत्या ।

राजा—कथमिव ।

विदूषकः—न खलु मातापितरौ भर्तृवियोगदुःखितां दुहितरं द्रष्टुं पारयतः ।

राजा—वयस्य—

स्वप्नो नु माया नु मतिभ्रमो नु
क्लिष्टं नु तावत्फलमेव पुण्यम् ॥
असंनिवृत्त्यै तदतीतमेते
मनोरथानामतटप्रपाताः ॥ १० ॥

विदूषकः—मैवम् । नन्वङ्गुलीयकमेव निदर्शनमवश्यंभाव्यचिन्तनीयः समागमो भवतीति ।

राजा—(अङ्गुलीयकं विलोक्य ।) अये इदं तावदसुलभस्थानभ्रंशि शोचनीयम् ।

तव सुचरितमङ्गुलीय नूनं
प्रतनु ममेव विभाव्यते फलेन ।
अरुणनखमनोहरासु तस्या
च्युतमसि लब्धपदं यदङ्गुलीषु ॥ ११ ॥

सानुमती-यद्यन्यहस्तगतं भवेत् सत्यमेव शोचनीयं भवेत्

टीका

राजा—ऐसी पतिव्रता को डिगानेकी सामर्थ्य और किसी में नथी उसकी मा मेनका सुनी है। सो मेनकाकी ही सखियां लेगई होंगी।

मिश्रकेशी—शकुन्तला का त्यागना जाग्रत् अवस्थाका काम नहीं है स्वप्नमें हुवा होगा।

विदूषक—जो यही बात है तो उस के मिलने में कुछ विलम्ब मतजानो।

राजा—यह कैसे।

माढव्य—ऐसे जाना कि मा बाप अपनी बेटी को पतिवियोगमें बहुत काल नहीं देख सकते।

राजा—हेमित्र!

चौपाई—

क्या यह बुद्धि भ्रम सपना है। खोटे पुण्य लगा फलवा है॥
प्रिया मिलाप न होवे जबलों। सागरसे में डूबा तबलों॥१०॥

माढव्य—निराश न हूजिये देखो मुन्दरीही दृष्टान्त इस बातका है कि खोई वस्तु फिर मिलसकती है दैवइच्छा सदा बलवान् है।

राजा—(मुंदरी को देखकर।) मुझे इस मुन्दरीका भी बड़ा शोच है यह ऐसे स्थानसे गिरी है जहां फिर पहुंचना दुर्लभ है।

चौपाई—

तू अब पुण्य फलों से छोटी। उसके मुखनखसे जो छूटी॥ ११॥

मिश्रकेशी—जो किसी और के हाथ पड़ती तो निःसंदेह इस मुन्दरी का भाग्य खोटा गिनाजाता।

मूलम्

विदूषकः—भोइयंनाममुद्राकेनोद्घातेन तत्रभवत्याहस्ताभ्यासंप्रापिता।

सानुमती—ममापिकौतूहलेनाकारितएषः।

राजा—श्रूयताम्। स्वनगरायप्रस्थितंमांप्रियासबाष्पमाहकियच्चिरेणार्यपुत्रःप्रतिपत्तिंदास्यतीति।

विदूषकः—ततस्ततः।

राजा—पश्चादिमामुद्रांतदङ्गुलौनिवेशयता मयाप्रत्यभिहिता।

एकैकमत्रदिवसेदिवसेमदीयम्
नामाक्षरंगणयगच्छतियावदन्तम्।
तावत्प्रियेमदवरोधगृहप्रवेशम्
नेताजनस्तवसमीपमुपैष्यतीति॥ १२॥

तच्चदारुणात्मनामयामोहान्नानुष्ठितम्।

सानुमती—रमणीयः खल्ववधिर्विधिना विसंवादितः।

विदूषकः—कथंधीवरकल्पितस्य रोहितमत्स्यस्योदराभ्यन्तरआसीत्।

राजा—शचीतीर्थंवन्दमानायाः सख्यास्तेहस्ताद्गङ्गास्रोतसिपरिभ्रष्टम्।

विदूषकः—युज्यते।

सानुमती—अतएवतपस्विन्याः शकुन्तलायाअधर्मभीरोरस्यराजर्षेःपरिणयेसंदेहआसीत्। अथवेदृशोऽनुरागोऽभिज्ञानमपेक्षते। कथमिवैतत्।

टीका

विदूषक-कृपाकरके यह तो कहो कि यह अंगूठी शकुन्तला की उंगली तक क्यों कर पहुँची।

मिश्रकेशी-मैंभी यह सुना चाहती थी।

राजा-जब मैं तपोवन से अपने नगरको चलने लगा तब प्यारीने आंखें भरके कहा कि आर्यपुत्र ! फिर कब सुध लोगे।

माढव्य-भलाफिर।

राजा-तब यह अंगूठी उसकी अंगुली में पहना कर कहा कि।

प्रतिबिम्ब-

एकेक आज दिनसे गिन तू दिनों को।
नामाक्षरोंहि गिनते जब अन्त होवे॥
आवे तुझे जन लिवा रनवासही को।
मेरेसमीप वह तोहिं लिवाय जावे॥ १२॥

परन्तु हाय मुझ निर्दयी को यह सुधि न रही।

मिश्रकेशी-इन के वियोग और संयोग में तीन दिनका अन्तर अच्छा ठहराथा परन्तु ब्रह्माने बिगाड़ दिया।

माढव्य-फिर वह मुन्दरी मछली के पेटमें कैसे गई।

राजा-जिस समय प्यारी ने शची तीर्थ से आचमन को जल लिया तब जल में गिरपड़ी।

विदूषक-ठीकहै।

मिश्रकेशी-आहा यही बातहै कि राजाने अधर्म से डरकर अपने विवाहका संदेह किया। परन्तु आश्चर्य है कि फिर उसे मुन्दरी से क्योंकर सुधिभई।

मूलम्

राजा–उपालप्स्ये तावदिदमङ्गुलीयकम्।

विदूषकः-(आत्मगतम्।)गृहीतोऽनेन पन्था उन्मत्तानाम्।

राजा–

कथन्नु तम्बन्धुरकोमलाङ्गुलिं
करं विहायासि निमग्नमम्भसि॥
अचेतनं नाम गुणं न लक्षये
न्मयैव कस्मादवधीरिता प्रिया॥ १३॥

विदूषकः–(आत्मगतम्।) कथं बुभुक्षया खादितोऽस्मि।

राजा-अकारणपरित्यागानुशयतप्तहृदयस्तावदनुकम्प्यतामयं जनः पुनर्दर्शनेन॥

(प्रविश्यापटीक्षेपेण चित्रफलकहस्ता।)

चतुरिका–इयं चित्रगता भट्टिनी।

(इति चित्रफलकं दर्शयति।)

विदूषकः–साधु वयस्य मधुरावस्थानदर्शनीयो भावानुप्रवेशः। स्खलतीव मे दृष्टिर्निम्नोन्नतप्रदेशेषु।

सानुमती–अहो एषा राजर्षेर्निपुणता। जाने सख्यग्रतो मे वर्तत इति।

राजा–

यद्यत्साधु न चित्रे स्यात्क्रियते तत्तदन्यथा॥
तथापि तस्या लावण्यं रेखया किंचिदन्वितम्॥ १४॥

सानुमती–सदृशमेतत्पश्चात्तापगुरोः स्नेहस्यानवलेपस्य च।

टीका

राजा-मैं इस मुंदरीको कुछ बुरा कहा चाहताहूँ ।

माढव्य-(आपहीआप ।) राजा उन्मत्त होगया है ।

राजा-

दोहा-

जल में गिरते कसबना कोमल अंगुलि त्याग ।
या इस जड़ को क्याकहूं मैंछोड़ी निर्भाग ॥ १३ ॥

विदूषक-(आपहीआप ।) जब तक यह शोचमें है तबतक मुझे भी यहाँ ठैरना और भूखों मरना पड़ा ॥

राजा-हेप्यारी मैंने तुझे निष्कारण त्यागा अब फिर कब दर्शन देकर हृदय के पश्चात्ताप मिटावेगी ।

(एक सखी चित्र हाथ में लिये आई ।)

सखी-महाराज ! देखिये महारानी का चित्र यह है ।

(चित्र सामने दिखाती हुई ।)

विदूषक-मित्र ! सत्य है यह चित्र ऐसा सुहावना लगना है मानों साक्षात् कामदेव आगे खड़ाहै हेमित्र ! मेरी आंख नखसे शिखतक इसके प्रत्येक अंगकी शोभा देखने को लजाती है ।

मिश्रकेशी-देखो राजाकी चतुराई इसमें शकुन्तला ऐसी दिखाई देती है मानों आंखों के सामने खड़ी है ।

चित्रनाहीं भि अच्छा ये और और बना दिया । तथापि रूप तिसकेसे अच्छी ही लगती हये ॥ १४ ॥

मिश्रकेशी-जैसी प्रीति है वैसाही पछतावा भी है ।

मूलम्

विदूषकः-भोइदानींतिस्रस्तत्रभवत्योदृश्यन्ते । सर्वाश्च दर्शनीयाः । कतमात्रतत्रभवतीशकुन्तला ।

सानुमती--अनभिज्ञः खल्वीदृशस्यरूपस्यमोहदृष्टिरयं जनः ।

राजा-त्वंतावत्कतमांतर्कयसि ।

विदूषकः-तर्कयामियैषाशिथिलकेशबन्धनोद्वान्तकुसुमेनकेशान्तोद्भिन्नस्वेदबिन्दुनावदनेनविशेषतोपसृताभ्यांबाहुभ्याम् । अवसेकास्निग्धतरुणपल्लवस्यचूतपादपस्यपार्श्वेईषत्परिश्रान्तेवालिखितासाशकुन्तलाइतरेसख्याविति ।

राजा-निपुणोभवानस्त्यत्रमेभावचिह्नम् ।

स्विन्नाङ्गुलिविनिवेशोरेखाप्रान्तेपुदृश्यतेमलिनः ॥
अश्रुचकपोलपतितंदृश्यमिदंवर्तिकोच्छ्वासात् ॥ १५ ॥

चतुरिके अर्धलिखितमेतद्विनोदस्थानम् । गच्छ । वर्तिकांतावदानय ।

चतुरिका-आर्यमाढव्य ! अवलम्बस्वाचित्रफलकंयावदागच्छामि ।

राजा-अहमेवैतदवलंबे ।

(इतियथोक्तंकरोति ।)

(निष्क्रान्ताचेटी ।)

राजा-अहंहि ।

टीका

विदूषक–यहाँ तीन सखियाँ दिखती हैं मेरेध्यान में नहीं आती कि महारानी शकुन्तला कौनसी है।

मिश्रकेशी–इस बूढ़ेको शकुन्तला के सुन्दररूपका ज्ञान नहीं है इस से यह ठगी आँखोंका है।

राजा–भला बतावो तो इन चित्रों मेंसे तुम किसको शकुन्तला मानतेहो।

माढव्य–शोचलूँ तब बताऊँगा। तौ यही शकुन्तला है जिस का शरीर थका दिखाई देता है वस्त्र ढीलेहैं बांह शिथिलाई से गिरी पड़ती हैं पसीने की बूंदें मुखपर ढलक रही हैं अलकोंसे फूल गिरते हैं।

और इस डहडहे आमकेनीचे चौकी पर बैठी है यही महारानी शकुन्तलाहोगी और आसपास वाली सखी सहेली होंगी।

राजा–माढव्य ! तू बड़ा प्रवीण है परन्तु देख अभी इस चित्र में कुछ कसर है। सोरठा–

फीका रंग कपोल, स्वेद कि अंगुलिसे हुआ।
चित्रवर्तिका भोल, तिससे आंशू गिरतसो॥ १५॥

हेचतुरिका ! अभी यह चित्र पूरानहीं बना है जा फिर चित्रालय से बनाने की वस्तुलेआ।

चतुरिका–माढव्य ! तुम कृपा करके चित्र लिये रहो तब तक मैं महाराज की आज्ञा बजालाऊँ।

राजा–नहीं तुम जावो हमीं लिये रहेंगे।

(राजाने चित्रलिया और चतुरिका गई।)

राजा–मैंतो।

मूलम्

साक्षात्प्रियामुपगतामपहायपूर्व्वं
चित्रार्पितांपुनरिमांबहुमन्यमानः ॥
स्रोतोवहांपथिनिकामजलामतीत्य
जातःसखेप्रणयवान्मृगतृष्णिकायाम् ॥ १६ ॥

विदूषकः—(आत्मगतम् ।) एषोत्रभवान्नदीमतिक्रम्यमृगतृष्णिकांसंक्रांतः । (प्रकाशम् ।) भोःअपरंकिमत्र लिखितव्यम् ।

सानुमती—योयःप्रदेशःसख्यामेऽभिरूपस्तंतमालिखितु कामोभवेत् ।

राजा—श्रूयताम् ।

कार्यासैकतलीनहंसमिथुनास्रोतोवहामालिनी ।
पादास्तामभितोनिषण्णहरिणागौरीगुरोःपावनाः ।
शाखालम्बितवल्कलस्यचतरोर्निर्मातुमिच्छाम्यधः
शृङ्गेकृष्णमृगस्यवामनयनंकंडूयमानांमृगीम् १७॥

विदूषकः—(आत्मगतम्) यथाहंपश्यामिपूरितव्यमनेन चित्रफलकंलम्बकूर्चानांतापसानांकदम्बैः ।

राजा—वयस्यअन्यच्चशकुन्तलायाःप्रसाधनमभिप्रेतमस्माभिः ।

विदूषकः—किमिव ।

सानुमती—वनवासस्य सौकुमार्यस्याविनयस्यचयत्सदृशंभविष्यति ।

राजा—

टीका

साक्षात् प्रियाकु मिलके तब छोड़दी मैं तस्वीर अच्छि समझा अब येहि देखो । चलती नदीक जस छोड़ भिस्वच्छ जलका मो को पियास लगती अबसूकि बालू ॥ १६ ॥

माढव्य–(आपहीआप ।) तुमतो निर्मल जल की भरीनदी को छोड़ मृगतृष्णाको दौड़ते हो । (प्रकट ।) महाराज इस में क्या कसर है ।

मिश्रकेशी–मेरेजान तौ अब राजा उन बातों कोभी लिखावेगा। जिनसे तपोवनमें शकुन्तला के रहनेका स्थान सुशोभितथा ।

राजा–सुनो

होवे बालुभि हंसलीन जिसमें औ मालिनी भी नदी । अच्छी ठीक हिमालया कि धरणी जिसमें फिरैं वे मृगा । शाखादाढ़ि लगीरुबक्कल तिसे ऐसा बनाना चहूँ । सींगमें कृष्णमृगाकि वाम नयना हिर्नी खुजातीभई ॥ १७ ॥

माढव्य–(आपहीआप ।) तुम चाहो सो लिखालो मेरेजान तौ जितनी ठौर बिना लिखी रही है उसमें मुझीसी कुबड़ी तपस्विनी चाहियें ।

राजा–मित्र ! मैं यह कहना तो भूलही गया कि प्यारीके चित्र में आभूषण भी लिखने चाहिये ।

माढव्य–कैसे ।

मिश्रकेशी–ऐसे जैसे वनयुवतियों के होते हैं ।

राजा–

मूलम्

कृतंनकर्णार्पितबंधनंसखे
शिरीषमागण्डविलम्बिकेसरम्।
नवाशरच्चन्द्रमरीचिकोमलम्
मृणालसूत्रंरचितंस्तनांतरे॥ १८॥

विदूषकः--भोःकिंनुतत्रभवतीरक्तकुवलयपल्लवशोभिना
ग्रहस्तेनमुखमपवार्यचकितचकितेवस्थिता।

(सावधानं निरूप्य दृष्ट्वा।)

आः एषदास्याःपुत्रःकुसुमरसपाटच्चरस्तत्रभवत्यावदन
मभिलङ्घतिमधुकरः।

राजा—ननुवार्यतामेषधृष्टः।

विदूषकः—भवानेवाविनीतानां शासितास्यवारणेप्रभवि
ष्यति।

राजा—युज्यतेअपिभोःकुसुमलताप्रियातिथे किमत्रपरि
पतनखेदमनुभवसि।
एषाकुसुमनिषण्णा
तृषितापिसतीभवन्तमनुरक्ता।
प्रतिपालयतिमधुकरी
नखलुमधुविनात्वयापिबति॥ १९॥

सानुमती—अद्याभिजातंखल्वेषवारितः।

विदूषकः—प्रतिषिद्धापिवामैषाजातिः।

राजा—एवंभोःनमेशासनेतिष्ठति। श्रूततांतर्हिसंप्रति।

टीका

दोहा-

कर्णफूल औ गाल में फूल सिरस का सार ।
शरच्चन्द्रके किरण सम कमल दंडका हार ॥ १८ ॥

माढव्य-मित्र यह रानी अपने आधे मुखको पंकजसी हथेली से छुपाये चकृतसी क्यों होरही है ॥

(चतुराईसे देखके ।)

आहा मैं जानगया एक भौंरा रसका चोर मुखको कमल जान बैठाचाहताहै ।

राजा-इस धृष्ट भौंरे को दूरकरो ।

रानी-महाराज सब धृष्टोंको दण्ड देनेकी आपकोही सामर्थ्यहै ।

राजा-अरे भौंरे तू तो फूली लताओं का पाहुना है तू यहां अनादरहोने क्यों आया है ।

सोरठा-

भौंरी तेरी राह, भूखी प्यासी देखती ।
पुष्प रसोंकी चाह, तेरे बिनपीती नहीं१६॥

मिश्रकेशी-अब यहठीक रोका गयाहै ।

माढव्य-महाराज भौंरेकी ढिठाई प्रसिद्धहै ।

राजा-क्योंरे ! कैसे मेरी आज्ञा नहीं मानता है । तोसुनतू ।

मूलम्

अक्लिष्टबालतरुपल्लवलोभनीयं
पीतंमयासदयमेवरतोत्सवेषु ॥
बिम्बाधरस्पृशसिचेद्भ्रमरप्रियाया
स्त्वांकारयामिकमलोदरबन्धनस्थम् ॥ २० ॥

विदूषकः–एवंतीक्ष्णदण्डस्य किंनभेष्यति (प्रहस्य। आत्मगतम्।)एषतावदुन्मत्तः अहमप्येतस्यसंगेन दृशावर्णइवसंवृत्तः (प्रकाशम्।) भोः,चित्रंखल्वेतत्।

राजा–कथंचित्रम्।

सानुमती–अहमपीदानीमवगतार्था, किंपुनर्यथालिखितानुभाव्येषः।

राजा–वयस्य,किमिदमनुष्ठितम् पौरोभाग्यम्।

दर्शनसुखमनुभवतः
साक्षादिवतन्मयेनहृदयेन ॥
स्मृतिकारिणात्वयामे
पुनरपिचित्रीकृताकान्ता ॥ २१ ॥

(इतिबाष्पंविहरति।)

सानुमती–पूर्वापरविरोध्यपूर्वएषविरहमार्गः।

राजा–वयस्य, कथमेवमविश्रान्तदुःखमनुभवामि।
प्रजागरात्खिलीभूतस्तस्याःस्वप्नेसमागमः ॥
बाष्पस्तुनददात्येनांद्रष्टुंचित्रगतामपि ॥ २२ ॥

टीका

सोरठा—मुखरस तू पीवे हि, नये पत्रसा कोमल।
ओष्ठसार तिसके हि, भोग बिलासोंमेंपिया॥

चौपाई—रक्त ओष्ठ छूवै तू जोही। कमल उदरमें बांधोंतोही २०॥

माढव्य—जबतुमने ऐसा कड़ा दण्ड कहा तो क्यों न मानेगा।

हँसके।

आपहीआप।) यहतो सिड़ी होगयाहै। इसके साथ रहने से मेरी भी दशा इसीकीसीहुई जाती है। (प्रकट) सखा, यह चित्र का भौंरा है॥

राजा— कैसे चित्र है।

मिश्रकेशी—अहा मैं समझगई। इसका इतना बेसुध होना यह चित्रविद्याकी निपुणता का गुण है॥

राजा—हेनिर्दयी मैं तो प्राणप्यारी के दर्शन का सुख लेताथा तूने क्यों सुध दिलाई कि यह चित्र है।

दर्शनसुख अनुभव से साक्षातहि तन्मयेहि हृदयेस। अबयाद तो कराया तँहिफिर चित्री किसी कान्ता॥ २१॥

(आंशू डाल दिये)

मिश्रकेशी—वियोगियों की यही दशा होती है अब इसको सब ओर कंटकही दिखाई देते हैं।

राजा—अब मैं इस भारी व्यथा को कैसे सहूँ। जो चाहूँ कि प्यारीसे स्वप्न में भी मिलूं तो नींद नहीं आती और चित्र में देख कर मन बहलाऊँ तो आंसू नहीं देखने देते।

प्रजागने सुस्वप्ने में नाहिं मिलता तिसी सँहो। आंशूतो चित्र मेंही ये देखने नहिं देतहैं॥ २२॥

मूलम्

सानुमती-सर्वथाप्रमार्जितंत्वयाप्रत्यादेशदुःखंशकुन्तलायाः ।

(प्रविश्य ।)

चतुरिका-जयतुजयतुभर्ता । वर्तिकाकरण्डकंगृहीत्वेतोमुखंप्रस्थितास्मि ।

राजा-किंच ।

चतुरिका-समेहस्तादन्तरातरलिकाद्वितीययादेव्यावसुमत्याहमेवार्यपुत्रस्योपनेष्यामीतिसबलात्कारंगृहीतः।

विदूषकः-दिष्ट्यात्वंमुक्ता ।

चतुरिका-यावद्देव्याविटपलग्नमुत्तरीयंतरलिकामोचयतितावन्मयानिर्वाहितआत्मा ।

राजा-वयस्य,उपस्थितादेवीबहुमानगर्विताच । भवानिमांप्रतिकृतिंरक्षतु ।

विदूषकः-आत्मानमितिभण । यदिभवानन्तःपुरकालकूटान्मोक्ष्यते । तदामांमेघप्रतिच्छन्देप्रासादेशब्दापय ।

(इतिद्रुतपदंनिष्क्रान्तः ।)

सानुमती-अन्यसंक्रान्तहृदयोपिप्रथमसम्भावनामपेक्षतेशिथिलसौहार्दइदानीमेषः ।

(प्रविश्यपत्रहस्ता)

प्रतीहारी-जयतुजयतुदेवः ।

राजा-वेत्रवति,नखल्वन्तरादृष्टात्वयादेवी ।

टीका

मिश्रकेशी–शकुन्तला को त्यागने का कलंक राजा के शिर से अब इस विलापने धोदिया ।

(चतुरिका फिरआई ।)

चतुरिका–महाराजजयहो । जबमें रंगोंका डिब्बा लेकर चलीतभी।
राजा–तब क्या हुवा ।
चतुरिका–तभी महारानी वसुमती पिंगला को साथ लिये आईं और मेरेहाथ से डिब्बा छीन कर कहा कि ला इसे मैंही महाराजको चलकर दूंगी ।
माढव्य–भलाहुवा जो तू बच आई ।
चतुरिका–रानीका वस्त्र एक कांटे से हिलग गया उसे छुड़ाने में पिंगला लगी तब तक मैं निकल आई ॥
राजा–हेसखामाढव्य ! मैं रानी वसुमती का मान बहुत करता हूँ इस से गर्वित होगई है । अब चित्र छुपाने का उपायकर ।
माढव्य–तुम्हीं छुपालो तो अच्छा है । जो तुम रनवास के कालकूट से छुटो तो मुझे रनवासकी ऊँची भीतपर बैठादो ।

(दौड़ागया ।)

मिश्रकेशी–आहा राजा अपने धर्म को कैसा पहिचानता है कि यद्यपि दूसरी पर आसक्तहै तौभी अपने अगले वचनका निर्वाह करता है ।

(प्रतीहारी–पत्रहाथ में लिये आयी ।)

प्रतीहारी–महाराज की जयहो ।
राजा–वेत्रवति, तुम ने इस समय महारानी वसुमती को तो नहीं देखा ।

मूलम्

प्रतीहारी—अथकिम् । पत्रहस्तांमांप्रेक्ष्यप्रतिनिवृत्ता ।

राजा—कार्यज्ञाकार्योपरोधंमेपरिहरति ।

प्रतीहारी—देव ! अमात्योविज्ञापयति । अर्थजातस्यगणनाबहुलतयैकमेवपौरकार्य्यमवेक्षितंतद्देवःपत्रारूढं प्रत्यक्षीकरोत्विति ।

राजा—इतःपत्रिकांदर्शय ।

(प्रतीहार्युपनयति ।)

राजा—(अनुवाच्य ।) कथम् । समुद्रव्यवहारीसार्थवाहो धनमित्रोनामनौव्यसनेविपन्नः । अनपत्यश्चकिल तपस्वी । राजगामीतस्यार्थसंचयइत्येतदमात्येनलिखितं।कष्टंखल्वनपत्यता। बहुधनत्वाद्बहुपत्नीकेनत त्रभवताभवितव्यम् । विचार्यतांयदिकाचिदापन्नसत्त्वातस्यभार्यासुस्यात् ।

प्रतीहारी—देव, इदानीमेवसाकेतस्यश्रेष्ठिनोदुहितानिर्वृत्तपुंसवनाजायास्यश्रूयते ।

राजा—ननुगर्भःपित्र्यंरिक्थमर्हतिगच्छ।एवममात्यंब्रूहि।

प्रतीहारी—यद्देवआज्ञापयति ।

टीका

प्रतीहारी–हां महाराज मुझे मिली तो थीं परंतु मेरेहाथ में चिट्ठी देख कर उलटी लौटगईं ।

राजा–रानी समयको पहिचानती है और मेरेराजकाज में विघ्न नहींडाला चाहती है ।

प्रतीहारी–महाराज मंत्रीने यह बिनतीकी है कि आज मुझ को रुपया सम्हारने के कामसे अवकाश नथा इस लिये केवल एकहीपुर कार्य किया है सो बहुत सावधानी से इस पत्र में लिख दियाहै कि आप कृपाकरके देखलें ।

राजा–पत्र मुझेदो ।

(प्रतीहारीनेदिया ।)

राजा–(बांचकर ।) कहतेहैं कि । एक धनवृद्धनाम बड़ा साहूकार था उसका बेटा मारागया कोई पुत्र उसके नहीं है और धन बहुत छोड़ा है महाराजकी आज्ञाहोतो वह धन भंडार में रक्खाजाय। यह मंत्रीने लिखा है । आह निपुत्री होना मनुष्य को कैसी बुरीबात है परन्तु जिसके इतना धनथा उसके स्त्री भी बहुत होंगी । पहिले यह पूछ लेना चाहिये कि उन स्त्रियों मेंसे कोई गर्भवती है या नहीं ।

प्रतीहारी–मैंने सुना है कि उसके एक स्त्री साकेतकसेठकी बेटी के इन दिनों गर्भाधान के संस्कार हुयेहैं ।

राजा–गर्भके बालक का यद्यपि जन्म अभी नहीं हुवा है तौभी अपने पिताके धनका वही अधिकारी होगा जाओ मंत्री से हमारी यह आज्ञा कहदो ।

प्रतीहारी–जो आज्ञा–

मूलम्

(इतिप्रस्थिता।)

राजा–एहितावत्।

प्रतीहारी–इयमस्मि।

राजा–किमनेनसंततिरस्तिनास्तीति।

येनयेनवियुज्यन्तेप्रजास्निग्धेनबन्धुना॥
ससपापादृतेतासांदुष्यन्तइतिघुष्यताम्॥ २३॥

प्रतीहारी–एवंनामघोषयितव्यम्। कालेप्रवृष्टमिवाभि-नंदितम्। देवस्यशासनम्।

राजा–(दीर्घमुष्णंचनिःश्वस्य।) एवंभोःसंततिच्छेदनिरवलम्बानांकुलानांमूलपुरुषावसानेसंपदःपरमुपतिष्ठन्ति। ममाप्यन्तेपुरुवंशश्रीरकालइवोप्तबीजाभूरिवसंवृत्ता।

प्रतीहारी–प्रतिहतममङ्गलम्।

राजा–धिङ्मामुपस्थितश्रेयोऽवमानिनम्।

सानुमती-असंशयंसखीमेवहृदयेकृत्वानिंदितोऽनेनात्मा।

राजा–

संरोपितेप्यात्मनिधर्मपत्नी
त्यक्तामयानामकुलप्रतिष्ठा॥
कल्पिष्यमाणामहतेफलाय
वसुंधराकालइवोप्तबीजा॥ २४॥

सानुमती–अपरिच्छिन्नेदानींतेसंततिर्भविष्यति।

टीका

(बाहरगई।)

राजा—ठैरोतो—

प्रतीहारी—आई।

राजा—साहूकारके संतान हो चाहे न हो।

भाईबंधु न जिस के हो प्रजाके मे वियोगभे॥ वह पाप विना मोको दुष्यन्त अस घेपिदो॥ २३॥

प्रतीहारी—यही ढंढोरा होजायगा। महाराज की आज्ञा की नगर में बड़ी बड़ाई हुई।

राजा—(गहरीसांस भरकर।) जब कोई बड़ा मनुष्य विना सन्तान मरता है तो उसकी संपत्ति योंही बिरानेघर जाती हैं। यही वृत्तान्त किसी दिन पुरुवंशियों के संचय किये धन का होना है।

प्रतीहारी—ईश्वर मंगल करै।

राजा—धिक्कार है मुझको कि मैंने प्राप्त हुये सुख को लातमारी।

मिश्रकेशी—निश्चय इसने सखी को हृदय में धरके अपनी निंदा की है।

राजा—

दोहा—

धर्मपत्निको त्यागदी कुल प्रतिष्ठा जोय।
बोई धरती फल निकट त्यागै जैसे कोय॥ २४॥

मिश्रकेशी—इस समय में तुम्हारी नाशरहित संतान होगी।

मूलम्

चतुरिका-(जनान्तिकम्) अयि, अनेनसार्थवाहवृत्तांते
नद्विगुणोद्वेगोभर्ता। एनमाश्वासयितुंमेघप्रतिच्छ-
न्दादार्यमाढव्यंगृहीत्वागच्छामि।

प्रतीहारी-सुष्ठुभणासि।

(इतिनिष्क्रान्ता।)

राजा-अहोदुष्यन्तस्यसंशयमारूढाःपिण्डभाजःकुतः।
अस्मात्परंबतयथाश्रुतिसंभृतानि
कोनःकुलेनिवपनानिनियच्छतीति॥
नूनंप्रसूतिविकलेनमयाप्रसिक्तम्
धौताश्रुशेषमुदकंपितरःपिबन्ति २५

(इतिमोहमुपगतः।)

चतुरिका-(ससम्भ्रममवलोक्य।)समाश्वसितुभर्ता।

सानुमती-हाधिक् हाधिक्।

सतिखलुदीपेऽव्यवधानदोषेणैषोऽन्धकारदोषमनुभव
ति। अहमिदानीमेवनिर्वृतंकरोमि।

अथवाश्रुतंमयाशकुन्तलां समाश्वासयन्त्यामहेन्द्र-
जनन्यामुखाद्यज्ञभागोत्सुकादेवाएवतथानुष्ठास्यन्ति।य-
थाचिरेणधर्मपत्नींभर्ताभिनन्दिष्यतीति। तन्नयुक्तंकालं
प्रतिपालयितुम्। यावदनेनवृत्तान्तेनप्रियसखींसमा-
श्वासयामि।(इत्युद्भ्रान्तकेननिष्क्रान्ता।)

(नेपथ्ये।)

अब्रह्मण्यम्।

टीका

चतुरिका-(हौले हौले।) मंत्री निर्दयीने उत्पातका भरा पत्र भेज राजाकी क्या दशा करदी है। इसको समुझाने को छत परसे आर्य माढव्यको लेकर आती हूँ।

प्रतीहारी-ठीककहती है।

(गई।)

राजा-पुरुवंश अबतक तो फला फूला और शुद्ध रहा परन्तु अब मुझे प्राप्त होकर समाप्त हुआ। काहेसे।

चौपाई-

मेपितरों को खटका होगा। को पीछे जल देने योगा॥
आह निपुत्री का जल छीवें। निज आंशू छोड़ा जलपीवें॥२५॥

(मूर्च्छित होगया।)

चतुरिका-(घबराहटसे देखकर।) महाराज सावधान हूजिये।

मिश्रकेशी-हाय हाय ! दीवेके अन्तर होनेसे यह अंधकार आपही मिटजायगा कि मैंही अब इसे आराम करूं॥

मैंने देवजननी अप्सरा को शकुन्तला से यह कहते सुना था कि जैसे देवता अपना यज्ञ भाग पाकर प्रसन्न होजाते हैं तू भी पतिके स्नेह से शीघ्रही आनन्द पावेगी। तो अब देर न होना चाहिये अब इस वृत्तान्त से प्रियसखी को समुझाऊँगी।

(उठकर चली गई।)

(नेपथ्ये।)

क्या ब्राह्मण की रक्षा करनेवाला कोई नहीं है।

मूलम्

राजा-(प्रत्यागतः । कर्णंदत्त्वा ।) अये, माढव्यस्येवार्त स्वरः । कःकोऽत्रभोः ।

(प्रविश्य ।)

प्रतीहारी-(ससंभ्रमम् ।) परित्रायतांदेवः संशयगतम् वयस्यम् ।

राजा-केनात्तगन्धोमाणवकः ।

प्रतीहारी-अदृष्टरूपेणकेनापिसत्त्वेनातिक्रम्य मेघप्रतिच्छंदस्यप्रासादस्याग्रभूमिमारोपितः ।

राजा-(उत्थाय ।) मा तावत् । ममापिसत्त्वैरभिभूयन्ते गृहाः ।

अथवा ।

अहन्यहन्यात्मन एवतावज्ज्ञातुंप्रमादस्खलितंनशक्यम् ॥ प्रजासुकःकेनपथाप्रयातीत्यशेषतोवेदितुमस्ति शक्तिः ॥ २६ ॥

(नेपथ्ये ।)

भोवयस्य अविहा अविहा ।

राजा-(गतिभेदेनपरिक्रामन् ।)सखे नभेतव्यंनभेतव्यम् ।

(नेपथ्ये ।)

(पुनस्तदेवपठित्वा ।) कथंनभेष्यामि । एषमांकोपि प्रत्यवनतशिरोधरंमिक्षुमिवत्रिभङ्गंकरोति ।

राजा-(सदृष्टिक्षेपम् ।) धनुस्तावत् ।

टीका

राजा-(सावधान होकर। और कान लगाकर।) अहा यह कौन माढव्यसा दुहाई देरहा है। कोई है कोई है।

(जाके।)

प्रतीहारी-(घबराकर।) महाराज आपत्ति में फसें अपने सखा को छुड़ावो।

राजा-किसने ब्राह्मण को घेरा है।

प्रतीहारी-एक पिशाच ऐसा आया कि किसी की दृष्टि न पड़ा और आपके सखाको दाबकर उस मुडेलकी भीति पर कि जो बादलों के मिले रहनेसे मेघच्छंद कहाती है धरदिया है।

राजा-(तुरन्त उठकर।) हैं मेरे रनिवासमें भी पिशाच रहते हैं अथवा-

दोहा-

दिन दिन मुझको चेत नहिं चित उन्मत्ता होय ॥
प्रजा विषे क्या होतहै कुछ नहिं जानों सोय ॥ २६ ॥

(नेपथ्यमें।)

हे सखा-अचरज है।

राजा-(सुनता और दौड़ता हुआ।) डरोमत मित्र कुछ भय नहीं। (नेपथ्य में।)

(फिर वैसेही कहता भया।)

भय क्यों नहीं है भूत तो मेरा कण्ठ पकड़े कलेजा ऐंठे डालता है।

राजा-(चारों ओर देखता हुआ।) है रे कोई मेरा धनुष लावे।

मूलम्

(प्रविश्यशार्ङ्गहस्ता)

यवनी—भर्तःएतद्धस्तावापसहितंशरासनम्।

राजा—(सशरंधनुरादत्ते)

(नेपथ्ये।)

एषत्वामभिनवकण्ठशोणितार्थी शार्दूलःपशुमिवहन्मिचेष्टमानम्॥ आर्तानांभयमपनेतुमात्तधन्वा दुष्यन्तस्तवशरणंभवत्विदानीम्॥ २७॥

राजा—(सरोषम्।) कथंमामेवोद्दिशति। तिष्ठकुणपाशन, त्वमिदानींनभविष्यसि।

(शार्ङ्गमारोप्य।)

वेत्रवतिसोपानमार्गमादेशय।

प्रतीहारी—इतइतोदेवः।

(सर्वेसत्वरमुपसर्पन्ति।)

राजा—(समन्ताद्विलोक्य।) शून्यंखल्विदम्।

(नेपथ्ये।)

अविहाअविहा। अहमत्रभवंतंपश्यामि। त्वंमांनपश्यसि बिडालगृहीतोमूषिकइवनिराशोस्मिजीवितेसंवृत्तः।

राजा—भोस्तिरस्करिणीगर्वित, मदीयंशस्त्रंत्वांद्रक्ष्यति एषतमिषुंसंदधे।

योहनिष्यतिवध्यंत्वां रक्ष्यंरक्षतिचद्विजम्॥ हंसोहि क्षीरमादत्ते तन्मिश्रावर्जयत्यपः॥ २८॥

टीका

(धनुषबाण सहित यवनीजाके।)

यवनी–बाणसमेत धनुष महाराज यह है (राजाने बाणसहित धनुष ले लिया।)

(नेपथ्यमें।)

एहूं में अभिनवरक्त कण्ठ इच्छू मारूं सिंह पशुहि जिमि चेष्टि तको। आर्तों का भय विनशत लेय धन्वा दुष्यन्ता तव शरणा भवतु अभी तो ॥ २७ ॥

राजा–(क्रोधसे।) यह पिशाच तो मुझे भी चिनौती देताहै। अरे नीच ! खड़ारह मैं आया अब तू नहीं बचेगा।

(धनुष चढ़ाकर।)

वेत्रवति, छतकी गैल बताओ।

प्रतीहारी–गैल यह है महाराज,।

(सब तुरन्त बाहर गये।)

× (स्थान एक बड़ी चौड़ी छत।) ×

राजा–(चारों ओर देखकर।) हैं यहां तो कोई नहीं है।

(नेपथ्य में।)

बचाओ कोई मुझे बचाओ महाराज मैं तो तुम्हें देखताहूँ तुम्हीं मुझे नहीं देख सकते हो ॥

इस समय में ऐसा हो रहाहूं जैसे बिलाव का ग्रसा चूहा।

राजा–हे परदे के अहङ्कारी ! मेरा यह शस्त्र तुझे देखेगा मैं इसी बाण को चढ़ाताहूँ।

जो हनैगा तुझे योग्या रक्षा योगयहि राखिते।
हंसा ज्यूँ दूध पी लेवे पानी को जिमि छोड़दे ॥ २८ ॥

मूलम्

(इत्यस्त्रंसंधत्ते ।)

(ततःप्रविशतिविदूषकमुत्सृज्यमातलिः ।)

मातलिः—

कृताःशरव्यंहरिणातवासुराःशरासनंतेषुविकृष्यतामिदम् ॥ प्रसादसौम्यानिसतांसुहृज्जने पतन्तिचक्षूंषिनदारुणाःशराः ॥ २९ ॥

राजा—(अस्त्रमुपसंहरन् ।) अयेमातलिः,स्वागतंमहेन्द्रसारथे । (प्रविश्य)

विदूषकः—अहंयेनेष्टिपशुमारंमारितः सोनेनस्वागतेनाभिनन्द्यते ।

मातलिः—(सस्मितम् ।) आयुष्मन्श्रूयताम् यदस्मिहरिणाभवत्सकाशंप्रेषितः

राजा—अवहितोस्मि ।

मातलिः—अस्तिकालनेमिप्रसूतिर्दुर्जयोनामदानवगणः

राजा—अस्ति । श्रुतंपूर्वं मया नारदात् ।

मातलिः—

सख्युस्तेसकिलशतक्रतोरजय्यस्तस्यत्वंरणशिरसिस्मृतोनिहन्ता ॥ उच्छेत्तुंप्रभवतियन्नसप्तसप्तिस्तन्नैशंतिमिरमपाकरोतिचन्द्रः ॥ ३० ॥

सभवानात्तशस्त्रएवइदानींतमैंद्ररथमारुह्यविजयाय प्रतिष्ठताम् ।

टीका

(धनुष ताना।)

(माढव्य को छोड़ मातलि आया।)

मातलि–

किये हरी ने असुरा निशाने शरासना तिनमहिं ऐंचिहो तुम्हीं ॥
कृपा कि दृष्टी गिरती सुहृज्जनौं गिरैं कठोरा नहिं बाणतिन्मतो २९

राजा–(अस्त्र रखता भया।) अहा !

मातलि तुम भले आये।

(जाके।)

माढव्य–हैं यह तो मुझे बधिक की भांति मारे डालता था। आप इसको आदर करते हो।

मातलि–(मुसक्याकर।) महाराज ! मैं इन्द्रका संदेशा लेकर आयाहूँ सो सुनलो।

राजा–कहो मैं कान लगाकर सुनताहूँ।

मातलि–कालनेमि के वंश में दानवों का ऐसा एकगण प्रबल हुआ है कि उसका जीतना इन्द्रको कठिन होरहा है।

राजा–यह तो मैंने आगेही नारद से सुन लियाहै।

मातलि–

मित्रा है तब वह इन्द्र जो न हारे तिसके तू रण जगह कि हानि हन्ता ॥ जाको सूर्यभि असमर्थ नाशतही सो चन्द्रा करतहि नाश अंधियारा ॥ ३० ॥

सो महाराज इस रथपर चढ़ो और धनुष लेकर विजयको चलो

मूलम्

राजा—अनुगृहीतोऽहमनया मघवतः संभावनया । अथ माढव्यं प्रति भवता किमेवं प्रयुक्तम् ।

मातलिः—तदपि कथ्यते । किंचिन्निमित्तादपि मनःसंतापादायुष्मान्मया विक्लवो दृष्टः । पश्चात्कोपयितुमायुष्मन्तं तथा कृतवानस्मि । कुतः ।

ज्वलति चलितेन्धनोऽग्निर्विप्रकृतः पन्नगः फणां कुरुते ॥
प्रायः स्वं महिमानं क्षोभात्प्रतिपद्यते हि जनः ॥ ३१ ॥

राजा—(जनान्तिकम् ।) वयस्य, अनतिक्रमणीया दिवस्पते राज्ञा ।

तदत्र परिगतार्थं कृत्वा मद्वचनादमात्यपिशुनं ब्रूहि ।
त्वन्मतिः केवला तावत्परिपालयतु प्रजाः । अधिज्यमिदमन्यस्मिन्कर्मणि व्यापृतं धनुः ॥ ३२ ॥

इति ।

विदूषकः—यद्भवानाज्ञापयति ।

(इति निष्क्रान्तः ।)

मातलिः—आयुष्मान्रथमारोहतु ।

(राजा रथाधिरोहणं नाटयति ।)

(इति निष्क्रान्ताः सर्वे ।)

इति षष्ठोऽङ्कः ॥ ६ ॥

टीका

राजा–देवराजने मेरे ऊपर बड़ी कृपाकी है इससे मैं सनाथ हुआ परंतु तुम यह कहो कि मेरे सखा माढव्य को इतना क्यों सताया है ।

मातलि–सो भी कहताहूँ ॥ आपको बहुत उदास देखकर चैतन्य करने के लिये मैंने रोस दिलाया था क्योंकि जैसे ।

दोहा–

अग्नि चलाये जलतहै छेड़े फणकर साँप ॥
ऐसे छोह करे भये नर तेजस्वी आप ॥ ३१ ॥

राजा–(माढव्य से हौले ।) हे सखा ! देवपति की आज्ञा उल्लंघन योग्य नहीं ।

इस से तुम जाकर यह समाचार मन्त्री को सुनादो और कहो कि ।

दोहा–

जबतक मेरा धनुषयह और कर्म लगजात ॥
तबतक तेरी बुद्धि यह पालो प्रजासुजात ॥ ३२ ॥

यह ।

माढव्य–जो आज्ञा महाराज की ।

(गया ।)

मातलि–रथपरचढ़ो महाराज–

(दुष्यंत रथपरचढ़ा ।)

(सबगये ।)

इति श्रीमन्नारीनवलान्तिकवर्तिनिवाजयपुरस्थलक्ष्मीनारायण शर्मणासङ्कलितोऽयंषष्ठोऽङ्कःसमाप्तः ॥ ६ ॥

श्रीगणेशाय नमः ।

अभिज्ञानशाकुन्तलन्नाटकम् ॥

—०—

सप्तमोऽङ्कः ॥

(ततःप्रविशत्याकाशयानेनरथाधिरूढोराजा मातलिश्च ।)

राजा—मातलेअनुष्ठितनिदेशोपिमघवतःसत्क्रियाविशेषादनुपयुक्तमिवात्मानंसमर्थये ।

मातलिः—(सस्मितम् ।) आयुष्मन्, उभयमप्यपरितोषं समर्थये ।

प्रथमोपकृतंमरुत्वतः प्रतिपत्त्यालघुमन्यतेभवान् ॥
गणयत्यवदानविस्मितो भवतःसोपिनसत्क्रियागुणान् १

राजा—मातलेमामेवम् ।

सखलुमनोरथानामप्यभूमिर्विसर्जनावसरसत्कारः ।
ममहिदिवौकसांसमक्षमर्धासनोपवेशितस्य ।

अन्तर्गतप्रार्थनमन्तिकस्थं जयन्तमुद्वीक्ष्यकृतस्मितेन ॥ आमृष्टवक्षोहरिचन्दनाङ्कामन्दारमालाहरिणापिनद्धा ॥ २ ॥

मातलिः—किमिवनामायुष्मानमरेश्वरान्नार्हति । पश्य ।

सुखपरस्यहरेरुभयैःकृतं त्रिदिवदानवमुद्धृतकण्टकम् ॥ तवशरैरधुनानतपर्वभिः पुरुषकेशरिणश्चपुरानखैः ॥ ३ ॥

श्रीगणेशाय नमः ॥

अभिज्ञानशकुन्तला नाटक ॥

सातवां अङ्क ॥

(दुष्यन्त और मातलि रथपर चढ़े आकाश मार्ग में आये ।)

राजा—हे मातलि, मैंने इन्द्रकी आज्ञा पाली सो यह बात तो कुछ ऐसी बड़ी न थी जिसके लिये मुझे इतनी प्रतिष्ठा मिली।

मातलि—(हँसकर ।) दोनों को यही संकोच है ।

उपकार कियाह इन्द्रका गुरुतासे लघुमानते हैं आप । सन-मान किया तिसी न भी तिसका वोभि न मानता गुणों ॥ १ ॥

राजा—ऐसामतकहो।

इन्द्रने मेरा बड़ा सत्कारकिया कि मुझे अपनी आधीगद्दीपर देवताओं के देखते जगहदी और ॥

येही बड़ाई मिलनेकुंबैठअ जयन्तको देख हँसा कुछेक ॥ मेरेल-गायाहरिचंदनाओ मन्दारमाला हरिनेपिन्हाई ॥ २ ॥

मातलि—हे राजा। इन्द्रसे आप किस किस सत्कार योग्यनहीं हो।

दोहा—

दोनों इन्द्र सुखी किया असुर शूलकर नास ॥
पहिले तो नरसिंहने अब शर जो तव पास ॥ ३ ॥

मूलम्

राजा—अत्रखलुशतक्रतोरेवमहिमास्तुत्यः।

सिध्यन्तिकर्मसुमहत्स्वपियन्नियोज्याः
संभावनागुणमवेहितमीश्वराणाम्॥
किंवाभविष्यदरुणस्तमसांविभेत्ता
तंचेत्सहस्रकिरणोधुरिनाकरिष्यत्॥ ४॥

मातलिः—सदृशमेवैतत्। (स्तोकमन्तरमतीत्य) आयुष्मन्, इतःपश्यनाकपृष्ठप्रतिष्ठितस्यसौभाग्यमात्म यशसः।

विच्छित्तिशेषैःसुरसुन्दरीणां वर्णैरमीकल्पलतांशुकेषु॥ विचिन्त्यगीतक्षममर्थजातं दिवौकसस्त्वच्चरितं लिखन्ति॥ ५॥

राजा—मातले—असुरसंप्रहारोत्सुकेनपूर्वेद्युर्दिवमधिरोहतानलक्षितःस्वर्गमार्गः। कतरस्मिन्मरुतांपथिवर्तामहे।

मातलिः—

त्रिस्रोतसंवहतियोगगनप्रतिष्ठां
ज्योतींषिवर्तयतिचप्रविभक्तरश्मिः॥
तस्यद्वितीयहरिविक्रमनिस्तमस्कं
वायोरिमंपरिवहस्यवदन्तिमार्गम्॥ ६॥

राजा—मातलेअतःखलुसबाह्यकरणोममान्तरात्माप्रसीदति। (रथाङ्गमवलोक्य।)मेघपदवीमवतीर्णौस्वः।

मातलिः—कथमवगम्यते।

टीका

राजा–यहां इन्द्रही बड़ाई करनेयोग्य हैं।

सिद्धाहुआ अपि बड़ोंक कहा जुकर्मा आज्ञागुणातु वह एहि ह ईश्वरोंका॥ प्रातर्ललाई रविकी अँधेरा मेटेकसें रविकरैं न जुअ प्रतिस्को॥ ४॥

मातलि–आपको ऐसाही कहना उचित है। (कुछ आगे बढ़कर।) हे राजा! अपने स्वर्गतक प्राप्तहुये यश की शोभादेखो॥
जो लाख छोड़ी सुरसुन्दरीन्ने अंगोंलगा कल्पलताकपत्तौं।
तिसीरसासे कुछ गान योग्या देवालिखैं हैं तव गीतकीर्ति॥५॥

राजा–हे मातलि! दानवों को जीतनेके उत्साहमें इधरसे जातेहुये इस शुभस्थानको भलीभांति नहीं देखाथा अब तुम कहो इस समय पवनके कौनसे मार्गमें चलरहे हैं॥

मातलि–

छंद प्रमाणिका–

अकाश गंग सोहती त्रिलोक में तिसे धरे।
भलेरु चक्र ज्योतिके फिराय भाग ये करे॥
द्वितीय पाद विष्णु का यही जु अंधको हरे।
चलै जु वायुपंथहै तिसे जु नाम यों धरे॥ ६॥

राजा–यह शोभा देख मेरे रोम रोम प्रसन्न होगये हैं। (पहियोंको देखकर।) अब हम मेघोंके मार्ग में चलते हैं।

मातलि–यह आपने क्योंकर जाना।

मूलम्

राजा–

अयमरविवरेभ्यश्चातकैर्निष्पतद्भिर्हरिभिरचिरभासांतेजसाचानुलिप्तैः ॥ गतमुपरिघनानांवारिगर्भोदराणां पिशुनयतिरथस्तेसीकरक्लिन्ननेमिः ॥ ७ ॥

मातलिः–क्षणादायुष्मान्स्वाधिकारभूमौवर्तिष्यते ।

राजा–(अधोलोक्य) वेगावतरणादाश्चर्यदर्शनः संलक्ष्यतेमनुष्यलोकः । तथाहि ।

शैलानामवरोहतीवशिखरादुन्मज्जतांमेदिनी पर्णस्वान्तरलीनतां विजहतिस्कन्धोदयात्पादपाः ॥ संतानैस्तनुभावनष्टसलिलाव्यक्तंभजन्त्यापगाः केनाप्युत्क्षिपितेवपश्यभुवनंमत्पार्श्वमानीयते ॥ ८ ॥

मातलिः–साधुदृष्टम् । सबहुमानमवलोक्य ।) अहोउदाररमणीयापृथिवी ।

राजा–मातलेकतमोऽयंपूर्वापरसमुद्रावगाढः । कनकरसनिस्यन्दीसान्ध्यइवमेघपरिघः सानुमानालोक्यते ।

मातलिः–आयुष्मन् ! एषखलुहेमकूटोनामकिंपुरुषपर्वतस्तपःसंसिद्धिक्षेत्रम् । पश्य ।

स्वायम्भुवान्मरीचेर्यः प्रबभूवप्रजापतिः । सुरासुरगुरुः सोऽत्रसपत्नीकस्तपस्यति ॥ ९ ॥

टीका

राजा-

चलत रथक चक्रा मीगते चातका भी उड़त अवर घोड़े बिज् लिसे चम् चमाँवें। सजल चलत मेघों ये कहै जो रथाहि यहि बि- धि अब मैंहूँ जानता मेघमार्गा ॥ ७ ॥

मातलि-ठीकहै अभी एक क्षणमें आप अपने राज्यमें पहुंचतेहो।

राजा-(नीचे को देखकर ।) स्वर्ग के घोड़ों के वेगसे उतरने में यहां समस्त अचरज सा दिखाई देता है।

वैसेही-

शैलों के शिखरों सजात दिखती पृथ्वी भि नीचे मुझे दीखैं श्वेत बनी सिरेखनदियां छोटी बनीसी यहां ॥ वृक्षा दीखत मानु प- त्तिहि नहीं सूके खड़े हैं असैं भूगोला मम ओर गेंदस बना फेंका चला आवता ॥ ८ ॥

मातलि-भला देखा। (पृथ्वी को आदर से देखकर ।) हे राजा! देखो मनुष्यलोक कैसा वैभवमान दिखाई देता है।

राजा-मातलि बताओ तो यह कौनसा पहाड़ है जो पूर्व और पश्चिम के समुद्रों में सोने का सा कटिबन्ध दिखाई देता है। और संध्याके मेघके समान सुवर्णकीसी धारा बरसाताहै ॥

मातलि-महाराज यह गन्धर्वों का हेमकूट नाम पर्वत है सृष्टि में इससे उत्तम कोई स्थान तपस्या सिद्धिकरने के लिये नहीं है। देखो।

स्वायम्भुवमरीचीसे जो प्रजापति होत भा। सुरासुर गुरूये हैं स्त्री समेत तपै यहाँ ॥ ९ ॥

मूलम्

राजा—तेनह्यनतिक्रमणीयानिश्रेयांसि । प्रदक्षिणीकृत्य भगवन्तंगन्तुमिच्छामि ।

मातलिः—प्रथमःकल्पः ।

(नाट्येनावतीर्णौ ।)

राजा—(सविस्मयम् ।)

उपोढशब्दानरथाङ्गनेमयः
प्रवर्तमानंनचदृश्यतेरजः ॥
अभूतलस्पर्शतयानिरुद्धत
स्तवावतीर्णोपिरथोनलक्ष्यते ॥ १० ॥

मातलिः—एतावानेवशतक्रतोरायुष्मतश्चविशेषः ।

राजा—मातलेकतमस्मिन्देशेमारीचाश्रमः ।

मातलिः—(हस्तेनदर्शयन् ।)

वल्मीकाग्रनिमग्नमूर्त्तिरुरसासंदष्टसर्पत्वचा कण्ठेजीर्णलताप्रतानवलयेनात्यर्थसम्पीडितः ॥ असव्यापिशकुन्तनीडनिचितंबिभ्रज्जटामण्डलं यत्रस्थाणुरिवाचलो मुनिरसावभ्यर्कबिम्बंस्थितः ॥ ११ ॥

राजा—नमस्तेकष्टतपसे ।

मातलिः—(संयतप्रग्रहंरथंकृत्वा ।)

महाराजएतावदितिपरिवर्धितमन्दारवृक्षंप्रजापतेराश्रमं प्रविष्टौस्वः ।

राजा—स्वर्गादधिकतरं निर्वृतिस्थानम् । अमृतह्रदमिवावगाढोस्मि ।

टीका

राजा–कल्याण प्राप्त करने का यह अवसर चूकनेयोग्य नहीं है आओ उनको प्रणाम करके चलेंगे ॥

मातलि–बहुत अच्छा ।

(धीरज से उतरे ।)

राजा–(आश्चर्य्य से ।) [रथके पहियों का कुछ ही आहट नहीं हुआ । न कुछ धूलि उड़ी न उतरने में थकावट भई ।]

हुआ न शब्दारथनेमि चक्रका उठी न धूली दिखी हमोंको ॥ न
भूमि छूतेजु हुआ न आहट न जान पड़ता उतरा रथाते ॥१०॥

मातलि–हे राजा ! आपके और इन्द्रके रथमें इतना अन्तरहै ।

राजा–हे मातलि ! किस देशमें मारीच(कश्यप) का आश्रमहै? ।

मातलि–(हाथसे दिखलाकर ।)

बांबी में जुधँसारुखायलथि है जिसकी त्वचा सर्पने कंठेजी-
र्णलता लपेटि जिसको औ दुःख जादा सहै ॥ स्कंधोपेह गिरी
जटाकि जिसमें पक्षी किये घोंसले कैसे ठूंठ अचल्लसा मुनि खड़ा
सूर्य्यै दई दृष्टि है ॥ ११ ॥

राजा–ऐसे उग्रतपस्वी को नमस्कार है ।

मातलि–(घोड़ों की रास खैंच कर ।) बस यहां से आगे रथ न जाना चाहिये अब हम उस स्थानपर आगये हैं जहां स्वर्गकी नदी ऋषिके मन्दार वृक्षको सींचती है ।

राजा–यहां इन्द्रलोक से भी अधिक सुखहै इस समय मेरा ऐसा ध्यान बंधरहा है मानों अमृतके कुण्ड में न्हाताहूं ।

मूलम्

मातलिः-(रथंस्थापयित्वा ।) अवतरत्वायुष्मान् ।
राजा-(अवतीर्य) मातलेभवान्कथमिदानीम् ।
मातलिः-संयन्त्रितोमयारथः । वयमप्यवतरामः । (तथाकृत्वा ।) इतआयुष्मान् (परिक्रम्य ।) दृश्यन्तामत्रभवतामृषीणांतपोवनभूमयः ।
राजा-ननुविस्मयादवलोकयामि ।

प्राणानामनिलेनवृत्तिरुचितासत्कल्पवृक्षेवने
तोयेकाञ्चनपद्मरेणुकपिशेधर्माभिषेकक्रिया ॥
ध्यानंरत्नशिलातलेषुविबुधस्त्रीसन्निधौसंयमो
यत्काङ्क्षन्तितपोभिरन्यमुनयस्तस्मिंस्तपस्य
न्त्यमी ॥ १२ ॥

मातलिः-उत्सर्पिणीखलुमहताम्प्रार्थना (परिक्रम्यआकाशे ।) अयेवृद्धशाकल्य ! किमनुतिष्ठतिमारीचः । किंब्रवीषि । दाक्षायण्यापतिव्रताधर्ममधिकृत्यपृष्टस्तस्यै महर्षिपत्नीसहितायैकथयतीति ।
राजा-(कर्णंदत्त्वा।) अयेप्रतिपाल्यावसरःखलुप्रस्तावः।
मातलिः-(राजानमवलोक्य ।) अस्मिन्नशोकवृक्षमूले तावदास्तामायुष्मान् यावत्त्वामिन्द्रगुरवेनिवेदयितु मन्तरान्वेषीभवामि ।
राजा-यथाभवान्मन्यते । (इतिस्थितः ।)
मातलिः-आयुष्मन्, साधयाम्यहम् ।

टीका

मातलि–(रथको ठहराकर।) महाराज। अब उतर लीजिये।

राजा–(रथसे उतरकर।) तुम रथको छोड़के कैसे चलोगे।

मातलि–इसका मैंने यत्नकरदिया है। + आपसे आप यहां खड़ा रहैगा। हमभी उतरते हैं। (उतरकर।) महाराज इसमार्ग आओ (घूमकर।) बड़े महात्मातपस्वियों के स्थान देखो।

राजा–कैसा आश्चर्य मुझे इन तपस्वियों के देखनेसे होता है।

छंद–

भोजन करैं ऋषि वायुका सत्कल्प वृक्षोंके वनों।
धर्मक्रिया जलसे करैं जो पीत पद्मन कंचनों॥
ध्यान रत्नों की शिला बैठे सुरस्त्री बंचनों।
जो मुनी करते तपस्यासो रुचा हैं मुनिजनों॥ १२॥

मातलि–सत्पुरुषोंकी अभिलाषा सदा उत्तम से उत्तम वस्तुपाने के लिये बढ़ती रहती है। (एक ओर को घूमकर आकाश में।) कहो वृद्ध शाकल्य इस समय महात्मा कश्यप ऋषि क्या कर रहे हैं क्या दक्षकी बेटीने जो पतिव्रत धर्म पूंछा उनसे सम्भाषण करते हैं।

राजा–(कानदेकर।) तो अभी कुछ ठहरना चाहिये।

मातलि–(राजाकी ओर देखकर।) आप इस अशोक वृक्षकी छाया में विश्राम कीजिये तबतक मैं आपके आनेका संदेशा अवसर देखकर इन्द्रके पितासे कह आऊँ।

राजा–बहुत अच्छा। (ठहरा।)

मूलम्

(इति निष्क्रान्तः ।)

राजा—(निमित्तंसूचयित्वा ।)

मनोरथायनाशंसे किंबाहोस्पन्दसेवृथा ॥ पूर्वावधी रितंश्रेयोदुःखंहिपरिवर्तते ॥ १३ ॥

(नेपथ्ये ।)

माखलुचापलंकुरु । कथंगतएवात्मनःप्रकृतिम् ।

राजा—(कर्णंदत्त्वा ।) अभूमिरियमविनयस्य । कोनुखल्वेषनिषिध्यते (शब्दानुसारेणावलोक्य । सविस्मयम् ।) अयेकोनुखल्वयमनुबध्यमानस्तपस्विनीभ्यामबालसत्त्वोबालः ।

अर्धपीतस्तनंमातुरामर्दक्लिष्टकेसरम् । प्रक्रीडितुंसिंहशिशुंबलात्कारेणकर्षति ॥ १४ ॥

(ततःप्रविशतियथानिर्दिष्टकर्मातपस्विनीभ्यांबालः ।)

बालः—जृम्भस्वसिंहदन्तांस्तेगणयिष्ये ।

प्रथमा—अविनीतकिंनोऽपत्यनिर्विशेषाणिसत्त्वानिविप्रकरोषि । हन्तवर्धतेतवसंरम्भः स्थानेखलुऋषिजनेनसर्वदमनइतिकृतनामधेयोऽसि ।

राजा—किन्नुखलुबालेऽस्मिनौरसइवपुत्रेस्निह्यतिमेमनः नूनमनपत्यतामांवत्सलयति ।

टीका

मातलि–मैं जाताहूं। (गया।) (राजाकी भुजा फरकी।)

राजा–मनोरथानुहैहीनाबाहूतू फरकेह क्यूं। छोड़ाकल्याणपीछेही दुःखमात्रबचा अभी ॥ १३ ॥

(नेपथ्यमें।)

अरे ऐसी चपलता क्यों करता है क्यों तू अपनी बानि नहीं छोड़ता।

राजा–(कानलगाकर।) हैं ऐसे स्थानमें ताड़नाका क्या काम है। यह सीख किसको होरही है। (जिधर बोल सुनाई दिया उधर देखकर और आश्चर्य से।) आहा यह किसका पराक्रमी बालक है जिसे दो तपस्विनी रोकती हैं तौभी खेल में नाहर के भूखे बच्चेको खैंचेलाता है।

आधापीयस्तनामाका खैंचतकेश झुके। कठिन् ऐसे सिंहसुखे ले जोरसे खींचताहुए ॥ १४ ॥

(सिंहके बचेको घसीटताहुआ एक बालक आया और उस के साथ दो तपस्विनी आयीं)

बालक–अरे छावड़े तू अपना मुख खोल मैं तेरे दांत गिनूंगा ॥

पहिलीतपस्विनी–ए हठीले बालक तू इसबनके पशुओं को क्यों सताता है। हम तो इनको बालबच्चों के समान रखती हैं तेरा खेलमें भी साहस नहीं जाता इसीसे तेरा नाम ऋषिने सर्वदमन रक्खा है।

राजा–अहाक्या कारण है कि मेरा स्नेह इस लड़के में पुत्रकासा होता आता है। हो नहो यह हेतु है कि मैं पुत्रहीनहूं।

मूलम्

द्वितीया–एषाखलुकेसरिणीत्वांलङ्घयिष्यतियदितस्याः पुत्रकन्नमुञ्चसि ।

बालः–(सस्मितम् ।) अहोबलीयःखलुभीतोस्मि ।

(इत्यधरंदर्शयति ।)

राजा–

महतस्तेजसोबीजंबालोयंप्रतिभातिमे ॥ स्फुलिङ्गा वस्थयावह्निरेधापेक्षइवस्थितः ॥ १५ ॥

प्रथमा–वत्सएनंबालमृगेन्द्रंमुञ्च अपरंतेक्रीडनकंदास्यामि ।

बालः–कुत्रदेह्येतत् (इतिहस्तंप्रसारयति ।)

राजा–कथंचक्रवर्तिलक्षणमप्यनेनधार्यते तथाह्यस्य ।

प्रलोभ्यवस्तुप्रणयप्रसारितो विभातिजालग्रथिताङ्गुलिःकरः ॥ अलक्ष्यपत्रान्तरमिद्धरागयानवोषसाभिन्नमिवैकपङ्कजम् ॥ १६ ॥

द्वितीया–सुव्रतेनशक्यएषवाचामात्रेणविरमयितुम् । गच्छत्वम् । मदीयउटजेमार्कण्डेयस्यर्षिकुमारस्यवर्णचित्रितोमृत्तिकामयूरस्तिष्ठति । तमस्योपहर ।

प्रथमा–तथा-(इति निष्क्रान्ता ।)

बालः–अनेनैव तावत्क्रीडिष्यामि । (इतितापसींविलोक्य हसति ।)

राजा–स्पृहयामिखलुदुर्ललितायास्मै ।

टीका

दूसरीतपस्विनी–जो तू इसबच्चे को न छोड़देगा तौ सिंहनी तुझपर दौड़ेगी।

बालक–(मुसक्याकर।) ठीक है सिंहनी का मुझे ऐसाही डर है (रोस में आकर होठ काटने लगा।)

राजा–बड़ों के तेजका वीर्य बालका दिखताहए। बढ़े अग्नीहु जैसे हो सूके काठजली भई ॥ १५ ॥

प०तपस्विनी–हे बालक ! सिंहके बच्चेको छोड़दे मैं तुझे उससे भी सुन्दर खिलौनादूंगी।

बालक–पहले खिलौनादेदो लाओ कहां है (हाथपसारकर।)

राजा–आहा इसके हाथमें तौ चक्रवर्तीके लक्षण हैं–ऐसेही इसके। लिया खिलौने कु पसार हाथको गुँथी भलीजालसुंइस्कि अंगुली ॥ पतों छुई कान्तिबनी हइस्कितो प्रभातके पद्मसि- शोभतीहै ॥ १६ ॥

दू०तपस्विनी–हेसखी!सुव्रता यह बातों से न मानेगा जातू कुटीमें एक मिट्टीका मोर ऋषिकुमारशंकरके खेलनेका रक्खा है सो लेआ।

दू०तपस्विनी–अच्छा (गई।)

बालक–तबतक मैं इसी सिंहके बच्चे से खेलूंगा। (तपस्विनी को देख हंसा !)

राजा–इस लड़के को मेरा जी कैसा खिलानेको चाहता है।

मूलम्

आलक्ष्यदन्तमुकुलाननिमित्तहासैरव्यक्तवर्णरमणीयवचःप्रवृत्तीन् ॥ अङ्काश्रयप्रणयिनस्तनयान्वहन्तो धन्यास्तदङ्गरजसामलिनीभवन्ति ॥ १७ ॥

तापसी—भवतु । नममार्यंगणयति (पार्श्वमवलोकयति ।)कोऽत्रऋषिकुमाराणाम् । (राजानमवलोक्य ।) भद्रमुखएहितावत् । मोचयानेनदुर्मोकहस्तग्रहेणडिम्भलीलयाबाध्यमानम् । बालमृगेन्द्रम् ।

राजा—(उपगम्य । सस्मितम् ।) अयिभोमहर्षिपुत्र,

एवमाश्रमविरुद्धवृत्तिना
संयमःकिमितिजन्मतस्त्वया ॥
सत्त्वसंश्रयसुखोऽपिदूष्यते
कृष्णसर्पशिशुनेवचन्दनम् ॥ १८ ॥

तापसी—भद्रमुखनखल्वयमृषिकुमारः ।

राजा—आकारसदृशंचेष्टितमेवास्यकथयति । स्थानप्रत्ययात्तुवयमेवंतर्किणः ।(यथाभ्यर्थितमनुतिष्ठन्बालस्पर्शमुपलभ्य । आत्मगतम् ।)

अनेनकस्यापिकुलाङ्कुरेण
स्पृष्टस्यगात्रेषुसुखंममैवम् ॥
कांनिर्वृतिंचेतसितस्यकुर्याद्
यस्यायमङ्कात्कृतिनःप्ररूढः ॥ १९ ॥

टीका

निष्कारणाहि हँस उज्ज्वल कांन्तिदेवैं दाँतों कि मोत्न तुतुलाइ हवेलते हैं॥ गोदी खिलाय सुख पावत पुत्रका जो धन्यांभि वेरजलगाइ जिन्हों कि गोदी ॥ १७॥

तपस्विनी–हो सो हो यह मेरा कहा नहीं मानता है (इधर उधर देखकर।) कोई ऋषि है यहां। (दुष्यन्तको देखा।) अहो परदेशी आओ कृपाकरके इस बली बालकके हाथ से सिंहके के बच्चेको छुड़ाओ।

राजा–(लड़के के पास जाकर और हंसकर।) हे ऋषिकुमार!

एहु आश्रम विरुद्धवृत्तिसे
संयमाक्युँ इह जन्ममेतुने॥
क्योंदुखी कियाहि सिंहको
श्यामसर्प शिशुनेज्युंचन्दना॥ १८॥

तापसी–हे बटोही यह ऋषिकुमार नहीं है।

राजा–सत्य है इसके काम ऐसेही साहस के हैं कि यह ऋषिपुत्र नहीं जानपड़ता। परन्तु मैंने तपोवन में इसका वास देख ऋषिपुत्र जानाथा। (लड़के का हाथ हाथमें लेकर आपही आप।)

इसी किसीके सुतसेहिमैं तो
सुखी भया गात कु छूयकेही॥
जिस्पुण्यवान्से यह पुत्र पैदा
आनंद कैसा यह देत होगा॥ १९॥

मूलम्

तापसी—(उभौ निर्वर्ण्य ।) आश्चर्यमाश्चर्यम् ।

राजा—आर्ये किमिव ।

तापसी—अस्य बालस्य तेऽपि संवादिन्याकृतिरिति विस्मापितास्मि । अपरिचितस्यापि तेऽप्रतिलोमः संवृत्त इति ।

राजा—(बालकमुपलालयन् ।) न चेन्मुनिकुमारोऽयम् । अथ कोऽस्य व्यपदेशः ।

तापसी—पुरुवंशः ।

राजा—(आत्मगतम् ।) कथमेकान्वयो मम । अतः खलु मदनुकारिणमेनमत्रभवती मन्यते । अस्त्येतत् पौरवाणामन्त्यं कुलव्रतम् ।

भवनेषु रसाधिकेषु पूर्वं क्षितिरक्षार्थमुशन्ति ये निवासम् ॥ नियतैकपतिव्रतानि पश्चात्तरुमूलानि गृही भवन्ति तेषाम् ॥ २० ॥

(प्रकाशम् ।) न पुनरात्मगत्या मानुषाणामेष विषयः ।

तापसी—यथा भद्रमुखो भणत्यप्सरः संबंधेनास्य जनन्यत्र देवगुरोस्तपोवने प्रसूता ।

राजा—(अपवार्य ।) हन्त द्वितीयमिदमाशाजननम् । (प्रकाशम् ।) अथ सा तत्रभवती किमाख्यस्य राजर्षेः पत्नी ।

तापसी—कस्तस्य धर्मदारपरित्यागिनो नाम संकीर्तयितुं चिन्तयिष्यति ।

टीका

तपस्विनी-(दोनों की ओर देखकर।) बड़े अचंभेकी बात है॥

राजा-तुमको क्या अचरज हुआ।

तपस्विनी-यह अचंभा है कि इस बालक का तुम्हारा कुछ सम्बन्ध नहीं तौभी तुम्हारी इसकी एक उन्हार बहुत मिलती है दूसरी यह कि यह तुमको आगे से नहीं जानता था तौभी तुम्हारी बात इसने तुरंत मानली।

राजा-(लड़के को गोद में उठाकर।) जो यह ऋषिपुत्र नहीं है तो। किसका वंश है।

तपस्विनी-यह पुरुवंशी है।

राजा-(आपही आप।) इसीसे मेरी इसकी उनहारि एक मिलती है। पुरुवंशियों में यह रीति तो निश्चय है।

दोहा-

पूर्व भवन में स्थितसुखी रक्षाभूमी हेत॥
पीछे वनमें वे तपैं तरुनीचेहि निकेत॥ २०॥

(प्रकट।) न फिर इस बालक के मनुष्य केसे चरित्र हैं॥

तपस्विनी-जैसा भद्रमुख कहतेहौ तैसेही यह एक अप्सराकी लड़की से इसतपोवन में पैदाहै।

दुष्यन्त-(आपहीआप।) हैं यह तो बड़े आनन्दकी बात सुनाई। (प्रकट।) इसकी माताका पाणिग्रहण किस राजर्षिने कियाहै।

तपस्विनी-जिस राजाने अपनी विवाहिता स्त्रीको विना अपराध छोड़ाहै उसका नाम मैं न लूंगी।

मूलम्

राजा-(स्वगतम् ।) इयंखलुकथामामेवलक्ष्यीकरोति । यदितावदस्यशिशोर्मातरंनामतःपृच्छामि । अथवानार्यःपरदारव्यवहारः ।

(प्रविश्यमृण्मयूरहस्ता ।)

तापसी-सर्वदमनशकुन्तलावण्यंप्रेक्षस्व ।

बालः-(सदृष्टिक्षेपम् ।) कुत्रवामममाता ।

उभे-नामसादृश्येनवञ्चितोमातृवत्सलः ।

द्वितीया-वत्स,अस्यमृत्तिकामयूरस्यरम्यत्वंपश्येति भणितोऽसि ।

राजा-(आत्मगतम् ।) किंवाशकुन्तलेत्यस्यमातुराख्यासन्तिपुनर्नामधेयसादृश्यानि । अपिनाममृगतृष्णिकेवनाममात्रप्रस्तावोमेविषादायकल्पते ।

बालः-मातःरोचतेमएषभद्रमयूरः ।

(इतिक्रीडनकमादत्ते ।)

प्रथमा-(विलोक्य । सोद्वेगम् ।) अहोरक्षाकरण्डकमस्यमणिबन्धे न दृश्यते ।

राजा-अलमलमावेगेन । नन्विदमस्य सिंहशावविमर्दात्परिभ्रष्टम् ।

(इत्यादातुमिच्छति)

उभे-मास्वल्विदमवलम्ब्य । कथंगृहीतमनेन ।

(इतिविस्मयादुरोनिहितहस्तेपरस्परमवलोकयतः ।)

राजा-किमर्थंप्रतिषिद्धाःस्मः ।

टीका

राजा-(आपहीआप।) यह कथातो मुझीपर लगती है। भला अब इस बालकके माका नाम पूछूं। परन्तु सत्पुरुषों की रीति नहीं है कि पराई स्त्रीका वृत्तान्त पूंछै ॥

(खिलौनालाकर।)

तपस्विनी-हे सर्वदमन! देख यह कैसा शकुन्त लावरायहै।

बालक-(बड़ेचावसे देखकर।) कहां है शकुन्तला मेरीमाता।

दोनों-एक से नाम पे ठगा गया माताका प्यारा।

दू० तपस्विनी-पुत्र हमने मिट्टीके मोरकी सुन्दरता दिखाई थी।

राजा-(आपहीआप।) क्या इसकी मा का नाम शकुन्तलाहै या इस नामकी कोई दूसरी स्त्री है। यह वृत्तान्त मुझे ऐसा व्याकुल करताहै जैसे मृगतृष्णा प्यासे हरिणको निराशकरती है।

बालक-माता! यह मोर मुझे अच्छालगताहै।

(खिलौना लेलिया।)

प०तपस्विनी-(घबराकर।) आहा बालक की बांहसे रक्षाबन्धन कहांगया।

राजा-घबराओ मत जब यह नाहर से खेलरहाथा तब इसके हाथ से गंडा गिरगया।

(उठाना चाहा।)

दोनों- हैं हैं इस गंडेको छूनामत। हाय इसनेतो उठायहीलिया।

(आश्चर्यसे दोनों छातीपर हाथधरके देखनेलगीं।)

राजा-तुमने क्योंरोंकाथा।

मूलम्

प्रथमा—शृणोतुमहाराजः। एषापराजितानामौषधिरस्य जातकर्मसमये भगवतामारीचेनदत्ता। एतांकिल मातापितरावात्मानंचवर्जयित्वापरोभूमिपतितांनगृह्णाति।

राजा—अथगृह्णाति।

प्रथमा—ततस्तंसर्पोभूत्वादशति।

राजा—भवतीभ्यांकदाचिदस्याः प्रत्यक्षीकृताविक्रिया।

उभे—अनेकशः।

राजा—(सहर्षं। आत्मगतम्।) कथमिवसंपूर्णमपि मेमनोरथंनाभिनन्दामि।

(इति बालं परिष्वजते।)

द्वितीया—सुव्रते एहि। इमंवृत्तान्तंनियमव्यापृतायै शकुन्तलायैनिवेदयावः।

(इति निष्क्रान्ते।)

बालः—मुञ्चमाम्। यावन्मातुःसकाशंगमिष्यामि।

राजा—पुत्रक,मयासहैवमातरमभिनन्दिष्यसि।

बालः—ममखलुतातोदुष्यन्तः। नत्वम्।

राजा—(सस्मितम्।) एषविवादएवप्रत्याययति।

(ततःप्रविशत्येकवेणीधराशकुन्तला।)

शकुन्तला—विकारकालेपि प्रकृतिस्थांसर्वदमनस्यौषधिं श्रुत्वानमआशासीदात्मनोभागधेयेषु। अथवायथा सानुमत्याख्यातंतथासंभाव्यतएतत्।

टीका

पहिली—सुनो महाराज! जिससमय इस बालकका जातकर्म हुआ था तब महात्मा मरीचिके पुत्र कश्यपने यह गंडादियाथा। इस में यह गुण है कि कदाचित् पृथ्वीपर गिरपड़े तो इस बालक का माबाप छोड़ दूसरा कोई न उठासके।

राजा—और जो कोई उठालेतो क्याहो?।

पहिली—तौ यह तुरन्त उसको सांप बनकर डँसै

राजा—तुमने ऐसा कभी होते देखाहै।

दोनों—अनेकबार।

राजा—(प्रसन्नहोकर। आपहीआप।) तौ अब मेरा मनोरथ पूराहुआ पर तौभी प्रसन्न नहीं होताहूं। (लड़केसे मिला।)

दूसरी—आओ सुव्रता ये सुखके समाचार चलके शकुन्तला को सुनावें। वह बहुत दिनसे वियोग के कठिन नेमकररही है।

(दोनों बाहर गईं।)

बालक—छोड़ो छोड़ो मैं अपनी माता के पास जाऊंगा॥

राजा—हे पुत्र! तू मेरेसंग चलकर अपनी माताको सुखदीजो॥

बालक—मेरा पिता तो दुष्यन्त है तुम नहीं।

राजा—(हँसकर।) तेरा ये बिवादही मुझे प्रतीति कराताहै।

(वियोगके वस्त्र पहिरे और जटेहुये बालोंकी बेणी पीठपरडाले शकुन्तला आई।)

शकुन्तला—मैं सुनतो चुकी हूँ कि बालक के गंडेकी दिव्यसामर्थ्य प्रकट हुई परन्तु अपने भाग्यका कुछ भरोसा नहीं। अथवा कहीं मिश्रकेशीका कहना सच्चा न हो गयाहो।

मूलम्

राजा—(शकुन्तलांविलोक्य।)

अयेसेयमत्रभवतीशकुन्तलायैषा।

वसनेपरिधूसरेवसाना नियमक्षाममुखीधृतैकवेणिः ॥

अतिनिष्करुणस्यशुद्धशीला ममदीर्घं विरहव्रतंबिभर्ति ॥ २१ ॥

शकुन्तला—(पश्चात्तापविवर्णंराजानंदृष्ट्वा।) नखल्वार्यपुत्रइव। ततःकएषइदानीकृतरक्षामङ्गलंदारकंमेगात्रसंसर्गेणदूषयति ॥

बालः—(मातरमुपेत्य।) मातःएषकोऽपिपुरुषोमां पुत्रइत्यालिङ्गति।

राजा—प्रियेक्रौर्यमपिमेत्वयिप्रयुक्तमनुकूलपरिणामंसंवृत्तम्। यदहमिदानींत्वया प्रत्यभिज्ञातमात्मानंपश्यामि।

शकुन्तला—(आत्मगतम्) हृदय! आश्वसिहि आश्वसिहि। परित्यक्तमत्सरेणानुकम्पितास्मिदेवेन। आर्यपुत्रःखल्वेषः।

राजा—प्रिये,

स्मृतिभिन्नमोहतमसो दिष्ट्याप्रमुखेस्थितासिमेसुमुखि ॥ उपरागान्तेशशिनः समुपगतारोहिणीयोगम् २२॥

शकुन्तला—जयतुजयत्वार्यपुत्रः।

(इत्यर्धोक्तेबाष्पकण्ठीविरमति।)

राजा—सुन्दरि!

टीका।

राजा-(शकुन्तला को देखकर।) क्या यह वही योगिनी के वेष में शकुन्तला है जो यह।

दोहा-

पहिरे वसन मलीन यह जटा धरे अरु एक।
निर्दय मेरा विरह व्रत धारण करती नेक॥

चौपाई-

नियम करत है मेराजाते। पीला सूका मुख है ताते॥ २१॥

शकुन्तला-(पश्चात्तापसे दुर्बल राजाको देखकर।) यह क्या मेराही प्राणपति है। तो कौन यह गंडाबांधे मेरे पुत्रको अंग-संगसे दूषण लगारहाहै।

बालक-(माता के पास जाकर।) माता मुझे यह पुत्रकहकर लिपटताहै।

राजा-हे प्यारी मैंने तेरेसाथ निठुराई तो की परन्तु परिणाम अच्छाहुवा कि तैंने मुझे पहिंचान लिया जो हुआ सो हुआ पर अब उस बात को भूलजा।

शकुन्तला-(आपही आप।) अरे मन! तू धीरज धर। अबमुझे भरोसाहुआ कि मेरेभाग्यने ईर्षा छोड़ी। क्या ये आर्यपुत्रही है।

राजा-हे प्यारी!

दोहा-

भूला था जो मैं तुझे सो तू आई आज॥
ग्रहणभये जिमि रोहिणी शशिकाहोवे साज॥ २२॥

शकुन्तला-जयहो आर्यपुत्रकी (इतना कहकर गद्गद होकर आंसू गिरनेलगे।)

राजा-हे सुन्दरी-

मूलम्

बाष्पेणप्रतिषिद्धेपि जयशब्देजितम्मया ।
यत्तेदृष्टमसंस्कारपाटलोष्ठपुटंमुखम् ॥ २३ ॥

बालः—मातः,कएषः ।

शकुन्तला—वत्स,ते भागधेयानिपृच्छ ।

राजा—(शकुन्तलायाःपादयोःप्रणिपत्य ।)

सुतनुहृदयात्प्रत्यादेशव्यलीकमपैतुते
किमपिमनसःसंमोहोमेतदाबलवानभूत् ॥
प्रबलतमसामेवंप्रायाःशुभेषुप्रवृत्तयः
स्रजमपिशिरस्यन्धःक्षिप्तांधुनोत्यहिशङ्कया ॥ २४ ॥

शकुन्तला—उत्तिष्ठत्वार्यपुत्रः। नूनंमेसुचरितप्रतिबन्धकं पुराकृतंतेषुदिवसेषु परिणामसुखमासीद्येन सानुक्रोशोऽप्यार्यपुत्रोमयिविरसःसंवृत्तः ।

(राजोत्तिष्ठति ।)

शकुन्तला—अथकथमार्यपुत्रेणस्मृतोदुःखभाग्ययंजनः।

राजा—उद्धृतविषादशल्यः कथयिष्यामि ।

मोहान्मयासुतनुपूर्वमुपेक्षितस्ते
योबाष्पबिन्दुरधरंपरिबाधमानः ॥
तंतावदाकुटिलपक्ष्मविलग्नमद्य
बाष्पंप्रमृज्यविगतानुशयोभवेयम् ॥ २५ ॥

(इतियथोक्तमनुतिष्ठति ।)

शकुन्तला—(नाममुद्रांदृष्ट्वा ।) आर्यपुत्र,इदन्तेंऽगुलीयकम् ॥

टीका

गद्‌गद से भि रुका शब्दा जय ऐसे कहा भया।
जीता मैंने जुईीखा है लाल होठ मुखाभला ॥२३॥
बालक–माता यह पुरुष कौन है।
शकुन्तला–बेटातेरे भाग्य से पूछ।
राजा–(शकुन्तला के पैरों में गिरकर।)

चौपाई–

प्यारी तेरा हृदय अँदेशा। मिटै सभी येही आदेशा॥
क्या जानों मेरे मनमें था। छोड़ी तुझको यह तन में था॥
सुख होवे जब ऐसे होवहिं। अंधकारहो सुखहि दुरावहिं॥
अंध कंठ धरदे जिमि माला। सर्प जान फेंके सो हाला॥ २४॥

शकुन्तला–उठोप्राणपति उठो मेरे सुखमें बहुतदिन विघ्नरहा। परंतु तुम्हारा अब तक हित मुझमें बनाहै। यह बड़ा सुखका मूल है।

(राजा उठा।)

शकुन्तला–मुझ दुखियाकी सुधिकैसे आप को आई सो कहो।
राजा–जब विरहव्यथाका कांटा मेरे कलेजे से निकल जायगा तब सब वृत्तान्त कहूंगा!

छोड़ी तुझे सुतनुमोह भये सुँ मैंने।
जो होठ को दुखकरे वह आँशुपोंछों॥
कैसालगा कि पलकों परिबूंद आँशू।
सो आजपोंछ अपराध समैं छूटूंगा॥ २५॥

(आंशू पोछनेको हाथ बढ़ाया।)

शकुन्तला–(अँगूठी देखकर।) आर्यपुत्र यही तुम्हारी अँगूठीहै।

मूलम्

राजा—अस्मादंगुलीयोपलम्भात्खलुस्मृतिरुपलब्धा।

शकुन्तला—विषमंकृतमनेनयत्तदार्यपुत्रस्य प्रत्ययकाले दुर्लभमासीत्।

राजा—तेनह्यृतुसमवायचिह्नं प्रतिपद्यतांलताकुसुमम्।

शकुन्तला—नास्यविश्वसिमि। आर्यपुत्रएवैतद्धारयतु।

(ततःप्रविशतिमातलिः।)

मातलिः—दिष्ट्या धर्मपत्नीसमागमेन पुत्रमुखदर्शनेन चायुष्मान्वर्धते।

राजा—अभत्सम्पादितस्वादुफलोमेमनोरथः। मातले, नखलुविदितोऽयमाखण्डलेनवृत्तान्तःस्यात्।

मातलिः—(सस्मितम्।) किमीश्वराणांपरोक्षम्। एत्वायुष्मान्। भगवान् मारीचस्तेदर्शनंवितरति।

राजा—शकुन्तले अवलम्ब्यताम्पुत्रः। त्वांपुरस्कृत्यभगवन्तंद्रष्टुमिच्छामि।

शकुन्तला—जिह्रेम्यार्यपुत्रेणसहगुरुसमीपंगन्तुम्।

राजा—अप्याचरितव्यमभ्युदयकालेषु। एह्येहि।

(सर्वेपरिक्रामन्ति।)

(ततःप्रविशत्यदित्यासार्धमासनस्थोमारीचः।)

मारीचः—(राजानमवलोक्य।) दाक्षायणि,

टीका

राजा—इसीके मिलते तेरी मुझे सुधआई।

शकुन्तला—जब इसने बड़ा धोकाकिया कि आर्यपुत्रके विश्वास कालपै न मिली।

राजा—हे प्यारी! अब तू इसेपहन जैसे ऋतुके चिह्नके लिये लता फूल धारण करती है।

शकुन्तला—मुझे इसका विश्वास नहीं है। आपही पहिनो। (मातलिआया।)

मातलि—महाराज धन्यहै यह दिन कि आपने फिर अपनी धर्म्मपत्नी पाई और पुत्रका मुख देखा।

राजा—मीठेफलसा मेरा मनोरथ प्राप्तहुआ। परन्तु तुम यह कहो कि यह वृत्तान्त इन्द्र जानता है या नहीं।

मातलि—(हँसकर।) देवता क्या नहीं जानते हैं। अब आओ महात्मा कश्यप आपको दर्शन देंगे।

राजा—प्यारी चलो और सर्वदमनकी मां अंगुलीथामें चलो महात्माके दर्शन करआवें।

शकुन्तला—आपकेसंग बड़ोंके सन्मुखजानेमें मुझे लज्जाआतीहै।

राजा—ऐसे शुभसमय में एक संग चलना बहुत उत्तम है। चलो आओ।

(सब आगेको बढ़े।)

(सिंहासनपै बैठे कश्यप और अदिति आये।)

कश्यप—(राजाकी ओर देखकर।) हे अदिति!

मूलम्

पुत्रस्यतेरणशिरस्ययमग्रयायी
दुष्यन्तइत्यभिहितोभुवनस्यभर्ता ।
चापेनयस्यविनिवर्त्तितकर्मजातं
तत्कोटिमत्कुलिशमाभरणंमघोनः ॥ २६ ॥

अदितिः—सम्भावनीयानुभावास्याकृतिः ।

मातलिः—आयुष्मन्,एतौपुत्रपिशुनेनचक्षुषा दिवौकसां पितरावायुष्मन्तमवलोकयतः । तावुपसर्प ।

राजा—मातले,एतौ ।

प्राहुर्द्वादशधास्थितस्यमुनयोयत्तेजसःकारणम्
भर्तारंभुवनत्रयस्यसुषुवे यद्यज्ञभागेश्वरम् ॥
यस्मिन्नात्मभवःपरोपिपुरुषश्चक्रेभवायास्पदं
द्वन्द्वंदक्षमरीचिसंभवमिदन्तत्स्रष्टुरेकान्तरम् २७ ॥

मातलिः—अथकिम् ।

राजा-(उपगम्य ।) उभाभ्यामपिवासवानुयोज्योदुष्यन्तःप्रणमति ।

मारीचः—वत्स,चिरंजीव । पृथिवींपालय ।

अदितिः—वत्स, अप्रतिरथोभव ।

शकुन्तला—दारकसहिता वांपादवन्दनंकरोमि ।

मारीचः—वत्से ।

आखण्डलसमोभर्ता जयन्तप्रतिमःसुतः ।
आशीरन्यानतेयोग्यापौलोमीसदृशीभव ॥ २८ ॥

टीका

आगे चलै जु रण में यह इन्द्रकेतो दुष्यन्त नाम कहते यह भूमिभर्ता॥ वैरी विनाशत यही निज बाणसेही ऊंत्रा तु वज्र यह सोहतहै तिसीका॥ २६॥

अदिति–इसके लक्षण बड़े राजाओं केसे दिखाई देते हैं।

मातलि–हे राजा! ये देवताओंके माता पिता आपकीओर प्यार की दृष्टिसे देखरहे हैं जैसे पिता पुत्रकीओर देखतेहों आप निकट चलो।

राजा–मातलि ये दोनों।

एहैं द्वादश सूर्य के 'मुनिकहैं' कर्ता पिता तेजका उत्पत्ती इस से त्रिलोकपतिकी जो यज्ञभागों पति॥ निज आत्मा कर जन्म है भिजिसका सो विष्णु पैदाभये जोड़े दक्षमरीचि से यह भये तिनका पिताहै विधि॥ २७॥

मातलि–हां येही हैं।

राजा–(समीपजाके।) हे महात्माओ! राजा दुष्यन्त जो अभी वासव की आज्ञा पूरी करके आयेहैं प्रणाम करते हैं।

कश्यप–पुत्र चिरंजीव। अखंड राज्यरहै।

अदिति– तुम रनमें अजित रहो।

शकुन्तला–महाराज मैंभी बालकसहित प्रणाम करतीहूं।

कश्यप–पुत्रि,

इन्द्र सा तव भर्ताहो जयन्त असतेसुता॥ और आशीष क्या देऊँ शची सदृश होय तू॥ २८॥

मूलम्

अदितिः–जाते,भर्तुरभिमताभव। अत्रइयंदीर्घायुर्वत्स उभयकुलनन्दनोभवतु। उपविशत।

(सर्वेप्रजापतिमभितउपविशन्ति।)

मारीचः–(एकैकंनिर्दिशन्।)

दिष्ट्याशकुन्तलासाध्वी सदपत्यमिदम्भवान्।
श्रद्धावित्तंविधिश्चेति त्रितयंतत्समागतम्॥ २९ ॥

राजा–भगवन्। प्रागभिप्रेतसिद्धिः। पश्चाद्दर्शनम्। अतोऽपूर्वः खलुवोऽनुग्रहः। कुतः।

उदेतिपूर्वंकुसुमन्ततःफलम्
घनोदयःप्राक्तदनन्तरम्पयः।
निमित्तनैमित्तकयोरयंक्रम
स्तवप्रसादस्यपुरस्तुसम्पदः॥ ३० ॥

मातलिः–एवंविधातारःप्रसीदन्ति।

राजा–भगवन्,इमामाज्ञाकरीं वोगान्धर्वेण विवाहविधिनोपयम्य कस्यचित्कालस्य बन्धुभिरानीतांस्मृतिशैथिल्यात् प्रत्यादिशन्नपराद्धोऽस्मि। तत्रभवतो युष्मत्सगोत्रस्य कण्वस्य। पश्चादंगुलीयकदर्शनादूढपूर्वां तद्दुहितरमवगतोऽहम्। तच्चित्रमिवमेप्रतिभाति।

टीका

अदिति–हे पुत्री ! तू सदा सौभाग्यवतीहो । यह बालक दीर्घायु होकर तुमदोनों को सुखदे और दोनों कुलका दीपक हो। आओ विराजो।

(सबकश्यप के चारोंओर बैठगये।)

कश्यप–(सबकी ओर देखकर ।)

पतिव्रता शकुन्तला ये अच्छी पुत्रभि आपभी श्रद्धाद्रव्य
विधी तीनों मांनुं एकत्र होगये ॥ २९ ॥

राजा–हे महर्षि ! आपका बड़ा अनुग्रह अपूर्व है कि दर्शन पीछे हुये मनोरथ पहलेही होगयाहै ।

चौपाई–

पूर्व पुष्प पुनि फल वे देवैं । पूर्व मेघ पुनि बरसहि भेवैं ॥
निमित्त नैमित्तिक का क्रमहो । पर विपरीत इसीसे तुमहो ॥
पहिले संपति होंय घनेरी । पुनि प्रसन्नताहो तुमकेरी ३० ॥

मातलि–बड़ों की ऐसीही कृपा होती है ।

राजा–भगवन्, आपकी दासी शकुन्तला का विवाह मेरेसाथ गान्धर्वरीति से हुआ। फिर कुछकाल बीते अपने मायकेके लोगों के साथ यह मेरे पास आई। उससमय मुझे ऐसी सुधि भूल गई कि इसे पहिचान न सका । और अपनी पत्नीका त्याग करके आपके कुलकरावका अपराधीहुआ । फिर जब इसअंगूठी को देखा तब मुझे प्राणप्यारीकी सुधआई और जाना कि आपके सगोत्री कणवकी पुत्रीसे मेरा विवाहहुआ । सो मुझे बड़ा अचंभा दिखाई देताहै ।

मूलम्

यथागजोनेतिसमक्षरूपे
तस्मिन्नपक्रामतिसंशयःस्यात् ॥
पदानिदृष्ट्वातुभवेत्प्रतीति
स्तथाविधोमेमनसोविकारः ॥ ३१ ॥

मारीचः—वत्स अलमात्मापराधशङ्कया । संमोहोपित्वय्यनुपपन्नः । श्रूयताम् ।

राजा—अवहितोस्मि ।

मारीचः—यदैवाप्सरस्तीर्थावतरणात्प्रत्यक्षवैक्लव्यांशकुन्तलामादायमेनकादाक्षायणीमुपगता तदैवध्याना दवगतोस्मि दुर्वाससःशापादियंतपस्विनीसहधर्मचारिणी त्वयाप्रत्यादिष्टानान्यथेति । सचायमंगुलीयकदर्शनावसानः ।

राजा—(सोच्छ्वासम् ।) एषवचनीयान्मुक्तोऽस्मि ।

शकुन्तला—(स्वगतम्) दिष्ट्याकारणप्रत्यादेशीनार्यपुत्रः । नखलुशप्तमात्मानंस्मरामि । अथवा प्राप्तोमयासहिशापोविरहशून्यहृदययानविदितः । अतःसखीभ्यांसंदिष्टास्मिभर्तुरङ्गुलीयकंदर्शयितव्यमिति ।

मारीचः—वत्से, चरितार्थासि । सहधर्मचारिणंप्रतिनत्वया मन्युः कार्य्यः ।

पश्य—

टीका

किसीकआगे जिमिहस्ति आवे तभी न जानैं फिर शोचनाहै ॥
तभीतु जानैं पद चिह्नदेखै तथा हुआमे मनका विकारा ॥ ३१ ॥

कश्यप–जो अपराध विना जानेहुआ उसका शोच अपने मनसे दूरकरो । और मैं कहताहूं सो सुनो ।

राजा–मैं एकाग्रचित्तहूं ।

कश्यप–जब अप्सरा तीर्थ में तुम्हारे त्याग से शकुन्तला व्याकुल हुई तबमेनका उसे लेकर अदिति के पास आई मैंने उसीसमय अपनी योगशक्तिसे जानलिया था कि तुमने अपनी धर्मपत्नी को दुर्वासा के शापवश होकर छोड़ा और इसशापकी अवधि मुंदरी के दर्शनहीतकहै ।

राजा–(सांसलेकर ।) तौमैं इसअपराध से बचा ।

शकुन्तला–(आपहीआप ।) धन्यहैं मेरेभाग्य कि स्वामीने मुझे जानबूझकर नहीं त्यागाथा शापसे ऐसाहुआ और अब बड़ी शुभ घड़ी है कि राजाने फिर मुझे पहिंचानलिया जिससमय यह शापहुआ मैं अपने आपेमें न हूंगी । मेरीसखियोंने सुना होगा परन्तु स्नेहके मारे मुझसे न कहा तौभी चलते समय इतना कहदिया कि जो कहीं तेरापति तुझेभूलजाय तो यह अंगूठी दिखा दीजो ।

कश्यप–हे पुत्री ! अब तू कृतार्थहुई । अपने पतिपर क्रोध न करना॥

देख–

मूलम्

शापादसि प्रतिहतास्मृतिरोधरूक्षेभर्तर्यपेततमसि प्रभुतातवैव । छायानमूर्च्छतिमलोपहतप्रसादेशुद्धेतुदर्पणतलेसुलभावकाशा ॥ ३२ ॥

राजा—यथाह भगवन् ।

मारीचः—वत्स,कच्चिदभिनन्दितस्त्वयाविधिवदस्माभिरनुष्ठितजातकर्मापुत्रएषशाकुन्तलेयः ।

राजा—भगवन्,अत्रखलुमेवंशप्रतिष्ठा ।

मारीचः—तथाभाविनमेनंचक्रवर्तिनमवगच्छतुभवान् । पश्य—

रथेनानुद्घातस्तिमितगतिनातीर्णजलधिः
पुरासप्तद्वीपांजयतिवसुधामप्रतिरथः ॥
इहायंसत्त्वानांप्रसभदमनात्सर्वदमनः
पुनर्यास्यत्याख्यांभरतइतिलोकस्यभरणात् ॥ ३३ ॥

राजा—भगवताकृतसंस्कारे सर्वमस्मिन्वयमाशास्महे ।

अदितिः—भगवन्, अनयादुहितृमनोरथसम्पत्त्या कण्वोऽपि तावच्छ्रुतविस्तारः क्रियताम् । दुहितृवत्सलामेनकेहैवोपचरन्तीतिष्ठति ।

शकुन्तला—(आत्मगतम् ।) मनोरथः खलु मेभणितो भगवत्या ।

मारीचः—तपःप्रभावात्प्रत्यक्षं सर्वमेवतत्रभवतः ।

राजा—अतःखलु ममनातिक्रुद्धोमुनिः ।

टीका

शापाभये यह तुझे तब भूल छोड़ा वो मोह नाशहुय से अब जानताहै। तेरा बड़प्पन बना जिमिदीखताना। अंधेहि दर्पण मिटे पुनि दीखताहै॥ ३२॥

राजा—जैसा आप कहते हैं। सत्य है।

कश्यप—बेटा कहो तुमने अपने इस पुत्रका भी कि जिसके जातकर्म मैंने आप वेदविधिसे किये हैं कुछ लाड़प्यार किया कि नहीं।

राजा—महात्मा यहतो मेरेवंशकी प्रतिष्ठाहै।

कश्यप—यह भी जानलो कि न केवल कुलकी प्रतिष्ठाही अपितु चक्रवर्ती राजा होगा यह।

देखो। छंद—

यह वीरसुत तुम्हरा भला फिर चक्रवर्ती होइहै।
राज्यमण्डलकर अखण्डपर्य्यन्त सागर जीतिहै॥
सिंह आदिक दंडता तिमि सर्वदमना नाम है।
प्रजाके पोषण किये पर भरत नाम जु होइहै॥ ३३॥

राजा—आपके दीक्षित बालक में सब आशा रखताहूं।

अदिति—अब शकुन्तला ने फिर अच्छे दिन देखे इसलिये कण्व जीको भी यह वृत्तान्त सुनाना चाहिये और इसकी माता मेनका यहीं है वहतो सब जानती है।

शकुन्तला—(आपही आप।) इस भगवती ने तो मेरेही मनकी कही।

कश्यप—अपने तपके बलसे कण्वजी सब वृत्तान्त जानतेहोंगे।

राजा—इसीसे मुनिने मुझपर क्रोध नहीं किया।

मूलम्

मारीचः—तथाप्यसौ प्रियमस्माभिः प्रष्टव्यः । कःको ऽत्रभोः ।

(प्रविश्य ।)

शिष्यः—भगवन्, अयमस्मि ।

मारीचः—गालव इदानीमेवविहायसागत्वा ममवचनात्तत्रभवते कण्वायप्रियमावेद्य यथापुत्रवती शकुन्तलातच्छापनिवृत्तौ स्मृतिमतादुष्यन्तेन प्रतिगृहीतेति ।

शिष्यः—यदाज्ञापयतिभगवान् ।

(इतिनिष्क्रान्तः ।)

मारीचः—वत्स,त्वमपि स्वापत्यदारसहितःसख्युराखण्डलस्यरथमारुह्यतेराजधानींप्रतिष्ठस्व ।

राजाः—यदाज्ञापयतिभगवान् ।

मारीचः—वत्स,किन्तेभूयःप्रियमुपकरोमि ।

राजा—अतःपरमपि प्रियमस्ति । यदिभगवान्प्रियङ्कर्तुमिच्छति तर्हीदमस्तु भरतवाक्यम् ।

प्रवर्ततांप्रकृतिहितायपार्थिवः
सरस्वतीश्रुतमहतांमहीयसाम् ।
ममापिचक्षपयतुनीललोहितः
पुनर्भवंपरिगतशक्तिरात्मभूः ॥ ३४ ॥

(इतिनिष्क्रान्ताःसर्वे ।)

सप्तमोऽङ्कः ॥ ७ ॥

टीका

कश्यप–परन्तु यह प्रिय समाचार हैं हमको अवश्य पहुँचाने चाहियें कोई है यहां । (एकचेला आया ।)

चेला–महात्मा मैं आयाहूं ।

कश्यप–हे गालव ! तुम अभी आकाशमार्ग होकर कणवके पास जाओ और मेरीओर से यह शुभसमाचार कहदो कि दुर्वासा का शाप मिटने से आज दुष्यन्त ने पुत्रवती शकुन्तला को पहिंचानकर अंगीकार कर लिया ।

चेला–जो आज्ञा–(गया ।)

कश्यय–अब पुत्र तुम अपने स्त्रीबालकसमेत इन्द्रके रथपर चढ़कर आनन्द से अपनी राजधानी को सिधारो ।

राजा–जो आज्ञा ।

कश्यप–हे पुत्र ! अब और क्या तुमको आशीर्वाद दें ।

राजा–इससेअधिक और क्या आशीर्वादहै । यदि आप प्रसन्नही भये तो यह भरतका वाक्यहो ।

कवित्व–

राजप्रजाहित राज्यकरै अरु यह भी तिनके हित होय सदाही । वेद पढ़े सब पूजन में लगहोयँ सरस्वतिके जु सदाही ॥ शिवजी मुझको अरुमुक्त करै अवधूत बने रहते जुसदाही । ब्रह्माभि मुझे वह शक्ति करो निज आत्मज्ञान रहै जुसदाही ॥ ३४ ॥

(सबगये ।)

समाप्तम् ॥

समाप्तमिदमभिज्ञानशाकुन्तलंनामनाटकम् ।
मंगलंपाठकानांच लेखकानांचमंगलम् ।
मंगलंश्रीहरिःसाक्षात् प्राचीनानांचमंगलम् ॥

क्षमा—

यात्रिभातिकवितामभेदृशी सत्कवेःकवितयानुबिम्बिता ॥ शर्वरीवसकलाभयायुता । सायथा कुमुदबांधवस्य च ॥ १ ॥ रामप्रसादस्यसुतः प्रसादेनास्य प्रपूर्तिंकुरुते शिवस्य ॥ लोकस्यशैवश्चाशिवायलक्ष्मीनारायणाख्यःसुविदाञ्चभृत्यः ॥ २ ॥ मुनिशराङ्कशशाङ्कमितेऽब्दके शुचिसिते ह्यसितेचहरौतिथौ ॥ शुभपुरेत्वथकानपुरःपुरे सुसमपूरि हितेनहितेनच ॥ ३ ॥

इति ॥

जगद्धितैषी लक्ष्मीदत्तःक्षन्तव्यः । शुभम्भवतुतराम् ।

भाषा क्षमा—

यहमेरी मूढ़की कविता कविकालिदासकी कवितासे प्रतिबिम्बकी भई ऐसी जानपड़तीहै जैसे चन्द्रमाकी पूर्णकिरण रात्रिपर पड़ती हों ।। सो वह श्रीरामप्रसादजी का पुत्र लक्ष्मीनारायण नामक विद्वानोंका अनुचर शैव शिवजीके प्रसाद और लोकके कल्याणार्थ तिसने कानपुर नगर में आषाढ़कृष्णा ११ शनिवार संवत् १९५७ में समाप्त किया सो विद्वानोंसे निजप्रमादमें क्षमाचाहताहै ॥ १।३ ॥

यह लोकका हितैषी लक्ष्मीनारायण सदाशुभदायकहो ॥

आनन्दरघुनन्दननाटक, क़ीमत ≡)॥

श्रीमहाराज बांधवेश विश्वनाथसिंह स्वर्गवासीकृत जिसमें संस्कृत प्राकृत, देवनागरी गद्य पद्य इत्यादि अनेकभांतिकी भाषाओं में विश्वामित्रकी यज्ञरक्षासे रामचन्द्रजीके सिंहासनपर विराजमानहोने पर्यन्तका वृत्तान्त उत्तम ललित नाटक भाषामें सात अंकोंमें वर्णित है ॥

हनूनाटक, क़ीमत –)

बख्शीराम जमादार कृत–अनेकप्रकारकी छन्दोंमें वर्णित है॥

विद्याविलासी व सुखबन्धनीनाटक, क़ी० ≡)॥

अदालत हाईकोर्ट के वकील कश्मीरी श्रीकृष्णजी रचित-इस के प्रयोजन ये हैं कि भारतवर्षमें बहुधा बालकपनमें विवाह कियाजाता है और उसके बुरे परिणाम नहीं विचारेजाते विवाहादि में फ़ज़ूलखर्ची और उसके बुरे परिणाम ॥

प्रबोधचन्द्रोदयनाटक, क़ीमत ≡)

आत्मारामकृत–छन्दों में महाविवेक और महामोहकी लड़ाई रचित है ॥

इन्द्रसभातसवीरों सहित अमानत व मदारीलाल, क़ीमत ≡)

इसमें इन्द्रसभामें जो गाया जाता है और जिस प्रकार किया जाता है सब अच्छी तरह से वर्णित है ॥

मयङ्कमंजरीनाटक, क़ीमत ।)

भाषा किशोरीलालकृत इसमें मयङ्कमञ्जरी का नाटक अनेक प्रकार के राग, छन्द और ललित वार्तिक भाषा में वर्णित है यह नाटक बहुतही उत्तम बना है ॥

प्रबोधद्युमण्युदय अध्यात्मकनाटक, क़ी०-)

भाषा पण्डित उमादयालजीकृत-जिसके प्रथम अङ्क में जीव (मनुष्य) अविद्यानिशा में मोहवशहो कैसे मेरा मेरी कहता और मानता है और कैसे अहङ्कारकी रसरी में बँधा है दूसरे में कामकी प्रबलता तीसरे में विवेककी प्रशंसा चौथे में मोहका वर्णन और संसार के दम्भआदि वर्णन किये हैं-पांचवें में मोह का विभव और परिवारका वर्णन है-छठेमें महामोहको राजा विवेकने किसप्रकार दमनकर पराजय किया और सातवें अङ्कमें विवेकविजय पुरुषका अविद्यानिशासे जागना-प्रबोधोदय और पुरुषप्रति उपनिषद् और सत्यके हितोपदेश हैं॥

प्रबोधचन्द्रोदयनाटक १ व २ भाग, क़ी०-)॥

पण्डित भूदेवदुबेकृत-जिसमें अनेक प्रकारके मनोहरछन्द हैं यह नाटक ज्ञानीपुरुषों के देखने के योग्य है॥

हिन्दीशकुन्तलानाटक भाषा, क़ीमत =)॥

बाबू हरसहायलाल बर्म्माकृत छापाटैप॥

तथा काग़ज़गुन्दा सफ़ेद क़ीमत ।) पु०